परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

कुन्दकुन्द शब्दकोश

संकलनकार
डॉक्टर उदयचन्द्र जैन

प्रकाशक
श्री दिगम्बर जैन साहित्य संस्कृति संरक्षण समिति
दिल्ली

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त-शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि-परिवार

कुन्द कुन्द - शब्दकोष

प्रेरक :-

आचार्य श्री 108 विद्या सागर जी महाराज

संकलन :-

डा. उदयचन्द जैन

प्रोफेसर : सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर
(राजस्थान)

प्रकाशक :-

श्री दिग. जैन साहित्य संस्कृति संरक्षण समिति

डी-302, विवेक विहार, दिल्ली-95

आचार्य कुन्द-कुन्द का जैन बाङ्गमय में मूर्धन्य स्थान है। वे आगम साहित्य के प्रणेता के रूप में परवर्ती आचार्यों द्वारा "मंगलं कुन्द-कुन्दाद्यों" के द्वारा सदैव पुण्य स्मरणीय रहे हैं। बे अब से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व इस भारत वसुन्धरा के कोंण्ड-कोंण्ड नगर में अवतरित हुए थे। उनके सिद्धान्त ग्रंथ पंचास्तिकाय, समयसार, आदि जैन सिद्धान्त के मूल भूत तत्वों से भरपूर हैं। इनके स्वाध्याय, मनन एवं पठन-पाठन की प्रथा इस भौतिक युग में अत्यधिक उपयुक्त समझी जा रही है पर ये सभी ग्रंथ शौर सेनी प्राकृत में होने के कारण सर्व सामान्य जन इन्हें समझने में असमर्थ हैं। अतः "कुन्द-कुन्द द्वि-सहस्राब्दि" वर्ष के शुभ अवसर पर यह उपयुक्त समझा गया कि आचार्य कुन्द-कुन्द के ग्रंथों में स्थित शब्दों का सही और बैज्ञानिक सरलीकरण हो, इसलिए सुखाड़िया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री उदयचन्द्र जी द्वारा संकलित यह "कुन्द-कुन्द शब्द कोश" स्वाध्याय प्रेमियों की सेवा में सादर सस्नेह समर्पित है।

इस शुभ कार्य में हमें आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज की प्रेरणा एवं मंगल आशीर्वाद प्राप्त हुआ। अतः हम उनके प्रति हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

कुन्दकुन्द-शब्द कोश

प्रेरक

आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज

संकलन

डा. उदयचन्द जैन

प्रोफेसर : सुखाडिया विश्वविद्यालय

उदयपुर (राजस्थान)

श्री दिग. जैन साहित्य-संस्कृति संरक्षण समिति

डी. ३०२, विवेक विहार, दिल्ली - ९५

प्राप्तिस्थल
श्री शिखर चन्द जैन
श्री दिग. जैन साहित्य-संस्कृति संरक्षण समिति
डी. ३०२, विवेक विहार
दिल्ली - ९५

कुन्दकुन्द-शब्द कोश

डा. उदयचन्द जैन
प्रथम संस्करण - महावीर जयन्ती वी. नि. स. २५१७
मूल्य - पाँच रूपये मात्र (लागत मूल्य से ५ रूपये कम)
मुद्रक - प्रकाश आफसेट प्रिंटर्स, फोन : ३२७८३५८

प्रकाशकीय

परम पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के सानिध्य में ललितपुर की प्रथम वाचना के समय सभागत विद्वानों से हुए विचार विनिमय के निष्कर्ष रूप से जैन साहित्य एवं संस्कृति के संरक्षण/संवर्धन के उद्देश्य को प्रामुख्य कर श्री दिग. जैन साहित्य-संस्कृति संरक्षण समिति का गठन हुआ था।

गठन के समय ही प्रस्ताव आया कि वर्तमान में दिगम्बर जैन साहित्य के अग्रगण्य आचार्य कुन्दकुन्द के समय निर्धारण को लेकर साहित्य जगत् में मन-माने ताने बाने बुने जा रहे हैं तथा कई प्रकार का असद् प्रलाप भी मुखरित हो रहा है। अतः इस दिशा में ही सर्वप्रथम कार्य किया जाना नितान्त आवश्यक है। हमें अपने सद्प्रयासों से उसे पुनः स्थापित करना चाहिए।

इस समस्या पर गहराई से विचार करते हुए ही भारतवर्ष तथा विदेशों के जैन एवं जैनेतर जनमानस को आचार्य कुन्दकुन्द और उनके लोकोपकारी साहित्य से परिचय कराते हुए मन-माने वाग्जालों पर प्रश्न चिन्ह अंकित करने के लिए समिति ने "आचार्य कुन्दकुन्द द्विसहस्राब्दी महोत्सव" सम्पूर्ण देश के अनेक भागों में मनाने तथा मनाने की प्रेरणा देने का निर्णय किया तथा इसके आरम्भ करने की उद्घोषणा ११, १२ और १३ जुलाई ८७ को थूबोन जी में एक स्तरीय आयोजन के साथ की।

प्रसन्नता है कि जैन समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ताओं ने इसमें सराहनीय योगदान कर इसे सफल बनाया जिसके ही फलस्वरूप अब देश के आबालवृद्ध को जानकारी हो सकी कि आचार्य कुन्दकुन्द को इस भारत वसुन्धरा को पवित्र किये हुए दो हजार वर्ष हो गये हैं। इस सन्दर्भ को प्रमाणित रूप से विद्वज्जगत के समक्ष रखने के लिए समिति ने डा. ए.एन. उपाध्ये जी द्वारा लिखित प्रवचनसार की प्रस्तावना का हिन्दी रूपान्तरण कराकर प्रस्तुत किया। इस दौरान आचार्य कुन्दकुन्द से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थ एवं जानकारियां प्रकाशित हुई जो कि स्वागतेय हैं।

कुन्दकुन्द साहित्य के अध्येताओं व जिज्ञासुओं ने उनके शब्दकोश की महती आवश्यकता महसूस की, जो कार्य डा. उदयचन्द जी द्वारा अथक परिश्रम के साथ सम्पन्न किया गया उनका प्रयास श्लाघनीय है। किन्तु इसमें अभी काफी संशोधन संवर्द्धन के स्थान रिक्त हैं जो कि आचार्य कुन्दकुन्द साहित्य के मनीषियों एवं चिन्तकों के सहयोग के साथ ही यथासमय पूर्णता को प्राप्त कर सकेगें। मुझे जानकारी है कि अभी तक वर्तमान का कोई भी कोश प्रथम प्रयास में ही पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सका उसके परिमार्जन/परिवर्द्धन के लिए पर्याप्त समय और संस्करण अपेक्षित हुए हैं। इसी प्रकार इस प्रस्तुत कोश को भी प्रौढ़ता प्राप्त करने के लिए मनीषियों एवं अध्येताओं का सहयोग वांछनीय होगा। हम आशा करेंगे कि इस दिशा में आपका श्रम हमारे उत्साहवर्धन के योग्य होगा।

प्रस्तुत कोश के संकलन में आचार्य श्री विद्यासागर जी की प्रेरणा का पावन-योग मिला है, अतः समिति एवं संकलनकर्ता उनकी तपोपूत करांजलि में इस ग्रन्थ को समर्पित करते हुए उन परम निर्ग्रन्थ के प्रति विनम्र भक्ति-भाव व्यक्त करते हैं साथ ही इस कार्य के सहयोगी महानुभावों के प्रति सहृदय आभार ज्ञापित करते हैं।

इस शब्दकोश के प्रकाशन के लिए श्री सुमत प्रसाद जैन (सी–२०९) और श्रीमति सरोजनी जैन (धर्मपत्नी श्री मोती लाल जैन) (बी–२५७) विवेक विहार दिल्ली द्वारा पूरा कागज प्रदान करके हमें प्रोत्साहित किया है। अतः हम उनके हृदय से आभारी हैं।

आशा है विद्वत्समाज एवं जिज्ञासु समुदाय इस प्रयास का योग्य लाभ लेगा।

मैसूर
१४.३.८९

राकेश जैन
मंत्री

प्राथमिकी

आगम साहित्य की परम्परा में आचार्य कुन्दकुन्द विरचित सिद्धान्तग्रन्थों का महत्वपूर्ण स्थान है। जितनी श्रद्धा एवं भक्ति के साथ आचार्य कुन्दकुन्द का नाम प्रत्येक शुभ कार्य के प्रारम्भ में लिया जाता है उतना ही आगम साहित्य, सिद्धान्त ग्रन्थों में पंचास्तिकाय, समयसार, प्रवचनसार, नियमसार एवं अष्टपाहुड आदि को सर्वोपरि मानकर उनके पठन-पाठन एवं स्वाध्याय की परम्परा उच्च स्थान को प्राप्त करती जा रही है। अतः सिद्धान्त ग्रन्थों के साथ वर्षों की पूर्व परम्परा इसके साथ जुड़ी है। इसकी भाषा आर्य है तथा प्राचीन भी है। भाषाविदों ने जिसे शौरसेनी संज्ञा दी है। इस शौरसेनी प्राकृतों का अध्ययन करते समय जब विचार किया तो इससे सम्बन्धित सर्व प्रथम व्याकरण लिखने का निश्चय किया गया और शौरसेनी प्राकृत विद्वज्जगत के सामने आई।

शब्द कोश की शुरूआत इससे पूर्व हो चुकी थी, परन्तु कुछ कार्य शेष था इसलिए यह शीघ्र सामने नहीं आ सका। शौरसेनी शब्द कोश की विशाल रूपरेखा हमारे सामने थी। सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर के जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग के अध्यक्ष ने इसे सीमित दायरे में समेटने का प्रस्ताव रखा। इसी दृष्टि का विधिवत् रूप से आचार्य श्री विद्यासागर जी से जबलपुर में परामर्श लिया गया और इसे अन्तिम रूप दिया गया।

इस शब्दकोश में निम्न विधि अपनाई गई है :-

१. सर्वप्रथम मूलशब्द दिए गए तत्पश्चात् उन शब्दों का लिंग और संस्कृत को [ ] कोष्ठक में दिया गया।

२. कोष्ठक के बाद उस शब्द का अर्थ एवं सन्दर्भ ग्रन्थ की पंक्ति सहित दिया गया है।

३. सन्दर्भ ग्रन्थ एवं उसकी पंक्ति के अतिरिक्त उस शब्द का व्याकरणात्मक मूल्यांकन भी प्रस्तुत किया है।

४. यथा स्थान कुन्दकुन्द के ग्रन्थों के पारिभाषिक शब्द भी दिये गये हैं।

५. मूल शब्द के साथ जुड़ने वाले शब्द उसी शब्द के साथ देकर उसका अर्थ प्रस्तुत किया गया है।

६. जहां तक संभव हो सका वहां व्याकरण सम्बन्धी नियम भी दिये गए हैं।

प्रस्तुत कोश के निर्माण में 'पाइय-सद्द-महण्णव' तथा संस्कृत शब्द कोश आदि कोश ग्रन्थों, आचार्य कुन्दकुन्द के समस्त ग्रन्थ, उनके टीकाकार, हिन्दी अर्थ आदि के प्रस्तुत करने वालों से इसके शब्द चयन किये गये हैं। मूलरूप में शब्द चयन का आधार बिन्दु कुन्दकुन्द भारती रहा है। अतः मैं उन सभी महानुभावों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, जो इन ग्रन्थों से सम्बन्धित हैं।

इस ग्रन्थ के प्रेरक आचार्य श्री विद्यासागर जी के चरणों में शत-शत नमन है जिनकी महान् प्रेरणा का फल यह कोश ग्रन्थ है। भाई श्री डा. प्रेमसुमन जी जैन, उदयपुर का सक्रिय सहयोग एवं परामर्श ही उत्साहवर्धन में सदैव सहायक रहा है। अतः मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ।

हमारे पूज्य परम श्रद्धेय डॉ. दरबारीलाल जी कोठिया, बीना, ब्र. राकेश जैन, जबलपुर, पूज्य काका पं. सुखानन्द जैन बम्हौरी को विस्मृत नहीं किया जा सकता जिन्होंने सदैव उत्साहित किया। मेरी पत्नी श्रीमती माया जैन एवं मेरे बच्चे सदा सहयोगी रहे हैं।

कोश का प्रकाशन श्री दिग. जैन साहित्य संस्कृति संरक्षण समिति के द्वारा हो रहा है अतः उसका भी मैं अत्यन्त आभारी हूँ। जिन्होंने इसे सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया। सधन्यवाद

उदयचन्द जैन

अ.	अव्यय
अ.भू.	अनियमित भूतकाल
अक.	अकर्मक
आ.भ.	आचार्यभक्ति
आ.भ.अं.	आचार्यभक्तिअंचलिका
आ/वि प्र. ए.	आज्ञा/विध्यर्थक प्रथमपुरुष एकवचन
आ/वि प्र.ब.	आज्ञा/विध्यर्थक प्रथमपुरुष बहुवचन
आ/वि म.ए.	आज्ञा/विध्यर्थक मध्यमपुरुष एकवचन
आ/वि म.ब.	आज्ञा/विध्यर्थक मध्यमपुरुष बहुवचन
आ/वि उ.ए.	आज्ञा/विध्यर्थक उत्तमपुरुष एकवचन
आ/वि उ.ब.	आज्ञा/विध्यर्थक उत्तमपुरुष बहुवचन
क.प्र.	कर्मणि प्रयोग
क्रि वि.	क्रिया विशेषण
च.ए.	चतुर्थी एकवचन
च.ब.	चतुर्थी बहुवचन
च/ष.ए.	चतुर्थी/षष्ठी एकवचन
च/ष.ब.	चतुर्थी/षष्ठी बहुवचन
चा.पा.	चारित्रपाहुड
चा.भ.	चारित्रभक्ति
चै.भ.	चैत्यभक्ति
चै.भ.अं.	चैत्यभक्तिअंचलिका

तृ.ए.	तृतीया एकवचन
तृ.ब.	तृतीया बहुवचन
ती.भ.	तीर्थभक्ति
ती.भ.अं.	तीर्थभक्तिअंचलिका
त्रि.	त्रिलिंग
द.पा.	दर्शनपाहुड
द्वा.	द्वादशानुप्रेक्षा
द्वि.ए.	द्वितीया एकवचन
द्वि.ब.	द्वितीया बहुवचन
न.	नपुसंकलिंग
न.भ.	नन्दीश्वरभक्ति
नि.	नियमसार
नि.भ.	निर्वाणभक्ति
नि.भ.अं.	निर्वाणभक्तिअंचलिका
पं.ए.	पंचमी एकवचन
पं.ब.	पंचमी बहुवचन
पु.	पुलिंग
पु/न.	पुलिंग/नपुसकलिंग
पं.	पंचास्तिकाय
पं.ज.वृ.	पंचास्तिकाय जयसेनवृत्ति
प्र.ए.	प्रथमा एकवचन

प्र.ब.	प्रथमा बहुवचन
प्र.	प्रवचनसार
प्र.ज.वृ.	प्रवचसार जयसेनवृत्ति
प्र.ज्ञा.	प्रवचनसार ज्ञानाधिकार
प्र.चा.	प्रवचनसार चारित्राधिकार
प्रे.	प्रेरणार्थक
बो.पा.	बोधपाहुड
भवि.प्र.ए.	भविष्यत्काल प्रथमपुरुष एकवचन
भवि.प्र.ब.	भविष्यत्काल प्रथमपुरुष बहुवचन
भवि.म.ए.	भविष्यत्काल मध्यमपुरुष एकवचन
भवि.म.ब.	भविष्यत्काल मध्यमपुरुष बहुवचन
भवि.उ.ए.	भविष्यत्काल उत्तमपुरुष एकवचन
भवि.उ.ब.	भविष्यत्काल उत्तममपुरुष बहुवचन
भू.	भूतकाल
मो.पा.	मोक्षपाहुड
यो.भ.	योगिभक्ति
लि.पा.	लिंगपाहुड
व.प्र.ए.	वर्तमानकाल प्रथमपुरुष एकवचन
व.प्र.ब.	वर्तमानकाल प्रथमपुरुष बहुवचन
व.म.ए.	वर्तमानकाल मध्यमपुरुष एकवचन
व.म.ब.	वर्तमानकाल मध्यमपुरुष बहुवचन

व.उ.ए.	वर्तमानकाल उत्तमपुरुष एकवचन
व.उ.ब.	वर्तमानकाल उत्तमपुरुष बहुवचन
वि.	विशेषण
वि/आ.	विधि/आज्ञार्थक
वि.कृ	विध्यर्थ कृदन्त
शी.पा.	शीलपाहुड
श्रु.भ.	श्रुतभक्ति
ष.एं.	षष्ठी एकवचन
ष.ब.	षष्ठी बहुवचन
स.	समयसार
स.ब.	सप्तमी बहुवचन
स.ज.वृ.	समयसार जयसेनवृत्ति
स.भ.	समाधिभक्ति
सू.पा.	सूत्रपाहुड
सं.कृ	सम्बन्ध कृदन्त
स्त्री.	स्त्रीलिंग
हे.प्रा.व्या.	हेम प्राकृत व्याकरण
हे.कृ	हेत्वर्थ कृदन्त

अ [अ] 1. और, तथा। (भा. ५२) पढिओ अभव्वसेणो। 2. रहित। (स. १४,१११, प्रव. ज्ञे. ७१) अविसेसमसंजुत्तं। (स. १४) 3. नहीं, निषेध, प्रतिषेध। (निय. १४२, स. १६७, पंचा. १६३, भा. १०४) ण वसो अवसो। (निय. १४२) 4. अभाव। (भा. १०१, स. २३२) जो हवइ असंमूढो। (स. २३२)

अइ अ [अति] 1. बहुत। (निय.२१,२४) अइथूल-थूल- थूलं। (निय.२१) 2. अतिशय, उत्कर्ष। (मो.२४) अइसोहण जो एणं। (मो.२४) **-थूल** वि [स्थूल] अधिक मोटा। (निय.२२) **-सुहुम** वि [सूक्ष्म] अधिक सूक्ष्म। (निय.२४) अइसुहुमा इदि परूवेंति। **-सोहण** न [शोधन] अतिशय शुद्धि, विशिष्टशुद्धि। (मो.२४) अइसोहण जो एणं।

अइरेण अ [अचिरेण] शीघ्र, जल्दी। (द. ६,चा. ४०, भा. ७९) पावइ अचिरेण सुहं। (चा. ४३)

अइसय पुं [अतिशय] सर्वश्रेष्ठ, अति-उत्तम, आधिक्य, प्रमुखता, उत्कृष्टता, अत्यधिक, बहुत बड़ा। (प्रव. १३, द. २९, बो. ३१) अइसयमादसमुत्थं। (प्रव. १३) **-गुण** पुं न [गुण] सर्वश्रेष्ठ गुण, उत्कृष्टगुण, प्रमुख गुण। (बो.३१) चउतीस अइसयगुणा। (बो.३१) **-वंत** वि [वान्] उत्तमतायुक्त, श्रेष्ठतासहित। (बो. ३८) अइसयवंतं सुपरिमलामो यं। (बो.३८) अइसयं (द्वि. ए. प्रव. १३) अइसएहिं (तृ. ब. द. २९) (हे.भिसो हि हिं हिं-३/७)

अंग न [अङ्ग] आचाराङ्ग आदि आगम ग्रन्थ विशेष। (पंचा.१६०) **-पुव्वगद** वि [पूर्वगत] अङ्ग और पूर्वधारी। (पंचा.१६०) धम्मादीसद्दहणं, सम्मत्तं णाणमंगपुव्वगदं। (पंचा.१६०)

अंजलि पुं स्त्री [अञ्जली] हाथसंपुट, करबद्ध। (प्रव. चा. ६२) **-करण** वि [करण] हाथ जोड़ने वाला, विनययुक्त, विनम्र। (प्रव. चा. ६२) अंजलिकरणं पणमं। (प्रव. चा. ६२)

अंत वि [अन्त्य] अन्तिम, ऊपर, चरम। (पंचा. २८) उड्ढं लोगस्स अंतमधिगंता। (पंचा. २८)

अंत पुं [अन्त] 1. सबसे छोटा, अन्तिम भाग, अन्तिम हिस्सा। (पंचा.७७) अंतो तं वियाण परमाणु। (पंचा.७७) 2. चरम सीमा, अन्तिमबिन्दु, प्रान्तभाग। (पंचा. ९४) 3. हद। (पंचा. १, ९१) आयासं अंतवदिरित्तं । (पंचा.९१) **-अतीदगुण** पुं न [अतीतगुण] अनन्तगुण। (पंचा.१) अंतातीदगुणाणं। (पंचा.१) **-परिवुड्ढि** स्त्री [परिवृद्धि] अन्त की वृद्धि, सीमावृद्धि, प्रान्तभाग की वृद्धि। (पंचा. ९४) लोगस्स य अंतपरिवुड्ढी। (पंचा.९४)। **-वदिरित्त** वि [व्यतिरिक्त] अन्त से रहित, अनन्त। (पंचा.९१) आयासं अंतवदिरित्तं। (पंचा.९१)

अकत्ता वि [अकर्त्ता] अकर्ता, नहीं करने वाला। (स. ११२) तम्हा जीवोऽकत्ता।

अकर सक [अ-कृ] नहीं करना। (स. २४६) अकरंतो (व.कृ.) अकरंतो उवओगे।

अकारय वि [अ-कारक] अकारक, नहीं करने वाला, अकर्त्ता। (स. ३२०)

अकिण्ण वि [अकीर्ण] नहीं खुदा हुआ, व्याप्त। (द्वा.५६)

अकिंचण्ह वि [अकिञ्चन्य] आकिञ्चन्य, मुनिधर्म का एक भेद। (द्वा.७०) तव-चागमकिंचण्हं।

अक्कंत वि [आक्रान्त] छूटा हुआ, परास्त, अभिभूत, ग्रसित। (द्वा.३८) संसार दुहअक्कंतो।

अक्किरिया स्त्री [अक्रिया] अक्रिया, अव्यापार, अप्रयत्न। (भा.१३६)

अक्ख पुं न [अक्ष] इन्द्रिय, पाशा, आत्मा। (प्रव. २२,५६,५७, प्रव ज्ञे. १०६, निय.२३, मो. ५) **-अतीद** वि [अतीत] इन्द्रियरहित। (प्रव.२२) **-विसय** पुं [विषय] इन्द्रियविषय, इन्द्रियजन्य, इन्द्रियगोचर। (निय.२३) अक्खा (प्र. ब.) अक्खाणि (प्र.ब.) अक्खाणं (च ./ष. ब.) अक्खाणं ते अक्खा। (प्रव. ५६)

अक्खय वि [अक्षय] नाशरहित, जिसका कभी नाश न हो, अविनाशी। (प्रव. ज्ञे. १०३, निय. १७६, द. ३४, चा. ४)

अकज्ज वि [अकार्य] नहीं करने योग्य, व्यर्थ, उत्पन्न नहीं हुआ। (पंचा. ८४, भा. ५५,१११)

अकद वि [अकृत] नहीं किया गया, नहीं बनाया गया, अरचित। (पंचा. ६६) अकदा परेहिं दिट्ठा।

अकुव्व स [अकुर्व] नहीं करना, नहीं बनाना। (स. ९३, १०४) अकुव्वंतो (व.कृ.)

अखिल वि [अखिल] पूर्ण, परिपूर्ण, समस्त। (पंचा.९०) जं देदि विवरमखिलं।

अगणि पु. [अग्नि] अग्नि। (पंचा. ११०,१४६) झाणमओ जायए अगणी। (प्र. ब.)

अगरहा स्त्री [अगर्हा] अनिन्दा, अघृणा। (स.३०७) आचार्य कुन्दकुन्द ने **गरहा** को विषकुम्भ और **अगरहा** को अमृतकुम्भ के भेदों में गिनाया हैं। अणियत्तीयअणिंदागरहा सोही अमयकुंभो।

अगंध पुं [अगन्ध] गन्धरहित। (पंचा. १२७, स. ४९, निय. ४६, भा. ६४)

अगाढ वि [अगाढ] अगाढ, अनाश्रित। (द्वा.६१) चलमलिनमगाढं। (द्वा. ६१) **-त्त** वि [अगाढत्व] अगाढता, आश्रय से रहित होता हुआ, प्रचण्डता से रहित। (निय. ५२) चलमलिनमगाढत्तं।

अगारि वि [अगारिन्] गृहस्थ। (प्रव. चा.५०) अगारी धम्मो सो सावयाणं से।

अगुरु/अगुरुग वि [अगुरु] अतिलघु, छोटा। (पंचा. २४,३१,८४) **-लहुग** वि [लघुक] षड्गुणी-हानिवृद्धिरूप, अगुरुलघुगुण संयुक्त। अगुरुलहुगेहिं सया। (पंचा. ८४)

अग्घ सक [अर्घ] पूजना, आदर करना, सम्मान करना। (द.३३) अग्घेदि (व.प्र.ए.) अग्घेदि सुरासुरे लोए। (द. ३३)

अचक्खु पुं न [अचक्षुष्] नेत्र से अतिरिक्त इन्द्रिय और मन। (पंचा.४२, निय. १४) चक्खू अचक्खू ओही। (निय.१४) **-जुद**

वि [युत] नेत्र से रहित अवलम्बन। (पंचा.४२) अचक्खुजुदवि य ओहिणा सहियं

अचल वि [अचल] निश्चल, दृढ़, स्थायी। (प्रव. ज्ञे. १००, निय. १७७, बो. १२) णिच्चं अचलं अणालंबं। (निय. १७७)

अचरित्त न [अचरित्र] आचरणविहीन, संयमरहित, व्रतरहित। (स. १६३) अचरित्तो होदि णायव्वो। (स. १६३)

अचित्त वि [अचित्त] जीवरहित, अचेतन। (स. २२०, २२१, २३९, २४३, २० मो. १७) आदसहावादण्णं, सच्चित्ताचित्तमिस्सियं हवदि (मो. १७)

अचिरेण अ [अचिरेण] जल्दी, शीघ्र, थोड़ा। (स. १८९, प्रव. ८८) लहइ अचिरेण अप्पाणमेव। (स. १८९)

अचेदण वि [अचेतन] चैतन्यरहित, निर्जीव। (पंचा. १२४, स.६८, १११,३२८ प्रव. ज्ञे.३५) एदे अचेदणा खलु। (स. १११) **-त्त** वि [त्व] अचेतनता। (पंचा. १२४) तेसिं अचेदणत्तं।

अचेल न [अचेल] वस्त्ररहित, वस्त्रत्याग, मुनियों का एक गुण। (प्रव. चा.८) लोचावस्सकमचेलमण्हाणं। (प्रव. चा.८)

अचोक्ख वि [दे] मलिन, अशुद्ध, अपवित्र। (द्वा.४३) भरियमचोक्खं देहं। (द्वा.४३)

अचोरिय न [अचौर्य] अचौर्य, चोरीरहित, लूटरहित, शील का एक गुण, व्रत का एक भेद। (शी.१९) अचोरियं बंभचेरसंतोसे। (शी.१९)

अच्चंत वि [अत्यन्त] अत्याधिक, आजीवन, हमेशा, लगातार,

अन्तरहित, बहुल। (प्रव. १२, प्रव. चा.७१) अभिंधुदो भमइ अच्चंतं। (प्रव.१२)-**फलसमिद्ध** वि [फलसमृद्ध] अत्यन्त फल से युक्त, अतिशय फल की समृद्धि वाला। (प्रव.चा.७१) अच्चंतफलसमिद्धं। (प्रव.चा,७१)

अच्चेदण/अच्चेयण वि [अचेतन] चैतन्यरहित, निर्जीव, चेतनाहीन। (मो.९,५८)

अच्छ सक [आस्] रहना। (मो.४७)

अच्छेअ वि [अच्छेद्य] छेदन करने के अयोग्य, अखण्डित। (निय.१७६) अक्खयमविणासमच्छेयं। (निय.१७६)

अच्छेअ पुं [अच्छेद] रिक्त, अपूरित, विनाशरहित, अन्तरहित। (भा.२३) तो वि ण तिण्हच्छेओ।

अजधा अ [अयथा] जैसे को तैसा नही, अन्यथा, विपरीत। (प्रव.८४, प्रव.चा.७२) -**गहण** न [ग्रहण] जैसे को तैसा ग्रहण नहीं, अन्यथाग्रहण। (प्रव.८५) -**गहिदत्थ** वि [ग्रहीतार्थ] अन्य का अन्य विदित होना। (प्रव.चा.७१) -**चारविजुत्त** वि [आचारवियुक्त] मिथ्या आचरण से रहित। (प्रव.चा.७२) अजधाचारविजुत्तो। (प्रव.चा.७२)

अजर वि [अजर] मुक्तावस्था, मुक्तिपथ, मोक्षसुख, बुढ़ापारहित, जीर्णतारहित। (भा.१६१) सिवमजरामरलिंगमणोवमुत्तमं परमविमलमतुलं। (भा.१६१)

अजाद वि [अजात] अनुत्पन्न, उत्पत्तिरहित। (प्रव.३९,४१) जदि पच्चक्खमजादं। (प्रव.३९)

अजाण वि [अज्ञान] अनजान, ज्ञानरहित। (स.१५४) अजाणंता (व.कृ.स.१५४)

अजीव पुं [अजीव] अचेतन, जड़, निर्जीव। (चा.२९,पंचा.१०८) **-द** वि [ता] अजीवपन, जड़ता, निर्जीवता, अचेतनता। **-दव्व** पुं न [द्रव्य] अजीवद्रव्य। (चा.२९) सजीवदव्वे अजीवदव्वे य (चा.२९)

अजुद पुं न [अयुत] दशहजार की संख्या, अनादि, एक ही। (पंचा.५०) अजुदसिद्धो य। **-सिद्ध** पुं [सिद्ध] अनादिसिद्ध। (पंचा.५०) अजुदासिद्धित्ति णिद्दिट्ठा।

अज्ज अ [अद्य] आज। (मो.७७) अज्ज वि तिरयणसुद्धा।

अज्ज सक [अर्ज] कमाना, उपार्जन करना, पैदा करना। अज्जयदि (व.प्र.ए.द्वा.३०) अत्थं अज्जयदि पावबुद्धीए। (द्वा.३०)

अज्जीव पु [अजीव] अजीव, जड़पदार्थ, निर्जीव, चेतनाशून्य। (पंचा.१२३,१२५,स.८८) अभिगच्छु अज्जीवं। (पंचा.१२३)

अज्जव न [आर्जव] सरलता, निष्कपटता, ऋजुता, सरलपरिणाम, धर्म का एक लक्षण। (निय. ११५, चा. १२) अज्जवेण (तृ.ए. निय.११५) लक्खिज्जइ अज्जवेहिं भावेहिं। (चा.१२) अज्जवेहिं (तृ.ब.चा.१२) **-धम्म** पुं न [धर्म] आर्जव धर्म। (द्वा.७३)

अज्जिया स्त्री [आर्यिका] आर्यिका, साध्वी। (सू.२२) अज्जिय वि एकवत्था।

अज्झप्प न [अध्यात्म] आत्मसम्बन्धी, आत्मविषयक। (स.५२) **-ट्ठाण** न [स्थान] आत्मसम्बन्धी स्थान। (स.५२) णो

अज्झप्पट्ठाणा। (स.५२)

अज्झयण पुं न [अध्ययन] अभ्यास, अध्ययन, पढ़ना। (प्रव.चा.५६, निय.१२४,भा.८९) अज्झयणमोणपहुदी। (निय.१२४)

अज्झवस सक [अध्यव+सो] विचार करना, चिंतन करना, समझना। (मो.८) अज्झवसदि (व.प्र.ए.) अज्झवसदि मूढदिट्ठीओ। (मो.८)

अज्झवसाण न [अध्यवसान] चिंतन, विचार, आत्मपरिणाम, आत्म-स्वभाव। (पंचा.३४, स. ४८) अज्झवसाणादि अण्णभावाणं। (स.४८) **-णिमित्त** न [निमित्त] चिंतन के फलस्वरूप, चिंतन के कारण, विचार के निमित्त। (स.२६७) अज्झवसाणं (द्वि.ए.स.३९) अज्झवसाणाणि (द्वि.ब.स.१९०) अज्झवसाणेण (तृ.ए.स. २६५) अज्झवसाणेसु (स.ब.स.४०)

अज्झवसिद वि [अध्यवसित] अध्यवसाय, जिसका चिंतन किया गया। (स.२६०,२६२) सत्ते जं एवमज्झवसिदं ते। (स.२६१) अज्झवसिदेण (तृ.ए.स.२६२)

अज्झसिय वि [अध्युषित] डुबाया हुआ। (प्रव. ३०) दुद्धज्झसियं जहा सभासाए। (प्रव.३०)

अज्झा सक [अधि+इ] अध्ययन करना, पढ़ना। (स.३१७) अज्जाइदूण (सं.कृ.स.३१७) सुट्ठुवि अज्झाइदूण सत्थाणि।

अज्झावय पुं [अध्यापक] उपाध्याय। (प्रव.४) **-वग्ग** पुं [वर्ग] उपाध्याय वर्ग, सजातीयसमूह। (प्रव.४) अज्झावयवग्गाणं (च.ब.प्रव.४)

अट्ट वि [आर्त] पीड़ित, दुःखित, ध्यान का एक भेद। (निय. १२९,१८०, भा.७६, लिं.५) **-रुद्द** न [रौद्र] आर्तरौद्र। (निय.१८०, भा.७६) अट्टरुद्दाणि (निय.१८०)

अठिद वि [अस्थित] स्थिति का अभाव। (स.१५२)

अट्ठ त्रि [अष्ट] आठ, संख्या विशेष। (पंचा.२४,स.४५, भा.११९) ववगददोगंधअट्ठफासो य। (पंचा.२४) **-कम्मबंध** पुं न [कर्मबन्ध] आठ प्रकार का कर्मबन्ध। (निय.७२) णट्ठट्ठकम्मबंधा। (निय.७२) **-गुण** पुं न [गुण] आठ गुण। (निय.४७) अट्ठगुणालंकिया जेण। **-महागुण-समण्णिय** वि [महागुणसमन्वित] आठ महागुणों से युक्त। (निय.७२) - **वियप्प** न [विकल्प] आठ विकल्प। (पंचा.१४९, स.१८२)-**विह** पुं स्त्री [विध] आठ प्रकार। (स.४५) अट्ठविहं पि य कम्मं।

अट्ठ पुं न [अर्थ] वस्तु, पदार्थ। (पंचा.१०८, प्रव.८५,८६)

अट्ठारह त्रि [अष्टादश] अठारह। (भा.१५१,मो.९०) **-दोसवज्जिअ** वि [दोषवर्जित] अठारह दोषों से रहित। (मो.९०) अट्ठारहदोसवज्जिए देवे। (मो.९०)

अट्ठि पुं [अस्थि] हड्डी। (भा.४२)

अण अ [अन] निषेधवाचक अव्यय। (प्रव.ज्ञे.१०६)

अणंत पुं [अनन्त] अनन्त, अन्तरहित, संख्या विशेष। (पंचा.२८,२९, निय.३५) **-जम्मंतर** पुं [जन्मान्तर] अनन्त जन्मों में। (भा.१८) **-पदेस** पुं [प्रदेश] अनन्तप्रदेश। **(निय.३५)-भवसायर** पुं [भव-सागर]अनन्तभवसागर। **-संसार**

पुं [संसार] अनन्तसंसार। (भा.७) **-संसारिअ** वि [सांसारिक] अनन्तसंसारी। (भा.५०) अणंतसंसारिओ जाओ। (भा.५०)

अणक्ख पुं [अनक्ष] इन्द्रिय ज्ञान से रहित। (प्रव.ज्ञे. १०६) ज्ञादि अणक्खो परं सोक्खं (प्रव.ज्ञे. १०६)

अणगार वि [अनगार] भिक्षुक, मुनि, साधु, गृहत्यागी। (स. ४११, प्रव.ज्ञे.६५,चा.५१,७५) पेच्छदि सिद्धे तधेव अणगारे। (प्रव.ज्ञे.६५)

अणज्ज वि [अनार्य] म्लेच्छ, दुष्ट। (स.८)**-भासा** स्त्री [भाषा] अनार्यभाषा। अणज्जभासं (द्वि.ए.स.८)

अणण्ण वि [अनन्य] अभिन्न, अपृथग्भूत। (पंचा.१२, स.११३, प्रव.ज्ञे.२१) **-त्त** वि [त्व] अनन्यत्व, एकरूपता, प्रदेशभेद रहित, एकभाव। (पंचा.४५,४६) **-परिणाम** वि [परिणाम] अभिन्नपरिणाम। (स.१६४, मो.५०) तस्सेव अणण्णपरिणामा। (स.१६४) **-भाव** पुं [भाव] अभिन्नभाव । **-भूद** वि [भूत] अभिन्नभूत, एकमेक, प्रदेशों से जुदा नहीं। (पंचा.१२, प्रव.ज्ञे.२१) **-मअ** वि [मय] अन्य वस्तुरूप नहीं। (स.१८९) **मइय** वि [मय]अभिन्नरूप। (पंचा.४) **-मण** पुं न [मनस्] पर द्रव्य से चित्त हटाना। (पंचा. १५८) **-विह** वि [विध] अन्य रूप, अन्य प्रकार। (मो.५१)

अणण्णमण्ण स [अनन्यमन्य] अन्यत्-अनन्यत्, और-और नहीं, दूसरा नही (पंचा. ९१)

अणण्णमय वि [अनन्यमय] अभेदरूप। (पंचा.१६२)

अणण्णय वि [अनन्यक] अन्यपने से रहित। (स.१४)

अणप्पय पुं [अनात्मक] आत्मा से परे, आत्म-अनभिज्ञ। (स.२०२)

अणप्पवस पुं न [अनात्मवश] पराधीन, परवश। (भा.११२,२१)

अणय पुं [अनय] अनीति, अन्याय। (भा.२६)

अणल पुं [अनल] अग्नि। **-काइय** वि [कायिक] अग्निकायिक, अग्निकाय सम्बन्धी। (पंचा. १११)

अणवकास पुं न [अनवकाश] अवकाश न देना, स्थान देने में असमर्थ। (पंचा.८०)

अणवर/अणवरय वि [अनवरत] सतत्, निरन्तर। (द.२९, निय.११३,मो.३)

अणाइ वि [अनादि] आदि रहित। (पंचा.५३, स.८९, भा.७,१४, ११२) **-काल** पुं [काल] अनादिकाल। (भा.७,१४,१०२,११२) **-णिहण** पुं न [निधन] अनादि अनंत। अणाइणिहणं (प्र.ए.भा.११४)

अणाणि वि [अज्ञानिन्] अज्ञानी। (स.१२६,१३१)

अणागय वि [अनागत] आगामी। (स.२१५, निय.९५) अणागयसुहमसुहवारणं किच्चा।

अणागार पुं [अनागार] अनागार, मुनि, साधु। (प्रव.ज्ञे. १०२)

अणादिणिधण पुं न [अनादिनिधन] अनादि-अनन्त। (पंचा.१३०) अणादिणिधणो सणिधणो वा।

अणायार वि [अनाचार] आचरणरहित, गृहीत नियमों का

जानबूझकर उल्लंघन करना। (निय.८५) मोत्तूण अणायारं आयारे जो दु कुणदि थिरभावं।

अणावण्ण वि [अनापन्न] अवस्थित, अव्याप्त। (पंचा. ३१, ३२) केचित्तु अणावण्णा।

अणारिहद वि [अनार्हत] अर्हत् मत को न मानने वाले, अर्हत् मत से परे। (स.३४७,३४८) मिच्छादिट्ठी अणारिहदो।

अणालंब वि [अनालम्ब] पर के आलम्बन से रहित, पर-पदार्थों के आलंबन से रहित। (प्रव. १००,निय.१७७) णिच्चं अचलं अणालंबं। (निय. १७७)

अणासव पुं [अनास्रव] आस्रव से रहित,आस्रव का अभाव, कर्मास्रव से रहित। (प्रव.चा.४५) अणासवा सासवा सेसा।(प्रव. चा.४५)

अणाहार पुं [अनाहार] उपवास, अनाहार, आहार ग्रहण करते हुए भी निराहार। (प्रव. चा. २७) अण्णं भिक्खमणेसणमध ते समणा अणाहारा।

अणिगूह वि [अनिगूह्य] अपनी शक्ति को न छिपाता हुआ। (प्रव.चा.२८) अणिगूहं अप्पणो सत्तिं।

अणिच्छ वि [अनिच्छ] इच्छा रहित (स.२१०,२१३) अपरिग्गहो अणिच्छो।

अणिधण पुं न [अनिधन] अन्तरहित। (पंचा.४२)

अणिट्ठ वि [अनिष्ट] अप्रीतिकर, अनिष्ट, अहितकर। (प्रव.६१) णट्ठमणिट्ठं सव्वं। (प्रव.६१)

अणिद्दिट्ठ वि [अनिर्दिष्ट] आकार रहित, जिसका आकार कहने में नही आता, निराकार। (पंचा.१२७, स.४९, निय.४६, भा.६४) जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं। (पंचा.१२७) **-संठाण** वि [संस्थान] आकार रहित संस्थान। (पंचा. १२७, स. ४९, प्रव.चा.८०)

अणियद वि [अनियत] अप्रतिबद्ध, पर-द्रव्य में रत, अनियमितता। (पंचा.१५५) **-गुणपज्जय** पुं [गुणपर्यय] पर द्रव्य की गुण एवं पर्याय में रत। अणियदगुणपज्जओध परसमओ। (पंचा.१५५)

अणियत्ति वि [अनिवृत्ति] निवृत्त नहीं होने वाला। (स.३०७)

अणिल पुं [अनिल] हवा, वायु, पवन,। (पंचा.१११,११२) पंचास्तिकाय **में अणिल** शब्द का प्रयोग वायुकाय से सम्बन्धित है।

अणिंदा **स्त्री** [अनिन्दा] निन्दा रहित। (स.३०७) अणियत्तीय अणिंदा। (स.३०७)

अणिंदिअ/अणिंदिय वि [अनिन्द्रिय] इन्द्रिय रहित, अतीन्द्रिय। (पंचा.२७, नियं.१७७, मो.६) पंचास्तिकाय की गाथा १५४ में **अणिंदिय** का अर्थ निर्मल भी स्पष्ट होता है। अत्थित्तमणिंदियं भणियं। (पंचा.१५४)

अणु वि [अणु] थोड़ा, स्वल्प, छोटा, परमाणु। (निय.२०) अणुखंध वियप्पेण। (निय.२०)

अणुकंप/अणुकंपय वि [अनुकम्प] दया, भक्तिभाव, भक्ति। प्रवचनसार चारित्राधिकार की गाथा ५१ में भक्तिभाव के रूप में अर्थ की स्पष्टता अधिक प्रतीत होती है। अणुकंपयोवयारं।

(प्रव.चा.५१)

अणुकंपा स्त्री [अनुकम्पा] दया, करुणा, कृपा। (पंचा.१३७) जो भूखे, प्यासे, दुःखित एवं दुःखित मन वाले प्राणियों को दयापूर्वक अपनाता है, उसके अनुकम्पा होती है। तिसिदं बुभुक्खिदं वा दुहिदं दट्ठूण जो हु दुहिदमणो। पडिवज्जदि तं किवया तस्सेसा होदि अणुकंपा।। **-संसिद** वि [संश्रित]अनुकंपा के आश्रित। (पंचा.१३५) अनुकंपासंसिदो य परिणामो (पंचा.१३५) अणुकंपाए(तृ.ए.चा.११) स्त्रीलिंग शब्दों के तृतीया एकवचन से लेकर सप्तमी एक वचन तक में **अ, इ** एवं **ए** प्रत्यय लगता है। कुन्दकुन्द के ग्रन्थों में प्रायः **ए** प्रत्यय की बहुलता है।

अणुगमण न [अनुगमन] अनुसरण, अनुवर्तन, पीछे-पीछे चलना, गुरुओं के अनुकूल चलना। (पंचा. १३६, प्रव.चा. ४७) अणुगमणं पि गुरूणं। (पंचा.१३६)

अणुगहिद वि [अनुगृहीत] आभारी, दयायुक्त। (प्रव.चा.३) पडिच्छमं चेदि अणुगहिदो। (प्रव.चा.३)

अणुचर सक [अनु+चर] 1. सेवा करना, अनुसरण करना। अणुचरदि (व.प्र.ए.स.१७) अणुचरंति (व.प्र.ब.प्रव.ज्ञे.५९)अणुचरिदव्वो (वि.कृ.स.१८) 2. पुं [अनुचर] सेवक, नौकर, अनुगमन करने वाला।

अणुत्तर वि [अनुत्तर] सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्कृष्ट। (द.३६, शी.२८) णिव्वाणमणुत्तरं पत्ता। (द.३६)

अणुदिणु न [अनुदिनु. अपभ्रंश] प्रतिदिन हमेशा, नित्य। (भा.

९२,१२०) भावहि अणुदिणुं। (भा.१२०)

अणुपरिणाम वि [अणुपरिणाम] अणुमात्र परिणमन करने वाला। (प्रव.ज्ञे.७३) अणुपरिणामा समा व विसमा वा।

अणुपेहण न [अनुप्रेक्षण] भावना,चिंतन,विचार। (द्वा.१) अणुपेहणं वोच्छे।

अणुबद्ध वि [अनुबद्ध] बंधा हुआ, सम्बद्ध। (पंचा. २०) भावा जीवेण सुट्ठु अणुबद्धा। (पंचा.२०)

अणुभव सक [अनु+भू] अनुभव करना, जानना, समझना, कर्मफल का भोगना। अणुभवंति (व.प्र.ब.प्रव.२०)

अणुभाग पुं [अणुभाग]कर्मफल, प्रभाव, माहात्म्य, शक्ति, सामर्थ, बन्ध का एक भेद। (पंचा ७३,स.२९०, निय.९८) अणुभागप्पदेसबंधेहिं। (पंचा.७३) **-ट्ठाण** पुं न [स्थान] अनुभाग स्थिति। (निय.४०) णो अणुभागट्ठाणा। (निय.४०)

अणुभाय पुं [अनुभाग] कर्मफल, दृढ़संकल्प। (स.५२) णेव य अणुभायठाणाणि।

अणुभावग वि [अनुभावक] अनुभव कराने वाला, द्योतक, अनुभावगत, बोधक। (स.४०)

अणुमण वि [अनुमत] अनुमोदित, सम्मत, अनुमति। (चा.२२) चारित्रपाहुड में **अणुमण** शब्द का प्रयोग अनुमति-त्यागव्रत के लिए आया है। यह व्रत ग्यारह प्रतिमाओं में दशवीं प्रतिमाधारी देशविरतश्रावक का एक भेद है। अणुमणमुद्दिट्ठदेसविरदो य। (चा.२२)

अणुमत्त न [अणुमात्र] किंचित् भी। (पंचा. १६७) जस्स हिदयेणुमत्तं। (पंचा.१६७)

अणुमत्ता वि [अनुमत]अनुमति देने वाला। (प्रव.ज्ञे. ९८, नियं.७७) अणुमत्ता णेव कत्तीणं।

अणुमहंत वि [अणुमहान्त] छोटे-बड़े, मूर्तिक-अमूर्तिक, बहुप्रदेशी। (पंचा.४) अणण्णमइया अणुमहंता।

अणुमण्ण एक [अनु+मन्] अनुमति देना, अनुमोदन करना, प्रसन्न होना, प्रशंसा करना। अणुमण्णदि (प्रव.६५) किरियासु णाणुमण्णदि।

अणुमोदण न [अनुमोदन] अनुमति, सम्मति। (नियं.६३) कदकारिदाणुमोदणरहिदं।

अणुमोदणा स्त्री [अनुमोदना]अनुमति, सम्मति। (द.१३) पावं अणुमोदणाणं।

अणुरत्त वि [अनुरक्त] अनुरागप्राप्त। (मो. ५२)

अणुवेक्खा स्त्री [अनुप्रेक्षा] भावना, चिंतन, विचार। अणुवेक्खाओ (प्र.ब.द्वा.८७) अणुवेक्खं (द्वि.ए.द्वा.८७)भावेज्जं अणुवेक्खं। (द्वा.८७)

अणुहव सक [अनु+भू] अनुभव करना। (पंचा.१६३, प्रव.ज्ञे.४३, ७१,७२) सो तेण सोक्खमणुहवदि। (पंचा.१६३)

अणेग/अणेय वि [अनेक] बहुत, एक से अधिक। (स. ७६,७७,प्रव.ज्ञे.३२, नियं.११७, भा.१४,१६) पुग्गलकम्मं अणेयविहं। (स.७६)-**कम्म** पुं [कर्म] अनेक कर्म। - **विध/विह**

वि [विध] अनेक प्रकार। (स.८४,१७९,प्रव.ज्ञे.३२) **-जम्मंतर** न [जन्मान्तर] अनेक जन्मों तक। (भा.३२) **-वित्थरविसेस** वि [विस्तारविशेष] अनेक प्रकार के विस्तार वाला। (स.३८३) - **वार** वि [वार] अनेक बार। अणेयवाराओ (द्वि.ब.भा.१४,१६)

अणेसणा स्त्री [अनेषणा] एषणा का अभाव, एषणारहित। (प्रव. चा.३७) अणेसणं (द्वि.ए.)

अणोवम वि [अनुपम] उपमा रहित, अनुपम। (प्रव.१३, निय.१७७, चा.४३, भा.१६१, मो.३,१८) विसयातीदं अणोवममणंतं। (प्रव.१३)

अण्ण स [अन्य] दूसरा, अन्य, भिन्न, पर, और भी, पृथक्, अलग। (पंचा.४४,स.४८, प्रव.ज्ञे.२०, भा.४६) ण जहं अण्णो कहं होदि। (प्रव.ज्ञे.२०)-**णिरावेक्ख** वि [निरापेक्ष] अन्य की अपेक्षा से रहित। (निय. २८) अण्णणिरावेक्खो जो **-दविय** पुं न [द्रव्य] अन्य द्रव्य। (पंचा.८८, स.३७२, प्रव.ज्ञे.६२) अण्णदविएण अण्णदवियस्स। (स.३७२) **-भाव** पुं [भाव] अन्यभाव, परभाव। अण्णभावाणं (ष.ब.स.४८) **-वस** वि [वश] परवश, पराधीन। (निय.१४१,१४४,१४५) सुहभावे सो हवेइ अण्णवसो। (निय.१४४) **-त्त** दि [त्व] भेदरूप, पृथक्ता, भेदभाव। (पंचा.४६,९६, स.१७१, प्रव. ज्ञे.१४) अण्णत्तं णाणगुणो। (स.१७१) **-मण्ण** वि [अन्य] परस्पर, आपस में, (पंचा.७,४८) अत्थंतरिदो दु अण्णमण्णस्स। (पंचा४८) **-हा** अ [था] अन्य रूप, अन्य प्रकार, विपरीतरीति, विभावरूप।

(प्रव.ज्ञे.६१) संठाणादीहिं अण्णहा जादा। (प्रव.ज्ञे.६१)

अण्णाण न [अज्ञान] अज्ञान, मिथ्याज्ञान, झूठा ज्ञान। (पंचा१६५, स.८८,८९, निय.१२, भा.६५, चा.१५, मो.२८) समयसार गाथा१२९ में **अण्णाणो** का पुंलिंग प्रथमा एक वचन में भी प्रयोग हुआ है। उवओगो अण्णाणं। (स.८८) अण्णाणमयो जीवो (स.९२) -**तमोच्छण्ण** वि [तमोच्छन्न]अज्ञानरूपी अन्धकार से आच्छादित। (स. १८५) अण्णाणतमोच्छण्णो । (स.१८५) -**द** वि [ता] अज्ञानता । (स.२२१,२२३) तइया अण्णाणदं गच्छे। (स.२२३) -**णाणमूढ** वि [ज्ञानमूढ] अज्ञानरूपी ज्ञान मे मुग्ध, मिथ्याज्ञान और सम्यग्ज्ञान के विषय में मूढ। (चा.१०) **अण्णाणणाणमूढा। (चा. १०)** -**णासण** वि [नाशन] अज्ञानतां को नाश करने वाला। (भा.६५) -**मय** वि [मय] अज्ञान युक्त। (स.१३१) -**मलोच्छण्ण** वि [मलोच्छन्न] अज्ञानरूपी मल से आच्छादित, मिथ्या ज्ञान से ढँका हुआ। (स.१५८) अण्णाणमलोच्छण्णं। (स.१५८) -**मोहदोस** पुं [मोह-दोष] अज्ञान एवं मोहरूपी दोष। अण्णाणमोहदोसेहिं (तृ.ब.चा.१७) -**मोहमग्ग** पु [मोहमार्ग] अज्ञानरूपी मोहमार्ग। अण्णाणमोहमग्गे। (स.ए.चा.१३) अण्णाणादो (प.ए.) अण्णाणस्स (ष.ए.स.१३२)

अण्णोण्ण वि [अन्योन्य] परस्पर, एक दूसरे। (पंचा. ६५, स.३१३ प्रव.२८) अण्णोण्णपच्चया हवे। (स.३१३)-**अवगाह** पुं [अवगाह] परस्पर में अवगाहन, एक दूसरे को अवकाश, परस्परप्रदेशानुप्रवेश। (प्रव.ज्ञे.८५) अण्णोण्णं अवगाहो (प्रव.ज्ञे.

८५) **-णिमित्त** न [निमित्त] एक दूसरे के निमित्त। अण्णोण्णणिमित्तेण (तृ.ए.स.८१) **-आगाहमवगाढ** वि [अवगाह-अवगाढ] परस्पर एक क्षेत्र अवगाहन करके अतिशय गाढ़े भरे हुये। (पंचा.६५) गच्छंति कम्मभावं अण्णोण्णागाहमवगाढा। (पंचा.६५)

अण्णाणि वि [अज्ञानिन्] अज्ञानयुक्त, ज्ञानरहित, मिथ्याज्ञानी। (स.१८५,२२९, स.ज.वृ.१५३, प्रव.चा.३८,४३, भा.१३७) भावपाहुड में **अण्णाणी** शब्द का प्रयोग षष्ठी एकवचन के रूप में हुआ है। सत्तट्ठी अण्णाणी। (हे.स्यम्-जस-शसां लुक् ४/३४४, षष्ठ्या ४/३४५) अण्णाणी प्रथमा एक वचन का रूप है, प्रथमा में प्रत्यय लोप होकर ह्रस्व स्वर का दीर्घ हो जाता है। अण्णाणिओ प्र.ब.स.१२७) अण्णाणमओ भावो, अण्णाणिओ कुणदि तेण कम्माणि।

अतच्च न [अतत्व] अतत्त्व, सारहीन, असत्य। (स.१३२) जीवाणं अतच्चउवलद्धी। (स.१३२)

अतिहि पुं [अतिथि] पाहुन, अतिथि, पात्र, अभ्यागत, शिक्षाव्रत का एक भेद। (चा.२६) तइयं च अतिहिपुज्जं। (चा.२६) **-पुज्जा** स्त्री [पूजा] अतिथि पूजा। तइयं च अतिहिपुज्जं।(चा.२६)

अतीद वि [अतीत] परे। (भा.६३, प्रव.२९)

अतुल वि [अतुल] अनुपम। (भा.९२) भावहि अणुदिणु अतुलं। (भा.९२)

अत्त पुं [आत्मन्] 1. आत्मा, जीव चेतन। (पंचा. ६५ स. ८३)

जाण अत्ता दु अत्ताणं। (स.८३) -**भाव** पुं [भाव] आत्मभाव। (स.८६) जम्हा दु अत्तभावं। (स.८६) 2.पुं [आत्मन्] अपना। (स.९४,९५) -**मज्झ** वि [मध्य] अपने आप ही मध्य । (निय.२६) 3. वि [आर्त] आर्तध्यान, पीड़ित, दुःखित। (पंचा.१४०) इंदियवसदा य अत्तरुद्दाणि। 4. वि [आप्त] वीतरागी, सर्वज्ञ, केवलज्ञानी। (निय.५) अत्तागमतच्चाणं, सद्दहणादो हवेइ सम्मत्तं।

अत्ताण पुं [आत्मन्] अपने आप। (स.८३) अत्ताणं (द्वि.ए.स.८३) जाण अत्ता दु अत्ताणं।

अत्तावण वि [आतापन] आतापनयोग। (भा.४४) अत्तावणेण आदो, बाहुबली कित्तियं कालं।

अत्थ अक [स्था] बैठना, ठहरना। अत्थेइ (व.प्र.ए.बो.५५)

अत्थ पुं न [अर्थ] 1. पदार्थ, वस्तु, अर्थ, जिन्स। (स.४१५,प्रव.५९) अत्थतच्चदो णाऊं। (स.४१५) 2. पुं न. [अर्थ] धन, द्रव्य। -**अत्थी** वि [अर्थिन्] धनार्थी, धन चाहने वाला। (स.१७) अत्थत्थीओ पयत्तेण। (स.१७) -**अंतगद** वि [अन्तगत] पदार्थ के अन्त को प्राप्त। णाणं अत्थंतगदं। (प्रव.६१) -**अंतरभूद** वि [अन्तर्भूत] पदार्थ में गर्भित। (प्रव.ज्ञे.५२,६२) तमत्थं अत्थंतरभूदमत्थीदो। (प्रव.ज्ञे.५२) -**अंतरिद** वि [अन्तरित] पदार्थ से सर्वथा विभिन्न, सर्वथा प्रकार भेद। (पंचा.४८,४९) अत्थंतरिदो दु णाणदो णाणी। (पंचा.४८) -**जाद** वि [जात] पदार्थ को प्राप्त, वस्तु से उत्पन्न। (प्रव.१८)

सव्वस्स अत्थजादस्स।

अत्थि अ [अस्ति] 1. सत्त्व सूचक अव्यय। (पंचा.३४, स.३८, प्रव.५३)णवि अत्थि मज्झ किंचिवि। (पंचा.३८) **-काइय/काय** वि [कायिक/काय] अस्तिकायिक, कायवन्त, प्रदेशों से सहित, बहुप्रदेशी। (पंचा.५,६, निय.३४) ते होंति अत्थिकाया। (पंचा५) **-सहाव** पुं [स्वभाव] अस्तिस्वभाव। (पंचा.५) जेंसि अत्थिसहाओ। 2. अक [अस्ति] होना। अत्थि (व.प्र.ए.) संति (व.प्र.ब.)

अत्थित्त न [अस्तित्व] विद्यमानता, अस्तिभाव। (पंचा. १५४, निय.१८१, प्रव.ज्ञे.६०) अत्थित्तम्हि य णियदा।

अदंतवण वि [अदन्तधावन] अदन्तधावन, दांत साफ नही करना, मुनियों का एक मूलगुण। (प्रव.चा.८)

अदत्त वि [अदत्त] नहीं दिया हुआ, अणुव्रत का एक भेद, चोरी। (स.२६३,चा.२४,३०,लिं.१४) मोसे अदत्तथूले य। (चा.२४) -**दाण** वि [दान]बिना दी गई वस्तु का ग्रहण। (लिं१४) -**विरइ** वि [विरति] बिना दी गई वस्तु का त्याग, अणुव्रत या महाव्रत का एक भेद। (चा.३०) असच्चविरई अदत्तविरई।

अदिंदिअ/अदिंदिय वि [अतीन्द्रिय] अतीन्द्रिय, इन्द्रिय रहित। (प्रव.१८,२०,५३,५४) जम्हा अदिंदियत्तं। (प्रव.२०) **-त्त** वि [त्व] इन्द्रियरहितपना, अतीन्द्रियता। (प्रव.२०)

अदिक्कंत वि [अतिक्रान्त] रहित, परे, छूटा हुआ। पाणित्तमदिक्कंता। (पंचा.३९) संसारमदिक्कंतो (द्वा.३८)

अदिसय वि [अतिशय] अतिशय, चमत्कारपूर्ण, आश्चर्यजनक। (निय.७१)

अदिस्समाण व.कृ. [अदृश्यमान] नहीं दिखाई देता हुआ।

अदीद वि [अतीत] परे। (पंचा.३५) वचिगोयरमदीदा। (पंचा.३५)

अद्ध पुं न [अर्ध] आधा, एक का आधा। अद्धं भणंति देसोत्ति (पंचा.७५) **-अद्धं** पुं न [अर्ध] आधे का आधा, चौथाई भाग। अद्धद्धं च पदेसो। (पंचा.७५)

अध अ [अथ] अब, इसके बाद, इसके पश्चात्। (पंचा.३७,३८) सस्सधमध उच्छेदं। (पंचा.३७)

अधम्म पुं [अधर्म] पाप, अनीति, अनाचार। (स.२११) अपरिग्गहो अधम्मस्स, जाणगो तेण सो होदि। (स.२११)

अधम्म पुं [अधर्म] द्रव्य का एक भेद, अधर्म। जो जीव और पुद्गलों के ठहराने में सहायक होता है, वह अधर्मद्रव्य है। यह बहुप्रदेशी होने से अस्तिकाय है। ठिदिकिरियाजुत्ताणं, कारणभूदं तु पुढवीव। (पंचा.८६,निय.३०) **-त्थि** पुं [अस्ति] अधर्मास्तिकाय। (स.ज.वृ.२११)

अधवा अ [अथवा] अथवा, या, और । (पंचा.४४) दव्वाणंतियमधवा। (पंचा.४४)

अधारणा स्त्री [अधारणा] जो लाभदायक न हो, अधारणा। (स.३०७) इसे अमृतकुम्भ के आठ भेदों में गिनाया है। अप्परिहारो अधारणा चेव। (स.३०७)

अधिक/अधिग वि [अधिक] विशेष, ज्यादा, बहुत। (प्रव.१९,२४) **-तेज** वि [तेज] अधिक तेज, अधिक बल। (प्रव.१९) अणंतबलवीरिओ अधिकतेजो। **-गुण** वि [गुण] अधिक गुण। अधिगगुणासामण्णे, समिदकसायो तवोधिगो चावि। (प्रव.चा.६८)

अधिगद वि [अधिगत] प्राप्त हुआ, प्राप्त होने वाला। (पंचा.१२९) गदिमधिगदस्स देहो। (पंचा. १२९)

अधिगम वि [अधिगम] यथार्थ अनुभव, ठीक-ठीक बोध, तत्त्वज्ञान का बोध। (पंचा. १०७, स.१५५, निय. ५२) अधिगमभावो णाणं, हेयोपादेयतच्चाणं। (निय.५२)

अधिगंता सं. कृ. [अधि+गम्] प्राप्त करके। (पंचा.२८) लोगस्स अंतमधिगंता।

अधिवस अक [अधि+वश्] वास करना, रहना। अधिवसदु (वि./आ.प्र.ए.प्रव.चा.७०) अधिवसदु तम्हि णिच्चं।

अधिवास पुं [अधिवास] निवास, रहना, अधीनता, स्वीकार करना, (गुरुओं के) पास रहना। (प्रव.चा.१३) अधिवासे य विवासे, छेदविहूणो भवीय सामण्णे।

अधी स्त्री [अधी] अबुद्धि, बुद्धिहीन, कुमति, अज्ञानी। (भा.१०२) सच्चित्तभत्तपाणं, गिद्धोदप्पेणडधी पभुत्तूण।

अधी सक [अधि+इ] पढ़ना, अध्ययन करना। अधीएज्ज (व.प्र.ए.स.२७४) (हे. वर्तमानापञ्चमीशतृषु वा।३/१५८, ज्जा-ज्जे ३/१५९, वर्तमान, विधि/आज्ञा एवं भविष्यकाल के

दोनों वचनों के तीनों पुरुषों में ज्जा,ज्ज प्रत्यय भी होते हैं) अभवियसत्तो दु जो अधीएज्ज । (स.२७४)

अधुव वि [अध्रुव] अस्थिर, अविनश्वर, एक भावना का नाम। (स.७४) जीवणि-बद्धा एए अधुव। (स.७४)

अपच्चखाण/अपच्चक्खाण न [अप्रत्याख्यान] परित्याग न करने की प्रतिज्ञा, अत्याग। (स.२८३,२८५) अपच्चखाणं तहेव विण्णेयं। (स.२८३)

अपडिक्कमण/अपडिकमण न [अप्रतिक्रमण] अनिवृत्ति, अशुभव्यापार में प्रवृत्ति, दुष्कृत के प्रति पश्चात्ताप नहीं होना। (स.२८३-२८५) अपडिक्कमणं दुविहं (स.२८४)

अपत्त न [अपात्र] 1. अपात्र, जो योग्य न हो। (द्वा.१८) जो सम्यग्दर्शन रूपी रत्न से रहित है, वह अपात्र है। सम्मत्तरयणरहिओ, अपत्तमिदि संपरिक्खेज्जो ।2. वि [अप्राप्त] प्राप्त नहीं हुआ । (स. ३८२) बुद्धिं सिवमपत्तो। (स.३८२)

अपत्थणिज्ज [अप्रार्थनीय] प्रार्थना से रहित, अनिन्दनीय। (प्रव.चा.२३) अपत्थणिज्जं असंजदजणेहिं। (प्रव.चा.२३)

अपद वि [अपद] पदरहित, द्रव्य। अपदे (द्वि. ब. स.२०३) अपदे मोत्तूण गिण्ह तह णियदं।

अपदेस पुं [अप्रदेश] प्रदेशरहित, अपरिमाण विशेष, असंयुक्त। (स.१५, प्रव.४१, प्रव. ज्ञे. ४५,४६) अपदेससुत्तमज्झं, पस्सदि जिणसासणं सव्वं।

अपमत्त वि [अप्रमत्त] प्रमादरहित, सावधान, अप्रमत्त नामक गुणस्थान। (निय. १५८) अपमत्तपहुदिठाणं, पडिवज्ज य केवली जादा। (निय. १५८)

अपरम वि [अपरम] अपरमभाव, अनुत्कृष्ट। (स.१२) अपरमेट्ठिदा भावे। (स.१२)

अपरिग्गह वि [अपरिग्रह] धन-धान्य आदि परिग्रह से रहित, व्रत विशेष, महाव्रत का भेद।(स. २१०-२१३) **-त्तण** वि [त्व] अपरिग्रहत्व। (स.२६४) **-समणुण्ण** वि [समनोज्ञ]मनोज्ञ और अमनोज्ञ परिग्रह त्याग। अपरिग्गहसमणुण्णेसु। (चा. ३६)।

अपरिच्चत्त वि [अपरित्यक्त] नहीं छोड़े हुए,परित्याग से रहित। अपरिच्चत्त-सहावेण। (प्रव.ज्ञे.३)

अपरिणम सक [अपरि+णम्] परिणमन नहीं करना। अपरिणमंतम्हि (व.कृ.स.ए.) अपरिणमंतीसु (व.कृ.स.ब.)

अपादग पुं [अपादक] पांव रहित, बिना पैर का, गिंडौला, एक जन्तु विशेष। (पंचा.११४) सिप्पी अपादगा य किमी।

अपार वि [अपार] पार रहित, अन्त रहित, अनन्त। (प्रव.७७) हिंडदि घोरमपारं। (प्रव.७७)

अपुज्ज् सक [अपूजय्] पूजा के योग्य नहीं, अपूजित, अपूज्य। (भा.१४२) सवओ लोयअपुज्जो। (भा.१४२)

अपुणब्भव पुं [अपुनर्भव] उत्पत्ति रहित, मुक्ति, जन्म-मृत्यु से रहित। (प्रव.चा.२४, चा ४५) **-कामिण** वि [कामिन्] मोक्षाभिलाषी। (प्रव. चा. २४)अपुणब्भवकामिणोध। **-कारण** न

[कारण] मोक्ष हेतु, मोक्ष का निमित्त। (प्रव. ज्ञे.६)

अपुणब्भाव पुं [अपुनर्भाव] मोक्ष प्राप्ति। (प्रव.चा. ५६) ण लहदि अपुणब्भावं।

अपुधब्भूद वि [अपृथग्भूत] एक क्षेत्र अवगाही, प्रदेश भेद रहित। (पंचा. ५०,९६) अपुधब्भूदो य अजुदसिद्धो य। (पंचा.५०)

अपुव्व वि [अपूर्व] अद्‌भुत, अद्वितीय। (भा.१३२) भावि अपुव्वं महासत्त।

अपोह पुं [अपोह] युक्ति देना, तर्क प्रस्तुत करना, तर्क शक्ति द्वारा शंका निवारण । अपोहाविवरीयभासणं। (चा.३३)

अप्प स [अल्प] अल्प, थोड़ा। (सू. १८,१९) अप्पं बहुयं च हवइ लिंगस्स। **-गाह** पुं [ग्राह्य] अल्पग्रहण। (सू.२७) गाहेण अप्पगाहा। (सू.२७) **-बहुय** वि [बहुक] अल्पबहुत्व। (सू. १८,१९) जइ लेइ अप्पबहुयं। (सू.१८) **-लेवी** वि [लेपी] अल्पलिप्त। (प्रव.चा.३१) **-सार** पुं न [सार] अल्पसार। (भा.१३०) णरसुरसुक्खाण अप्पसाराणं। (भा. १३०)

अप्प पुं [आत्मन्] आत्मा, जीव, चेतन, निज। (स. २९,५३, निय.१७०, पंचा. १४०, मो. ५, भा.१३१) तुमं कुणहि अप्पहियं। (भा.१३१) **-पयास** पुं [प्रयास] आत्मउद्यम, निज उद्यम, निज प्रयत्न। (निय.१६५) णाणं अप्पपयासं। (निय.१६५) **-प्पसंसिय** वि [प्रशंसित] आत्मप्रशंसित, आत्मश्लाघ्य।(निय.६२)अप्पप्पसंसियं वयणं।(निय.६२)**-वस** पुं [वश]आत्मवश, आत्माधीन। (निय.१४६) अप्पवसो सो

होदि। -**वियप्प** पुं [विकल्प] आत्मविकल्प, अपने में विकल्प। (स.९४,९५) अप्पवियप्पं करेइ कोहो हं। (स.९४) अप्पवियप्पं करेदि धम्माई। (स.९५) -**समभाव** पुं [समभाव] आत्म समभाव। (मो.५०) सो हवइ अप्पसमभावो। (मो.५०) -**संकप्प** पुं [संकल्प] **आत्मसंकल्प, आत्मचिंतन। (मो.५) अंतरप्पा हु अप्पसंकप्पो।** -**सरूव** वि [स्वरूप] आत्म-स्वरूप, आत्म-सदृश। (निय. ११९,१६९) -**सहाव** पुं [स्वभाव] आत्म-स्वभाव। (निय.१४७) -**हिय** न [हित] आत्मरहित, आत्म-कल्याण। (भा.१३१) तुमं कुणहि अप्पहियं।

अप्पग/अप्पय पुं [आत्मक] 1. जीव द्रव्य, आत्मा। (प्रव.७९,स.१८६) सो अप्पगं सुद्धं। 2. वि [आत्मक] स्वकीय, निजीय, अपना। (प्रव.८९) अप्पगं (द्वि.ए.पंचा.१५८) अप्पणो (द्वि.ब.प्रव.९०) अप्पणा (तृ.ए.स.२५३) अप्पणो (च./ष.ए.स.२९३, प्रव.७) इच्छदि जदि अप्पणो अप्पा। (प्रव.९०)।

अप्पट्ठपसाधग वि [आत्मार्थप्रसाधक] आत्मीक स्वभाव साधने वाला। (पंचा.१४५) अप्पट्ठपसाधगो हि अप्पाणं। (पंचा.१४५)

अप्पडिकम्म वि [अप्रतिकर्मन्] संस्कार रहित,सम्हालने या सजाने की क्रिया रहित। (प्रव.चा.५,स.ज.वृ.३०८) अप्पडिकम्मं हवदि लिंगं। (प्रव.चा.५) -**त्त** वि [त्व] ममत्वभाव की क्रिया से रहित। (प्रव.चा.२४)

अप्पडिकुट्ठ वि [अप्रतिकुष्ट] अनिन्दित। (प्रव.चा.२३)

अप्पडिबद्ध वि [अप्रतिबद्ध] आकांक्षा रहित। (प्रव.चा.२६)

अप्पडिबुद्ध वि [अप्रतिबुद्ध] अज्ञानी, समझरहित। (स.१९) अप्पडिबुद्धो हवदि ताव।

अप्पडिपुण्णोदर वि [अप्रतिपूर्णोदर] अपूर्णपेट। (प्रव.चा.२९) अप्पडिपुण्णोदरं जधा लद्धं। (प्रव.चा.२९)

अप्पडिहददंसण वि [अप्रतिहतदर्शन] यथार्थ वस्तु का अखंण्डित सामान्यावलोकन। (पंचा.१५४) अप्पडिहददंसणं अणण्णमयं। (पंचा.१५४)

अप्पडिहार वि [अप्रतिहार] अप्रतिहार। (स.ज.वृ.३०७)

अप्पप्पयासया स्त्री [आत्मप्रकाशिका] आत्मप्रकाशिका। (निय.१६१) अप्पप्पयासया चेव। (निय.१६१)

अप्पमत्त वि [अप्रमत्त] अप्रमाद युक्त। (स.६,भा.९४) ण होदि अप्पमत्तो। (स.६)

अप्परिणामि वि [अपरिणामिन्] परिणमन नहीं करने वाला। (स.११६,१२१) अप्परिणामी तदा होदि। (स.११६)

अप्पा पुं [आत्मन्] आत्मा, जीव, चेतन। (पंचा. १४७, स. १०२, निय. ४३) अप्पा (प्र.ए.स.१०२) अप्पाणं (द्वि. ए. पंचा.१६२, स.९,प्रव.३३) अप्पादो (पं. ए. पंचा.१५९)अप्पा सु (स.ब.चा.४३) णाणं अप्पा सव्वं। (स.१०)

अप्पाणभाव पुं [आत्मन्भाव] आत्मभाव, निजस्वभाव। (स.९६) अप्पाणभावेण (तृ.ए.स.९६)

अप्पाणमअ वि [आत्मन्मय्] आत्ममय, अपने आप मय,

निजरूपमय। अप्पाणमओ जीवो। (स.९२) (हे. पुंष्यन आणो राजवच्च ३/५६) इस सूत्र से **अप्प में आण** आदेश विकल्प से होता है। अतः अप्प या अप्पाण इन दोनों शब्दों के रूप अकारान्त पुंलिङ्ग की तरह चलेंगे।

अप्पिला वि [दि] तुच्छ, अनादरणीय। (शी.१७) दुस्सीला अप्पिला लोए।

अफल वि [अफल] निष्फल, निरर्थक। (प्रव. ज्ञे.२४, प्रव. चा. ७२) अफले चिरं ण जीवदि।(प्रव.चा.७२) किरिया हि णात्थि अफला, धम्मो जदि णिप्फलो परमो। (प्रव.ज्ञे.२४)

अबंध/अबंधण वि [अबन्ध] अबन्ध, बंधयुक्त नहीं। (स.१७०, निय.१७२)

अबंभ न [अब्रह्म] मैथुन। (भा.९८) **-चारी** वि [चारिन्] अब्रह्मचारी, ब्रह्मचर्य से रहित। (स.३३७) **-चेर** वि [चर्य] अब्रह्मचर्य। (स.२६३) **-विरइ** वि [विरति] मैथुन से विरत। (चा.३०)

अबंभु न [अब्रह्म, अपभ्रंश] मैथुन, कुशील। (लिं.७)अबंभु लिंगिरूवेण।

अबद्ध वि [अबद्ध] नहीं बंधे हुए, बंधनरहित। कम्मं बद्धमबद्धं। (स.१४२) **-पुट्ठ** वि [स्पृष्ट] नही बंधे हुए स्पर्शित। (स.१५, १४१) अबद्धपुट्ठं हवइ कम्मं । (स.१४१)

अब्भंतर न [अभ्यंतर] भीतर, अन्तरंग। (भा.३,४३,४९) गंथं अब्भंतर धीरं। (भा.४३) डहिओ अब्भंतरेण दोसेण। (भा.४९)

-गंधजुत्त वि [गंधयुक्त] अभ्यंतर गंध से युक्त। **-लिंग** न [लिङ्ग] आभ्यन्तर लिङ्ग, आभ्यंतरचिन्ह। (भा.१११) अब्भंतरलिंग सुद्धिमावण्णो।

अब्भिंतर न [अभ्यन्तर] अन्तरंग। (भा.७०) **-भाव** पुं [भाव] अन्तरंग भाव। (भा.७०) अब्भिंतर-भावदोसपरिसुद्धो।

अब्भुट्ठाण न [अभ्युत्थान] आदर के लिए खड़ा होना, सम्मान में खड़ा होना। (प्रव.चा.४७) अब्भुट्ठाणाणुगमणपडिवत्ती।

अब्भुट्ठिद वि [अभ्युत्थित] उद्यत, सावधान, सद्भाव। (प्रव.९२) अब्भुट्ठिदो महप्पा। (निय.१५२) समणो अब्भुट्ठिणो होदि।

अब्भुट्ठेय वि [अभ्युत्थेय] सम्मान के लिए खड़े होने योग्य। (प्रव.चा.६३) अब्भुट्ठेयसमणा।

अब्भुदय पुं [अभ्युदय] स्वर्ग, वैभव, उन्नति, उदय। (भा.१२७) **-परंपरा** स्त्री [परम्परा] स्वर्ग की परंपरा, उन्नति की परंपरा अब्भुदयपरंपराइं सोक्खाइं।

अब्भुवसक [अभ्युप] अंगीकार करना। (स.४०४)

अभत्ति वि [अभक्ति] भक्ति नहीं करने वाला। (निय.१८५) अभत्तिं मा कुणह जिणमग्गे। (निय.१८५)

अभयदाण न [अभयदान] जीवनदान, अभय देना। (भा.१३५) जीवाणमभयदाणं। (भा.१३५)

अभवियसत्त पुं [अभव्यसत्त्व] अभव्यप्राणी। (स.२७४) अभवियसत्तो दु जो अधीएज्ज।

अभव्व पुं [अभव्य] अभव्य, मुक्ति जाने के अयोग्य, जो

भव-भवान्तरों में भी मुक्त नहीं हो। (पंचा.१२०, स.२७३, प्रव.६२, भा.१३८) अभव्वो (प्र.ए.स.३१७) अभव्वा (प्र.ब. प्रव.६२) अभव्वं (द्वि.ए.पंचा.३७) **-जीव** पुं [जीव] अभव्व जीव। (भा.१३८) मिच्छत्तछण्णदिट्ठी, दुद्धीए दुम्मएहिं दोसेहिं। धम्मं जिणपण्णत्तं अभव्वजीवो ण रोचेदि। **-सत्त** पुं [सत्त्व] अभव्यजीव, त्रैकालिक आत्मीक भाव की प्रतीति से रहित। (पंचा.१६३) अभव्वसत्तो ण सद्दहदि।

अभाव पुं [अभाव] अभाव, निषेध, असत्ता, अविद्यमानता, अस्तित्वरहित, कर्मों का निरोध। (पंचा.३५, स.१७८, प्रव. ज्ञे.१५,१६) जो खलु तस्स अभावो। (प्रव. ज्ञे. १५) कम्मस्साभावेण य। (पंचा. १५१)

अभिंघुद वि [अभिघृत] दुःखी होता हुआ, कष्ट पाता हुआ। (प्रव.१२)

अभिगच्छ सक [अभि गम्] प्राप्त करना, अनुभव करना, समझना। (पंचा.१२३,स.९,प्रव.९०) अभिगच्छदु (वि./आ.प्र.ए.पंचा.१२३) अभिगच्छइ (व.प्र.ए.स.९)जो हि सुएणभिगच्छइ। अभिगम्म (सं.कृ.पंचा.१२३)

अभिगद वि [अभिगत] रुचि लिए हुए, ज्ञात। (पंचा.१७०,स.१३) भूयत्थेणाभिगदा। (प्र.ब.स.१३)

अभिणंदण वि [अभिनंदन] प्रशंसा, स्तुति, सम्म न, एक तीर्थंकर का नाम। (ती.भ.३)

अभिणिवेस पुं [अभिनिवेश] अभिप्राय, आग्रह। (निय.५१)

विवरीयाभिणिवेसविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं।

अभित्थुय वि [अभिष्टुत] स्तुत, वंदनीय, पूजित। (ती.भ.६)

अभिभूय वि [अभिभूत] पराभूत, तिरस्कृत, पराजित, अपना-सा कर। (प्रव.३०, प्रव.ज्ञे.२५) रदणमिह इंदणीलं, दुद्धज्झसियं जहा सभासाए। अभिभूय तं पि दुद्धं, वट्टदि तह णाणमत्थेसु।

अभिरद वि [अभिरत] तल्लीन, अभिरत अनुरक्त।

अभिवंद सक [अभि+वंद्] प्रणामकरना, नमस्कार करना। अभिवंदिऊण (सं.कृ.पंचा.१०५)

अभूदत्थ वि [अभूतार्थ] असत्यार्थ। (स.११) ववहारोऽभूयत्थो, देसिदो दु सुद्धणयो।

अभूदपुव्व वि [अभूतपूर्व] किसी काल में समाप्त नहीं होने वाला, पहले कभी न होने वाला।(पंचा.२०) तेसिमभावं किच्चा अभूदपुव्वो हवदि सिद्धो। (पंचा.२०)

अमग्गय वि [अमार्गक] अमार्ग, कुमार्ग, मिथ्यामार्ग। (सू.१०) एक्को वि मोक्खमग्गो, सेसा य अमग्गया सव्वे। अमग्गया (प्र.ब.सू.१०)

अमणुण्ण वि [अमनोज्ञ] अमनोज्ञ, असुन्दर, कुरूप। (चा.२९) अमणुण्णे य मणुण्णे, सजीवदव्वे अजीवदव्वे य।(चा.२९)

अमय पुं [अमृत] 1. मुक्ति, मोक्ष। (स.३०७) -**कुंभ** पुं [कुम्भ] अमृतकलश। (स.३०७) 2. वि [अमय] विकार रहित,अकृत्रिम,स्वभावसिद्ध। (पंचा २२) अमया अत्थित्तमया कारणभूदा हि लोगस्स।

अमर पुं [अमर] देव। (प्रव.ज्ञे.२०, भा. ७५) खेयरअमरणराणं। (भा.१०८) अमरो (प्र.ए.प्रव.ज्ञे.२०) अमराण (ष.ब.द.२५) अमराण वंदियाणं।

अमाण वि [अमान] 1. अज्ञानपूर्ण, ज्ञानहीन। सिसुकाले य अमाणे। (भा.४१) 2. वि [अमान] प्रमाणरहित, मर्यादारहित। 3. वि [अमान] मान रहित, सम्मान-अपमान में समान।

अमिअ वि [अमित] मर्यादा रहित, अनन्त, असंख्य, परिमाण रहित। सो चेव हवदि लोओ तत्तो अमिओ अलोओ खं। (पंचा.३)

अमिद पुं [अमृत] अमृत। (द.१७) **-भूद** वि [भूत] अमृतरूप, अमृततुल्य। जिणवयणमोसहमिणं विसयसुहविरेयणं अमिदभूदं। (द.१७)

अमुत्त वि [अमूर्त्त] रूपरहित, निराकार। (पंचा.९९, स. ४०५ प्रव.४१, निय. १८१, भा.१४७) सेसं हवदि अमुत्तं। (पंचा.९९) अमुत्तो (प्र. ए. पंचा.२४) अमुत्ता (प्र. ब. प्रव. ज्ञे.३९) अमुत्तं (द्वि.ए.पंचा.९९) अमुत्ताणं (ष.ब.प्रव.ज्ञे.३९)

अमूढ वि [अमूढ़] अमुग्ध, ज्ञानयुक्त। (स.२३२, चा.९) **-दिट्ठी** स्त्री [दृष्टि] सम्यग्दर्शन, सम्यग्दृष्टि। (स.२३२) जो हवइ असम्मूढो, चेदा सद्दिट्ठी सव्वभावेसु। सो खलु अमूढदिट्ठी सम्मादिट्ठी मुणेयव्वो। (स.२३२)

अमेय वि [अमेय] सीमा रहित, अमित, अपरिमित। (चा.४) एए तिण्णि वि भावा, हवंति जीवस्स अक्खयामेया।

अमोह वि [अमोह] मोह रहित, निर्मोह, मोह का अभाव।

(चा.१२) जीवो आराहंतो, जिणसम्मत्तं अमोहेण।

अयदाचार वि [अयताचार] प्रयत्नपूर्वक आचरण नहीं, अयत्नाचार पूर्वक प्रवृत्ति करने वाला। (प्रव.चा.१७,१८) अयदाचारो समणो। (प्र.ए.प्रव.चा.१८) अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा (ष.ए.प्रव.चा.१७)

अयाण वि [अज्ञ] अज्ञानी, अजान, नहीं जानने वाला, अनभिज्ञ। अप्पाणमयाणंता (व.कृ.स.३९) (हे.न्त-मणौ ३/१८०)

अरद वि [अरत] अनासक्त, रत नहीं होने वाला। दव्वुवभोगे अरदो। (स.१९६)

अरदि स्त्री [अरति] अरति, रति नहीं होना, नोकषाय का एक भेद। (स. १९६) **-भाव** पुं [भाव] अरतिभाव। जह मज्जं पिवमाणो, अरदिभावेण मज्जदि ण पुरिसो। (स.१९६)

अरय पुं [अरक] धुरी, पहिये के बीच भाग का काष्ठ। (शी.२६) **-घरट्ट** पुं [घरट्ट.दे] अरघट्ट, अरहट, पानी का चरखा। (शी.२६) संसारो भमिदव्वं अरयघरट्टं व भूदेहिं।

अरस पुं [अरस] रस सहित, नीरस। (पंचा. १२७, स.४९) धम्मत्थिकायमरसं। (पंचा.८३), अरसमरूवमगंधं। (स.४९)

अरहंत पुं [अर्हन्त्] जिन भगवान्,जिसने चार घातियां कर्मों को नष्ट कर दिया है। (पंचा.१६६, प्रव. ४,१४, शी.४०)अरहंते माणुसे खेत्ते। (प्रव.३) अरहंते (द्वि.ब.) यहाँ चतुर्थी के योग में द्वितीया का प्रयोग है। अरहंताणं (च.ब.प्रव.४) किच्चा अरहंताणं, सिद्धाणं तह णमो गणहराणं। अज्झावयवग्गाणं

साहूणं चेव सव्वेसिं।।(प्रव.४) अरहंतं (द्वि.ए. प्रव.८०) अरहंता (प्र.ब.८२)

अरि पुं [अरि] शत्रु, रिपु। (शी २०) सीलं तवो विसुद्धं,दंसणसुद्धी य णाणसुद्धीय । सीलं विसयाण अरी, सीलं मोक्खस्स सोवाणं।।

अरिह पुं [अर्हस्] सर्वज्ञ, वीतरागी, केवलज्ञानी, जिनदेव, अरहंत। (स.४०९) ण उ होदि मोक्खमग्गो, लिंगं जं देहणिमम्मा अरिहा।

अरुव वि [अरूप] रूप सहित, आकार शून्य, अमूर्त। (पंचा.१२७ स.४९) अरसमरूवमगंधं। (स.४९)

अरूह पुं [अर्हस्] सर्वज्ञ, अरहन्त। (शी.३२) **-पय** पुं न [पद] अर्हत्पद, अर्हत् स्थान, अर्हन्त के कारण। जाए विसयविरत्तो सो गमयदि णरयवेयणं पउरं। ता लहेदि अरूहपयं, भणियं जिण-वड्ढमाणेण।। (शी.३२)

अल्लिय वि [आलीन] युक्त। (निय. ४७) भवमल्लियजीवा तारिसा होंति। (निय.४७)

अवगय वि [अपगत] विनष्ट, नाशरहित। (स.३०४) - **राध** पुं [राध] अपराध से रहित। शुद्ध आत्मा की सिद्धि या साधन को राध कहते हैं, जिसके यह नहीं है, वह सापराध है। सापराध पुरुष को बन्ध की शंका संभव है। जिसके सिद्धि है, वह निरपराध है। निरपराध पुरुष निः शंक हुआ अपने उपयोग में लीन होता है। संसिद्धिराध सिद्धं, साधियमाराधियं च एयट्ठं अवगयराधो जो खलु चेया सो होइ अवराधो।। (स.३०४)

अवगहण न [अव+गाहन] अवगाहन, स्थान, जगह, गहराई, आत्मा का एक विशेष गुण। (निय.३०) अवगहणं आयासं, जीवादी-सव्वदव्वाणं। (निय.३०)

अवगास पुं [अवकाश] स्थान, जगह। आगासं अवगासं। (पंचा.९२)

अवगाह पुं [अवगाह] अवगाहन, जगह देने का कारण। (प्रव.ज्ञे.४१) आगासस्सवगाहो।

अवच्छण्ण वि [अवच्छन्न] आच्छादित, ढँका हुआ। (स. १६०)

अवणिद वि [अपनित] कम करना, दूर । (स.२४२) सव्वम्हि अवणिदे संते। (स.२४२)

अवणीय वि [अपनीत] दूर किया गया, कम किया गया। (निय.१८४) अवणीय पूरयंतु।

अवण्ण वि [अवर्ण] वर्ण रहित, रंग रहित। (पंचा.८३, स.१३७,

अवत्तव्व वि [अवक्तव्य] अनिर्वचनीय, किसी प्रकार से गोचर नहीं, सप्तभङ्गी का चौथा भेद। अत्थि त्ति य णत्थि त्ति य, हवदि अवत्तव्वमिदि पुणो दव्वं। (प्रव.ज्ञे.२३)

अवमाण पुं न [अपमान] अवज्ञा, तिरस्कार। (निय.३९) णो खलु सहावठाणा, णो माण-वमाणभावठाणा वा। (निय.३९)

अवमिच्चु पुं [अपमृत्यु] अकालमरण, अकारणमरण, आकस्मिकमरण। अवमिच्चु-महादुक्खं तिव्वं पत्तो सि तं मित्त। (भा.२७)

अवर वि [अपर] 1. अन्य, दूसरा। (पंचा १०१,स.४०, भा.९६) अवरे पणवीसभावणा भावि। (भा.९६) 2. सि [अपर] जघन्य,

सबसे कम। 3. वि [अपर] जिससे अच्छा अन्य नहीं। **-सावय** पुं [श्रावक] उत्कृष्ट श्रावक। (सू.२१) दुइयं च उत्तलिंगं उक्किट्ठं अवरसावयाणं च।

अवरट्ठिया स्त्री [दे] आर्यिका। (द.१८) अवरट्ठियाण तइयं।

अवराह पुं [अपराध] अपराध। थेयाई अवराहे कुव्वदि। (स.३०१) अवराहे (द्वि.ब.स.३०२)

अवरूवरुइ वि [अपरूपरुचि] दूसरे के प्रति ईर्ष्या। (लिं.१३)

अवलंबिय वि [अवलम्बित] लटकता हुआ। (बो.५०)

अवलोग सक [अव+लोक्] अवलोकन करना, देखना। (निय.६१) अवलोगंतो (व.कृ.निय.६१)

अवलोयभोयण न [अवलोकभोजन] आलोकित भोजन, अहिंसाव्रत की एक भावना का नाम। (चा.३२) वयगुत्ती मणगुत्ती, इरियासमिदी सुदाणणिक्खेवो। अवलोयभोयणाए अहिंसए भावणा होंति।। (चा.३२)

अववद् सक [अप+वद्] निंदा करना। (प्रव.चा.६५) अववदि सासणत्थं, समणं दिट्ठा पदोसदो जो हि।

अवस वि [अवश] अपराधीन, स्वतंत्र। (निय.१४२,१४३)

अवसत्त वि [अवसक्त] लीन, तन्मय। (प्रव.चा.७३)

अवसप्पिणी स्त्री [अवसर्पिणी] अवसर्पिणी काल विशेष, दशकोडाकोडि सागरोपम-परिमित काल, जिसमें सभी पदार्थों के गुणत्व/गुणवत्ता में क्रमशः हानि होती है। (द्व.२७)

अवसाण वि [अवसान] पृथक्, अविभागी अंश। (निय.२५) खंधाणं अवसाणो।

अवसेस पुं [अवशेष] अवशिष्ट, बाकी, बचा हुआ। (सू.१३, स.२९७,२९९) अवसेसा जे भावा ते मज्झ परे त्ति णादव्वा। (स.२९७) आलंबणं च मे आदा अवसेसाइं वोसरे। (भा.५७) अवसेसाइं (द्वि.ब.) अवसेसे (द्वि.ब.भा.१) अवसेसं (द्वि.ए.निय.९९)

अविट्ठ वि [अविष्ट] प्रवेशित, घुसता हुआ। (प्रव.२९) ण पविट्ठो णाविट्ठो। (प्रव.२९)

अवितत्थ वि [अवितार्थ] यथार्थरूप, सत्यार्थ, वस्तुस्वरूपात्मक पदार्थ। (मो.१७) अवितत्थं सव्वदरसीहिं। (मो.१७)

अविदिद वि [अविदित] अज्ञात, नहीं जाना हुआ। (प्रव.चा.५७, मो.१०) अविदिदपरमत्थेसु। (प्रव.चा.५७) **-त्थ** वि [अर्थ] पदार्थ के स्वरूप को न जानने वाला। (स.३२४) अविदिदत्थमप्पाणं। (मो.१०)

अविभागी न [अविभागिन्]अविभागी,जिसका दूसरा हिस्सा न किया जा सके। एक्को अविभागी मुत्तिभवो। (पंचा.७७)

अविभत्त वि [अविभक्त] प्रदेश भेद से रहित, जुदे-जुदे नहीं। (पंचा.४५,८७) अविभत्ता लोयमेत्ता य (पंचा.८७)

अवियडीकरण वि [अविकृतीकरण] अविकृतीकरण, जैसा का तैसा, विकृत नहीं होने देना। (निय.१०८) नियमसार में आलोयण (आलोचन), आलूंछण (आलूञ्छन), अवियडीकरण

(अविकृतीकरण) और भावसुद्धि नाम से आलोचना के चार भेद किये हैं। जो माध्यस्थ भावना मय हो कर्म से भिन्न तथा निर्मल गुणों के निवास स्वरूप आत्मा का चिंतन करता है, वह भावना अविकृतीकरण है। कम्मादो अप्पाणं, भिण्णं भावेइ विमलगुणणिलयं। मज्झत्थभावणाए, वियडीकरणं त्ति विण्णेयं।। (निय.१११)

अवियत्थ वि [अवितार्थ] यथार्थ, सम्यक्, सही। (मो.४१) अवियत्थं सव्वदरसीहिं।

अवियप्प वि [अविकल्प] भेद रहित, संशयादि रहित। (पंचा.१५९, मो.४२) अवियप्पं कम्मरहिएण। (मो.४२)

अवियार वि [अविकार] 1.विकार रहित, परिवर्तन रहित। (भा.११०) 2. वि [अविचार] विचार रहित, विकल्प रहित।

अविरइ/अविरदि स्त्री [अविरति] पापकर्मों से अनिवृत्ति, दुष्कर्मों में प्रवृत्ति। (स.८७,८८)

अविरमण वि [अविरमण] अविरति। (स.१६४) मिच्छत्तं अविरमणं।

अविरय वि [अविरत] अविच्छिन्न, निरन्तर, पापकर्मों से निवृत्ति रहित। अविरयभावो य जोगो य (स.१९०)

अविरुद वि [अविरूढ] अतिदृढ नहीं। (पंचा.१०७)

अविरुद्ध वि [अविरुद्ध]अविरूद्ध, ठीक, अनुकूल, अविपरीत। (पंचा.५४) अण्णोण्ण विरुद्धमविरुद्धं। (पंचा.५४)

अविवरीद वि [अविपरीत] यथार्थ, विपरीत से रहित। (स.१८३)

एयं तु अविवरीदं। (स०१८३)

अविसुद्ध वि [अविशुद्ध] विशुद्धि रहित, अपवित्र। अविसुद्धं य चित्ते (प्रव.चा.२०)

अविसेस वि [अविशेष] सामान्य, विशेषता रहित। (स.१४) अविसेसमसजुत्तं।

अवेदअ/ अवेदय वि [अवेदक] अभोक्ता, भोगने में असमर्थ। (स.३१८,३२०)

अव्वत्त वि [अव्यक्त] अप्रकट, अस्पष्ट, अनुचरित, गुह्य। (पंचा.१२७, भा.६४, स.४९)

अव्वत्तव्व वि [अवक्तव्य] अकथनीय, अनिर्वचनीय। (पंचा.१४)

अव्वदिरित्त वि [अव्यतिरिक्त] जुदा नहीं, अपृथक्। (पंचा.१३, स.४०३)

अव्वाबाध/अव्वावाह वि [अव्याबाध] बाधा रहित, अखण्डित। (पंचा.२९,निय.१७७, मो.३)

अव्वुच्छिण्ण वि [अव्युच्छिन्न] बाधा रहित, खण्डरहित, निरन्तर। (प्रव.१३) अव्युच्छिण्णं च सुहं।

अवि/अपि अ [अपि] भी, निश्चय, और भी । (पंचा.३६) सव्वावि हवदि मिच्छा । (स.२६)

अविचल वि [अविचल] अविचल, दृढ, मुक्तरूप। जो पढइ सुणइ भावइ, सो पावइ अविचलं ठाणं। (भा.१६४)

अविजाणंतो व.कृ.[अविजानन्] नहीं जानता हुआ। (प्रव.चा.३३) अविजाणंतो अत्थे। (प्रव.चा.३३)

अविणय पुं [अविनय] अविनय, विनयरहित। (भा.१०४) **-णर** पुं [नर] अविनयी मनुष्य। अविणयणरा सुविहियं, तत्तो मुत्तिं ण पावंति। (भा.१०४)

अविणास वि [अविनाश] अविनाशी, नाश रहित, शाश्वत। (निय. ४८,१७६) असरीरा अविणासा। (निय.४८)

अविण्णाण न [अविज्ञान] भिन्नज्ञान। मतिज्ञानादि क्षायोपशमिक ज्ञानों से रहित होना अविज्ञान है। यदि मोक्ष में जीव का सद्भाव नहीं माना जाए तो उसमें आठ भाव संभव नहीं होंगे। 1.शाश्वत 2.उच्छेद 3.भव्य 4.अभव्य 5.शून्य 6.अशून्य 7.विज्ञान और 8.अविज्ञान। सस्सधमध उच्छेदं, भव्वमभव्वं च सुण्णमिदरं च विण्णाणमविण्णाणं,ण वि जुज्जदि असदि सब्भावे।। (पंचा.३७)

अस सक [अश्] भोजन करना। असिआ (अ.भू.भा.४१) असिऊण (सं कृ. भा. १०३) असिऊण माणगव्वं। (भा.१०३)

असंकंत वि [असंक्रान्त] संक्रान्त नहीं होने वाला। सो अण्णमसंकंतो, कह तं परिणामए दव्वं। (स.१०३)

असंखदेस वि [असंख्यदेश] परिमाण रहित प्रदेश, असंख्यात प्रदेश धम्माधम्मस्स पुणो, जीवस्स असंखदेसा हु। (निय.३५)

असंखाद वि [असंख्यात] असंख्यात, गिनती करने में असमर्थ, जिसकी गिनती न की जा सके। (पंचा.३१,प्रव.ज्ञे.४३) देसेहिं असंखादा। (पंचा.३१)

असंखादियपदेस वि [असंख्यातिकप्रदेश] असंख्यातप्रदेश। (पंचा.८३) पिहुलमसंखादियपदेसं।

असंखिज्जगुण वि [असंख्येयगुण] असंख्यातगुण। (चा.२०) संखिज्जमसंखिज्जगुणं। (चा.२०)

असंखिज्जपदेस वि [असंख्यातप्रदेश] असंख्यातप्रदेश। (स.३४२) अप्पा णिच्चो असंखिज्जपदेसो। (स.३४२)

असंखेज्ज वि [असंख्येय] असंख्यात, परिगणनारहित। (निय.३५) संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसा हवंति मुत्तस्स। (निय.३५)

असंजद वि [असंयत] असंयमी, संयमरहित। (प्रव.चा.३६,द.२६) असंजदो हवदि किध समणो। (प्रव.चा.३६) असंजदं ण वंदे। (द.२६)

असंजम वि [असंयम] असंयम, संयमरहित। (स. ३१४, प्रव. चा. २१, भा. ११७) उदओ असंजमस्स दु, जं जीवाणं हवेदि अविरमणं। (स.१३३)

असंजुत्त वि [असंयुक्त] संयोगरहित। (स.१४) अविसेसमसंजुत्तं।

असंदेह वि [असंदेह] संदेहरहित। (प्रव. ज्ञे. १०५) झादि किमट्ठं असंदेहो। (प्रव. ज्ञे. १०५)

असंभूद वि [असंभूत] विकल्परहित। (स.२२) एंयत्तु असंभूदं। (स.२२)।

असंमूढ वि [असम्मूढ] ज्ञानी, प्रबुद्ध, प्रतिबुद्ध। (स.२२) भूदत्थं जाणंतो ण करेदि दु तं असंमूढो। (स.२२)

असक्क वि [अशक्य] असमर्थ, कमजोर, अबल। (स.८, प्रव.४०) परमत्थुवएसणमसक्कं। (स.८)

असच्च न [असत्य] झूठ, असत्य, मृषा। -**विरइ** स्त्री [विरति]

असत्य का त्याग, असत्य पाप से निवृत्ति। असच्चविरई (प्र. ए. चा.३०) चारित्रपाहुड में पंचमहाव्रत में असच्चविरई को दूसरे स्थान पर गिनाया है। हिंसाविरइ अहिंसा,असच्चविरई अदत्त-विरई य। तुरियं अबंभविरई, पंचम संगम्मि विरई य।।

असण न [अशन] भोजन, आहार। (स. २१२, भा. ४०)

असद वि [असत्] अविद्यमान, अभाव। (पंचा. १९)

असद्द वि [अशब्द] शब्द रहित। (पंचा. ७७, ७८, भा. ६५) सो णेओ परमाणू परिणामगुणो सयमसद्दो।

असद्दहण वि [अश्रद्धान] अश्रद्धान, विश्वासरहित, प्रतीति का अभाव। (स.१३२)

असब्धुव [असत्ध्रुव] सत् की नित्यता से रहित। (प्रव. ज्ञे. १३)

असब्भूय वि [असद्भूत] असद्भूत, वर्तमान में अविद्यमान रूप। (प्रव. ३८) ते होंति असब्भूया, पज्जाया णाणपच्चक्खा।

असप्पलाव पुं [असत्प्रलाप] व्यर्थ प्रलाप, निष्प्रयोजन प्रलाप, व्यर्थ की बहुत बकवाद। सीलसहस्सट्ठार चउरासी गुणगणाण लक्खाइं। भावहि अणुदिणु णिहिलं असप्पलावेण किं बहुणा।। (भा.१३०)

असरण पुं न [अशरण] शरण रहित, अनुप्रेक्षाओं का दूसरा भेद, संरक्षण रहित। जीवणिबद्धा एए अध्रुव अणिच्चा तहा असरणा य। (स.७४) असरणा (प्र. ब.) मणिमंतोसहरक्खा, हयगयरहओ य सयलविज्जाओ। जीवाणं ण हि सरणं तिसु लोए मरणसमयम्हि।। (द्वा. ७)

असरीर पुं न [अशरीर] शरीर रहित, सिद्ध का एक गुण। (निय.४८) असरीरा अविणासा, अणिंदिया णिम्मला विसुद्धप्पा।

असह वि [असह] असहिष्णु, सहन न करना। असहंता (व.कृ. प्रव ६३) असहंता तं दुक्खं, रमंति विसएसु रम्मेसु।

असहणीय वि [असहनीय] न सहने योग्य, अत्यन्त कठोर। (भा.९)

असहाय वि [असहाय] सहायता बिना, सहायता रहित, सहायता से निरपेक्ष। (निय. १११. १३६) **-गुण** पुं न [गुण] असहायगुण, स्वापेक्ष गुणों से युक्त। (निय.१३६)

असार वि [असार] सार रहित, सारहीन, निस्सार। (भा.११०) **-संसार** वि [संसार] असार-संसार। (भा. ११०) उत्तमबोहिणिमित्तं असारसंसार मुणिऊण।

असियसय पुं न [अशीतिशत्] एक सौ अस्सी। (भा.१३६) मिथ्यादृष्टियों के ३६३ भेदों में क्रियावादियों के एक सौ अस्सी भेद गिनाये गये हैं। असियसयकिरियावाई। (भा.१३६)

असीदि पुं न [अशीति] अस्सी, द्वीन्द्रियादि जीवों के भवों का जो वर्णन किया गया है, उसमें द्वीन्द्रियों के ८० भव गिनाये हैं। वियलिंदिए असीदी। (भा.२९)

असुइ/असुचि वि [अशुचि] अपवित्र, मलिन। (भा. ४१, द्वा.४५) **-त्त** वि [त्व] अशुचिता, अपवित्रता। (स.७२, द्वा. २) **-मज्झ** न [मध्य] अपवित्रस्थान। असुइमज्झम्मि। (स.ए.) असुइमज्झम्मि लोलिओ सि तुमं। (भा. ४१)

असुत्त न [असूत्र] 1. ज्ञानरहित, आगमरहित। (सू.३) 2.

डोरारहित, धागा रहित। सूत्रपाहुड में सूत्र (आगम) ज्ञाता को निपुण और संसार को नाश करने वाला कहा है। जो इससे रहित होता है वह सूत्र (धागा) रहित सुई की तरह संसार में खो जाता है। सुत्तम्मि जाणमाणो, भवस्स भवणासणं च सो कुणदि। सूई जहा असुत्ता, णासदि सुत्ते तहा णो वि।। (सू.३)

असुद्ध वि [अशुद्ध] अशुद्ध, अपवित्र, विभावमय। जाणंतो दु असुद्धं, असुद्धमेवप्पयं लहइ। (स.१८६) परिणामम्मि असुद्धे (स.ए.भा.४) असुद्धा (प्र.ब.भा.६७)-**भाव** पुं [भाव] अशुद्धभाव, अशुद्ध परिणाम। मच्छो वि सालिसिक्थो असुद्धभावो गओ महाणरयं। (भा.८८)

असुभ न [अशुभ] अशुभ, अप्रशस्त। -**उवओगरहित** वि [उपयोगरहित] अशुभोपयोग से रहित। (प्रव. चा. ६०)

असुर पुं [असुर] देवजाति विशेष, भवनवासी देवों का एक भेद। एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं।(प्रव.१)मणुआसुरामरिंदा।(प्रव. ६३)

असुह न [अशुभ] अशुभ, पाप कर्म, नामकर्म का एक भेद। (पंचा. १४२, स. १०२, प्रव. ९, नियं. १४३, भा. १६) किध सो सुहो वा असुहो। (प्रव. ७२) -**उदय** पुं [उदय] अशुभोदय, अशुभोत्पत्ति। असुहोदयेण आदा कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो। (प्रव. १२) असुहं रागेण कुणदि जदि भावं। (पंचा. १५६) -**भाव** पुं [भाव] अशुभ भाव, अशुभपरिणति। वट्टदि जो सो समणो, अण्णवसो होदि असुहभावेण। (निय. १४३) -**लेस्सा** स्त्री [लेश्या]

अशुभ लेश्या, अशुभ आत्मा का परिणाम विशेष। मिच्छत्त तह कसाया, असंजम-जोगेहिं असुहलेस्सेहिं। (भा. १७) यहां **लेस्सेहिं** में अकारान्त पुंलिंग एवं नपुंसकलिंग की तरह तृतीया एकवचन में प्रयोग हुआ है। क्योंकि असुह नपुंसकलिंग है, इसलिए नपुंसकलिंग की तरह प्रयोग हुआ है।

असुही वि [अशुचि] अशुचि, घृणित, घृणा योग्य। असुहीवीहत्थेहिं। (भा. १७)

असेव वि [असेव] सेवा करने में अयोग्य, सेवन नहीं करने वाला। सेवंतो वि ण सेवइ असेवमाणो वि सेवगो कोइ।(स.१९७) असेवमाणो (व.कृ.)

असेस वि [अशेष] निःशेष, सभी, समस्त। (प्रव. २९, निय.५, भा. १०८) पावं खवइ असेसं। (भा. १०८)

असोहण वि [अशोभन] अशुभ, अप्रशस्त। सोहणमसोहणं वा कायव्वो विरदिभावो वा। (स. ३१४)

असोहि स्त्री [अशोधि] अशुद्धि, अपवित्र। (स. ३०७) गरहासोही अमयकुंभो।

अस्सिद वि [आश्रित] आश्रयप्राप्त। भूयत्थमस्सिदो खलु, सम्मादिट्ठी हवइ जीवो। (स.११)

अह अ [अथ] अब, बाद, अथवा, और। अह सयमेव हि परिणमदि। (स.११९)

अहकं त्रि [अस्मद्] मैं। (स.१९) अहमिदि अहकं च कम्मणोकम्मं।

अहमिंद पुं [अहमेन्द्र] देव जाति का स्वामी, इन्द्र, अहमेन्द्र। (द्वा.५)

अहयं त्रि [अस्मद्] मैं। (मो.८१)

अहं त्रि [अस्मद्] मैं। अहं (प्र.ए.स.२०,३८)

अहव अ [अथवा] अथवा, या, वा, और। (स.२०९) (हे. व्याव्ययोत्खातादावदातः १/६७)

अहिअ वि [अधिक] बहुत, अत्यन्त। (स. ३४२, ३४३)

अहिद वि [अहित] अहितकर, दुःखदायक। (पंचा.१२२,१२५)

-भीरुत्त वि [भीरुत्व] दुःखदायक कार्य से भय। (पंचा.१२५)

अहिद्दुद वि [अभिद्रुत] पीड़ित, सताया हुआ। (प्रव. ६३)

अहिलस सक [अभि+लष्] चाहना, इच्छा करना। (स.३३६)

अहिलासि वि [अभिलाषिन्] चाहने वाला, इच्छुक। (स.३३६)

अहो अ [अहो] हे, विस्मय, आश्चर्य। (प्रव.५१)

अहो अक [अ-भू] नहीं होना। अहोज्जमाणो (व. कृ. प्रव. ज्ञे.२१)

आ

आइ पुं [आदि] प्रथम, पहला। (निय. ७, भा. १३) पच्चक्खाई परे त्ति णादूणं। (स.३४)

आइच्च पुं [आदित्य] सूर्य, रवि। आइच्चेहिं (तृ. ब. ती. भ. ८) आइच्चेहिं अहियपयासत्ता।

आइय पुं [आदिक] आदि, आरम्भ। कंदप्पमाइयाओ।(भा.१३) आइयाओ (पं. ब. भा. १३)

आउ/आउग न [आयुष्] आयु, जीवनकाल। जीव शक्ति के

निरूपण में आयु को जीव का प्राण माना जाता है। बलमिंदियमाउ उस्सासो। (पंचा.३०, स. २४८, २५२, भा. २५, प्रव. ज्ञे. ५४, नियं. १७५) आउगपाणेण होंति दह पाणा। (बो.३४) आउस्स (ष. ए. नियं. १७५) **-क्खय** पुं [क्षय] आयु का क्षय। (स. २४८, २४९)

आउल वि [आकुल] व्याकुल, दुःखित। जे वि के वि दव्वसमणा, इंदियसुहमाउला ण छिंदंति। (भा. १२१)

आउस/आउस्स पुं [आयुष्] आयु। (पंचा.११९) आउसे च ते वि खलु। (पंचा. ११९)

आउह न [आयुध] शस्त्र,हथियार। कुलिसाउहचक्कधरा। (प्रव.७३)

आकुंचण न [आकुञ्चन] संकोच, पापकर्मो में एक। आकुंचण तह पसारणादीया। (निय.६८)

आगंतुअ वि [आगन्तुक] आये हुये। (भा.११)

आगद वि [आगत] आया हुआ, उत्पन्न। (प्रव. ज्ञे. ८४) पेच्छदि जाणदि आगदं विसयं। (प्रव. ज्ञे. ८४)

आगम पुं [आगम] शास्त्र, सिद्धांत। (प्रव.ज्ञे.६, प्रव.चा.३२) आगमदो (पं. ए.) इसमें स्वतंत्र रूप से दो प्रत्यय भी होता है। सिद्धं तध आगमदो। (प्रव.ज्ञे.६) **-कुसल** वि [कुशल] आगमप्रवीण सिद्धान्तप्रवीण, शास्त्र निपुण। परमात्मा से निंकले हुए पूर्वापर दोषों से रहित वचन आगम है। तस्स मुहग्गदवयणं, पुव्वावरदोसविरहियं सुद्धं। आगममिदि परिकहियं, तेण दु

कहिया हवंति तच्चत्था। (निय. ८) **-चक्खु** पुं न [चक्षुष्] आगमरूपी नेत्र। आगमचक्खू साहू। (प्रव. चा. ३४) **-चेट्ठा** स्त्री [चेष्टा] आगम के विषय में प्रयत्न, आगमज्ञान का आचरण। आगमचेट्ठा तदो जेट्ठा। (प्रव.चा.३२) **-पुव्व** पुं न [पूर्व] आगमपूर्वक। आगमपुव्वा दिट्ठी, ण भवदि जस्सेह संजमो तस्स। (प्रव.चा.३६) **-हीण** वि [हीन] आगम से हीन, आगम से अपूर्ण। आगमहीणो समणो, णेवप्पाणं परं वियाणादि। (प्रव. चा. ३३)

आगाढ वि [आगाढ] प्रबल, अत्यन्त। (पंचा.६७) अण्णोण्णागाढगहणपडिबद्धा। **-गहणपडिबद्ध** वि [ग्रहण-प्रतिबद्ध] अत्यन्त सघन मिलाप से बन्ध अवस्था को प्राप्त। (पंचा.६७)

आगास/आयास पुं न [आकाश] आकाश, द्रव्य का एक भेद। (पंचा. ९७, प्रव. ज्ञे. ४१, ४३) जो जीव एवं पुद्गलों को निरंतर स्थान देता है वह आकाश है। सव्वेसिं जीवाणं सेसाणं तह य पुग्गलाणं च। जं देदि विवरमखिलं तं लोए हवदि आयासं। (पंचा.९०)

आजुत्त वि [आयुक्त] लगाना, संयुक्त करना। आजुत्तो तं तवसा। (प्रव. चा. २८)

आणपाण/आणप्पाण पुं [आनप्राण] श्वासोच्छ्वास। (बो. ३३,३४) आणपाणभासा य। (बो.३३)

आणा स्त्री [आज्ञा] आज्ञा, आदेश, कथन। पयडदि लिंगं जिणाणाए। (भा. ७३) आणाए (तृ. ए. भा. ७३)

आतव पुं न [आतप] आतप, गर्मी, नाम कर्म का एक भेद।

(नियं.२३) छायातवमादीया। (निय.२३)

आतावण पुं न [आतापन] आतापन, योग का एक नाम जिसमें गर्मी में गर्मी को अग्रसर कर व सर्दी में सर्दी को अग्रसर कर ध्यान किया जाता है।

आद पुं [आत्मन्] आत्मा, जीव, चेतन। (स.८५, प्रव. ८, मो. ५५) जं कुणदि भावमादा। (स.१२६) **आद** का प्रथमा एकवचन में आदा रूप बनता है। आदम्हि (स.ए.स.२०३) **-अत्थ** पुं न [अर्थ] आत्मार्थ, आत्मा के प्रयोजन हेतु। (बो.३) **-पधाण** वि [प्रधान] आत्मप्रधान, आत्मा की विशेषता, आत्मा की मुख्यता। (प्रव. चा. ६४) **-वियप्प** वि [विकल्प] आत्मविकल्प। आदवियप्पं करेदि संमूढो। (स.२२) **-सहाव** पुं [स्वभाव] आत्मस्वभाव। आदसहावं अयाणंतो। (स.१८५) **-समुत्थं** वि [समुत्थ] आत्मा से उत्पन्न। (प्रव.१३) अइसयमादसमुत्थं।

आदद वि [आतत] व्याप्त, फैलाया हुआ, विस्तारित। (प्रव. ज्ञे. ४४) धम्माधम्मेहि आददो लोगो।

आदाण पुं न [आदान] ग्रहण, स्वीकार, आदान, एक समिति का नाम। (चा.३७) सा आदाण चेव णिक्खेवो। (चा.३७)

आदा सक [आ+दा] ग्रहण करना, स्वीकार करना। आदाय (सं. कृ. प्रव. चा.७) आदाय तं पि गुरुणा।

आदावण न [आतापन] आतप को सहन करना, आदान समिति। आदावण-णिक्खेवणसमिदी। (निय.६४)

आदि पुं [आदि] प्रथम, प्रमुख, प्रधान, पहले। (स.४८)

पडिकमणादिं करेज्ज झाणमय। **-परिहीण** वि [परिहीन] आदि-अंश से रहित, जघन्य अंश से रहित। (प्रव.ज्ञे.७३) समगो दुराधिगा जदि बज्झंति हि आदिपरिहीणा।

आदिच्च पुं [आदित्य] सूर्य, दिनकर। (प्रव. ६८) सयमेव जधादिच्चो तेजो उण्हो य देवदा णभसि।

आदिट्ठ वि [आदिष्ट] कथित, उपदेशित। (प्रव. ज्ञे.२३) तदुभयमादिट्ठमण्णं वा।

आदिय सक [आ+दा] ग्रहण करना, स्वीकारना। आदियदि (व.प्र.ए.मो.४८) णादियदि णवं कम्मं णिद्दिट्ठं जिणवरिंदेहिं। आदीयदे (प्रे.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.९४) आदीयदे कदाई, विमुच्चदे कम्मधूलीहिं।

आदीणि वि [आदीनि] अन्य। (स.२७०)

आदेस पुं [आदेश] व्यवहार, नियम, उपदेश, निर्देश, कथन। (स.४७) एसो बलसमुदयस्स आदेसो। (स.४७) **-मत्तमुत्त** वि [मात्रमूर्त] आदेश मात्र से मूर्त, कथन मात्र से मूर्त। (पंचा.७८) आदेसमत्तमुत्तो। (पंचा.७८) **-वस** पुं न [वश] सामर्थवश, विवक्षावश। दव्वं खु सत्तभंगं, आदेसवसेण संभवदि। (पंचा.१४)

आधाकम्म पुं [अधःकर्म] निन्द्यकर्म। आधाकम्मम्मि रया। (मो.७९ स.२८६, २८७)

आपिच्छ सक [आ+पृच्छ्] पूछना, आज्ञा लेना, सम्मति लेना। (प्रव.चा.२)

आभिणि न [आभिनि] पांच इन्द्रिय और मन से होने वाला ज्ञान,

मतिज्ञान। (पंचा.४१) आभिणिसुदोधिमणकेवलाणि। (पंचा.४१)

आम पुं [दि] कच्चा, अपक्व, अग्निसंस्कार से रहित। पक्केसु अ आमेसु। (प्रव.चा.ज.वृ.२७)

आयत्तण वि [आत्मत्व] आत्मत्व, आत्मपना, आत्मस्वरूप। (बो.५८) **-गुण** पुं न [गुण] आत्मत्व गुण। (बो.५८) एवं आयत्तणगुणपज्जत्ता। (बो.५८)

आयदण न [आयतन] आश्रयस्थान, शरण। (बो.५,भा.१३२) पंचमहव्वयधारा, आयदणं महरिसी भणियं। (बो.६)

आयण्ण सक [आ+कर्णय्] सुनना। आयण्णिऊण (सं.कृ.भा.१३७) आयण्णिऊण जिणधम्मं।

आयरिय पुं [आचार्य] आचार्य। पंचाचारसमग्गा, पंचिंदियदंतिदप्पणिद्दलणा। धीरा गुणगंभीरा, आयरिया एरिसा होंति। (निय.७३) जो पंचाचारों से परिपूर्ण, पंचेन्द्रिय रूपी हस्ती को चूर करने वाले, धीर, वीर गुणों में गंभीर हैं, वे आचार्य हैं। आचार्यों को पंचपरमेष्ठियों में लिया गया है। अरुहा सिद्धायरिया, उज्झाया साहू पंचपरमेट्ठी। (मो.१०४) **-परंपर** पुं न [परम्पर] आचार्य परम्परा, आचार्यों की अवच्छिन्न धारा। सुत्तम्मि जं सुदिट्ठं, आइरियपरंपरेण मग्गेण। (सू.२) **-परंपरागद** वि [परम्परागत] आचार्य परम्परा से आया हुआ। एसा आयरियपरंपरागदा एरिसी दु सुई। (स.३३७)

आयरिय वि [आचरित] आचरण किया जाना। (चा.३१)

आयार पुं [आचार] आचरण, अङ्ग ग्रन्थों में से पहला ग्रन्थ। ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, और वीर्य से पांच आचार हैं। णाणदंसणचरित्ततववीरियायारं। (प्रव.चा.२) आयारादिणाणं। (स.२७६)-**विणयहीण** वि [विनयहीन] आचार एवं विनय से रहित। (लिं.१८) आयारविणयहीणो। (लिं.१८)

आरंभ पुं [आरम्भ] जीवहिंसा की क्रिया, वध, पापकर्म। तस्सारंभणियत्तणपरिणामो। (निय.५६) जो संजमेसु सहिओ, आरंभपरिग्गहेसु विरओ।(सू.११)देशविरत श्रावक के भेदों में आरम्भत्याग का भी कथन है। (चा.२२)

आराधय वि [आराधक] पूजा करने वाला, उपासना करने वाला। (शी.१४)

आराधिय वि [आराधित] पूजित,अर्चित। (स.३०४)

आराह/आराहअ वि [आराधक] पूजा करने वाला। रयणत्तयमाराहं,जीवो आराहओ मुणेयव्वो। आराहणाविहाणं तस्स फलं केवलं णाणं। (मो.३४)

आराह सक [आ+राधय्] सेवा करना, भक्ति करना। रयणत्तयं पि जोई, आराहइ जो हु जिणवरमएण। (मो.३६) आराहंतो (व.कृ.चा.१२,१९)

आराहण न [आराधन] प्राप्ति। (चा.२)

आराहणा स्त्री [आराधना] सेवा, भक्ति, मुक्तिपथ में अग्रसर। (भा.९९, स.३०५, निय.८४) आराहणए णिच्चं। (स.३०५)

आरुह सक [आ+रुह्] ऊपर स्थित होना। सिलकट्ठे भूमितले, सव्वे

आरुहइ सव्वत्थ। (बो.५५)

आरूढ वि [आरूढ] स्थित, चढ़कर। (स.२३६, बो.२८) विज्जारहमारूढो। (स.२३६)

आरोग्ग न [आरोग्य] निरोगता। आरोग्गं जोव्वणं बलं तेजं। (द्वा.४)

आलय पुं न [आलय] घर, मकान। (बो.४२)

आलंबण न [आलम्बन] आश्रय, आधार। आलंबणं च मे आदा, अवसेसं च वोसरे। (निय.९९, भा.५७) **-भाव** पुं [भाव] आलम्बनभाव। अप्पसरूवालंबणभावेण। (निय.११९)

आलविद वि [आलपित] कथित, उपदिष्ट। जह राया ववहारा दोसगुणुप्पादगो त्ति आलविदो। (स.१०८)

आलुंचण वि [आलुञ्चन] आलुञ्चन। (निय.१०८)

आलोच सक [आ+लोच्] आलोचना करना। आलोचेउं। (हे.कृ.ती.भ.८) आलोचित्ता (सं.कृ.प्रव.चा.१२) आलोचेयदि (व.प्र.ए.स. ३८६) आसेज्जालोचित्ता। (प्रव.चा.१२)

आलोयण न [आलोचन] कृतकर्मों का प्रायश्चित, विचार, चिंतन। जो दोष को छोड़ता है और आत्मा का अनुभव करता है, वह आलोचना है। तं दोसं जो चेयदि, सो खलु आलोयणं चेया। (स.३८५) **-पुव्विया** स्त्री [पूर्विका] आलोचनापूर्वक। जायदि जदि तस्स पुणो, आलोयणपुव्विया किरिया। (प्रव.चा.११)

आवण्ण वि [आपन्न] प्राप्त, आश्रित। (पंचा. ३१, स.१३९, निय.१४०, भा.१११) सियलोगं सव्वमावण्णा। (पंचा.३१)

आवरण न [आवरण] आच्छादित करने वाला, तिरोहित करने वाला। (प्रव.१५) विगदावरणंतरायमोहरओ। (प्रव.१५)

आवरिय वि [आवृत] आच्छादित, ढंका हुआ।चरियावरिया (मो.७३)

आवलि स्त्री [आवलि] समयविशेष, एक सूक्ष्म कालपरिमाण, व्यवहार काल का एक भेद। असंख्यात समय की एक आवलि होती है। (निय.३१) समयावलिभेदेण दु दुवियप्पं अहव होइ तिवियप्पं। (निय.३१)

आवसध पुं [आवसथ] घर, विश्राम करने का स्थान, विश्रामस्थल, आश्रयस्थान। (प्रव. चा.१५) आवसधे वा पुणो विहारे वा। (प्रव.चा.१५)

आवस्सय वि [आवश्यक] नित्यकर्म, अनुष्ठान, आवश्यक कर्म। (प्रव.चा.८) मुनियों के अट्ठाईस मूलगुणों में छह आवश्यक होते हैं।

आवास/आवासय वि [आवश्यक] आवश्यककर्म, जो परपदार्थों के भाव को छोड़कर निर्मल स्वभाव युक्त आत्मा को ध्याता है, वह आत्मवश है और उसके कर्म को आवश्यक कहा जाता है। परिचत्ता परभावं, अप्पाणं झादि णिम्मलसहावं। अप्पवसो सो होदि हु, तस्स दु कम्मं भणंति आवासं।। (निय.१४६)

आवास पुं [आवास] निवास स्थान, गृह, निलय। बहुदोसाणावासो। (भा. १५४) गिरिसरिदरिकंदराइ आवासो। (भा.८९) पर्वत, नदी, गुहा और खोह आदि निवास स्थान हैं।

आस अक [आस्] बैठना, स्थित होना, प्राप्त होना। आसेज्ज (व.प्र.ए.) आसेज्ज (वि.प्र.ए.प्रव.चा.१२) आसिज्ज (वि.प्र.ए.प्रव. चा.२) आसेज्जालोचित्ता। (प्रव.चा.१२)

आसण न [आसन] स्थान, जगह, जिस पर बैठा जाए। (बो.४५,द्वा.३) आसणाइ (प्र.ब.) (हे.जस्शस् इँ-इं-णयः सप्राग्दीर्घाः ३/२६) हिरण्णसयणासणाइ छत्ताइं। (बो.४५)

आसत्त वि [आसक्त] तल्लीन, तत्पर। (भा.१६) मेहुणसण्णासत्तो, भमिओ सि भवण्णवे भीमे। (भा.९८)

आसम पुं [आश्रम] मुख्यस्थान, आधार, मुख्यध्येय। प्रवचनसार में कहा है-पंचपरमेष्ठी के स्वरूप को ध्याने वाले को दर्शन, ज्ञान प्रधान आश्रम की प्राप्ति होती है। तेसिं विसुद्ध-दंसणणाणपहाणासमं समासेज्ज। (प्रव.५)

आसय पुं [आश्रय] आधार, अवलम्बन। (चा.४४) सम्मत्तसंजमासयदुण्हं। (चा.४४)

आसय [आशय] मन, चित्त, हृदय, अभिप्राय, बुद्धि। आसयविसुद्धी। (प्रव.चा.२०) -**विसुद्धी** वि [विशुद्धि] चित्त की निर्मलता। ण हि णिरवेक्खो चाओ, ण हवदि भिक्खुस्स आसयविसुद्धी। (प्रव.चा.२०)

आसव अक [आ+स्रु] धीरे-धीरे झरना, टपकना। आसवदि जेण पुण्णं, पावं वा अप्पणोधभावेण। (पंचा.१५७)

आसव पुं [आस्रव] कर्मो का प्रवेश द्वार, कर्मबन्ध। पावस्स य आसवं कुणदि। (पंचा.१३९) आसवाणं (ष.ब.स.७१) -**णिरोह** वि

[निरोध] आस्रव के प्रवेश द्वार का रुकना। (स. १६६,१९१, मो.३०) णत्थि आसवबंधो, सम्मादिट्ठिस्स आसवणिरोहो। (स.१६६) **-भाव** पुं [भाव] आस्रवभाव। (पंचा १५०, स.१९१) **-बंध** पुं न [बन्ध] आस्रव-बन्ध। (स.१६६) **-हेदु** पुं [हेतु] आस्रव का कारण। (मो.५५) आसवहेदू य तहा। (मो.५५)

आसा स्त्री [आशा] आशा, उम्मीद। (बो.४८) आसाए (ष.ए.निय.१०४) आसाए वोसरित्ता, णं समाहि पडिवज्जए।

आसि अक [अस्] होना। आसि (भू.प्र.ए.स.२१)

आहार पुं [आहार] भोजन। (स. १७९, भा. ४५) देहाहारादिचत्तवावारो।

आहारअ/आहारय वि [आहारक]शरीर विशेष, आहार से सहित। (स.४०५) अत्ता जस्सामुत्तो, ण हु सो आहारओ हवइ एवं। आहारो खलु मुत्तो जम्हा सो पुग्गलमओ उ।। (स.४०५)

इ

इंद पुं [इन्द्र] इन्द्र, देवताओं का राजा। (पंचा.१, प्रव.१) **-णील** पुं न [नील] इंद्रनीलमणिविशेष, नीलम, रत्नविशेष। रदणमिह इंदणीलं, दुद्धज्झसियं जहा सभासाए। अभिभूय तं पि दुद्धं, वट्टदि तह णाणमत्थेसु। (प्रव.३०२) **-त्त** वि [त्व] इन्द्रत्व, राजत्व। अज्ज वि तिरयणसुद्धा, अप्पा झाएवि लहहि इंदत्तं। (मो.७७)

इंदिय पुं न [इन्द्रिय] इन्द्रिय, शरीर के अवयव।(पंचा.१४१, स. १९३, प्रव. ७०, निय.२७) ण हि इंदियाणि जीवा, काया पुण छप्पयार पण्णत्ता। (पंचा.१२१) इंदियाणि (प्र.ब.) जो इंदिए जिणत्ता। (स.३१) इंदिए (द्वि.ब.) **-गेज्झ** पुं [ग्राह्य] इन्द्रिय से ग्रहण करने योग्य। जे खलु इंदियगेज्झा। (पंचा.९९) मुत्ता इंदियगेज्झा पोग्गलदव्वप्पगा अणेगविधा।(प्रव.ज्ञे.३९) **-चक्खु** पुं न [चक्षुष्] इन्द्रिय रूपी नेत्र। आगमचक्खू साहू, इंदियचक्खूणि सव्वभूदाणि। (प्रव.चा.३७) **-दार** न [द्वार] इन्द्रियद्वार, इन्द्रियमार्ग। बहिरत्थे फुरियमणो, इंदियदारेण णियसरूवचुओ। (मो.८) **-पाण** पुं न [प्राण] इन्द्रियप्राण। स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण को इन्द्रिय प्राण माना जाता है। इंदियपाणो (प्रव.ज्ञे.५४) **-बल** पुं न [बल] इन्द्रियबल, इन्द्रियों की सामर्थ। (भा.१३१) **-रहिद** वि [रहित] इन्द्रियरहित। पावदि इंदियरहिदं, अव्वाबाहं सुहमणंतं। (पंचा.१५१) **-रोध** पुं [रोध] इन्द्रियरोध, इन्द्रियों की रुकावट, इन्द्रियों को अधीन करना, इन्द्रिय निग्रह। वदसमिदिंदियरोधो। (प्रव.चा.८) **-वसदा** पुं न [वशता] इन्द्रियों के अधीन। (पंचा.१४०) **-सुह** न [सुख] इन्द्रियसुख। जे के वि दव्वसमणा, इंदिय सुह-आउला ण छिंदंति। (भा.१२१) **-सेणा** स्त्री [सेना] इन्द्रियरूपी सेना। भंजसु इंदियसेणं। (भा.९०) सेणं (द्वि.ए.) दीर्घान्त शब्दों में अनुस्वार लगने से दीर्घस्वर का ह्रस्वस्वर हो जाता है। (हे.ह्रस्वो मि। ३/३६)

इंदु पुं [इन्दु] चन्द्र, चन्द्रमा। (भा.१५९)

इंधण न [ईन्धन] ईन्धन, लकड़ी, काष्ठ। कम्मिंधणाण डहणं सो झाएदि अप्पयं सुद्धं। (मो.२६)

इक्क स [एक] एकमात्र, एक। ववहारणओ भासदि, जीवो देहो य हवदि खलु इक्को। (स.२७) वुज्झदि उवओग एव अहमिक्को। (स.२७)जाणगभावो हु अहमिक्को। (स.१९९)

इगतीस वि [एकत्रिंशत्] इकतीस। (द्वा.४१)

इच्छ सक [इष्] इच्छा करना,चाहना। इच्छदि (व.प्र.ए.स.४१४) इच्छंति (व.प्र.ब.पंचा.४५) जो इच्छदि णिस्सरिदुं,संसार-महण्णवस्स रुंदस्स। (मो.२६)

इच्छा स्त्री [इच्छा] अभिलाषा, चाह, वाञ्छा। (सू.२७) -**विरअ** वि [विरत] इच्छा से रहित। इच्छाविरओ य अण्णम्हि। (स.१८७)

इच्छिय वि [इच्छित] अभिलषित। (स.३३६, मो.३९)

इच्छी स्त्री [स्त्री] स्त्री, नारी। संती दु णिरुवभोज्जा, बाला इच्छी जहेव पुरिसस्स। (स.१७४) इच्छीणं (ष.ब.प्रव.४४) -**रूव** पुं [रूप] स्त्री की आकृति, स्त्री का आकार। दट्ठूण इच्छिरूवं। (निय.५९) प्राकृत में समासान्त पद होने पर परस्पर में दीर्घ स्वर का ह्रस्व हो जाता है। इच्छीरूवं के स्थान पर इच्छिरूवं हो गया। (हे. दीर्घह्रस्वौ मिथौ वृत्तौ। १/४)

इच्छु पुं [इक्षु] ईख, गन्ना। (भा.७१) दोसावासो इच्छुफुल्लसमो। (भा.७१)

इण्हिं अ [इदानीम्] इस समय। (भा.११९) डहिऊण इण्हिं

पयडमि। (भा.११९)

इट्ठ न [इष्ट] इष्ट, स्वाभ्युपगत, लक्ष्य। णट्ठमणिट्ठं सव्वं, इट्ठं पुण जं तु तं लद्धं। (प्रव.६१) पय्या इट्ठे विसए। (प्रव.६५) **-दर** वि [तर] अतिप्रिय। (प्रव.चा.३) कुलरूववयोविसिट्ठमिट्ठदरं। **-दरिसि** वि [दर्शिन्] इष्ट को देखने वाला। विसएसु मोहिदाणं, कहियं मग्गं पि इट्ठदरिसीणं। (शी.१३) दरिसीणं (ष.ब.) षष्ठी बहुवचन में **ण** और **णं** प्रत्ययों का विधान है।

इड्ढि स्त्री [ऋद्धि] वैभव, ऐश्वर्य, सम्पत्ति। (भा.१२९,१५) इड्ढिमतुलं विउव्विय! (भा.१२९) पुलिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्ग इकारान्त शब्दों के प्रथमा एकवचन में शब्द के अन्तिम **इ** को दीर्घ हो जाता है। इड्ढी (प्र.ए.) इड्ढिं (द्वि.ए.)

इति अ [इति] इस प्रकार। (पंचा.७४)

इत्थी स्त्री [स्त्री] देखो इच्छी। (सू.२२,२४)

इदर वि [इतर] अन्य, दूसरा। (स.१९३, निय.१३७,१३८, प्रव.५४, पंचा.१७) देवो हवेदि इदरो वा। (पंचा.१७)

इदाणिं अ [इदानीम्] इस समय,अब,अभी।सा इदाणिं कत्ता। (प्र.ज्ञे.९४)

इदि अ [इति] इस प्रकार, ऐसा, इस तरह। (पंचा.५४, निय.३) भणिदं खुल सारमिदि वयणं।(निय.३)

इम स [इदम्] यह। इदं भी क्वचित् मिलता है। (पंचा.१६४, स.२१,२०५) (हे. इदम इमः ३/७२) द्वितीया विभक्ति के एक वचन में **इमं** का **इणं** रूप भी होता है। (हे. अमेणम् ३/७८)

अण्णाणमिणं तु केवलं सुद्धं। (स.१७) इणमण्णं जीवादो।(स.२८) नपुंसकलिङ्ग के प्रथमा एवं द्वितीया एकवचन में **इणमो** होता है। (हे. क्लीबे स्यमेदमिणमो च।३/७९) इमं का इयं (पंचा.२) में हुआ है।

इय अ [इति] इसलिए, इस प्रकार, इस हेतु। (स.२९०, चा.४२, बो.४, भा.२७) इयकम्मबंधाणं । (स. २९०) इय णाउं गुणदोसं। (चा.४२)

इयर वि [इतर] अन्य, दूसरा। (निय.११) सण्णाणिदरवियप्पे। (निय.११) इयरेहिं (तृ.ब.मो.२५) इयरम्मि (स.ए.मो.१६)

इरिया स्त्री [ईर्या] गमन, गति। (चा.३७) **-वह** पुं [पथ]ईर्यापथ। **-समिदि** स्त्री [समिति] ईर्यासमिति। (चा.३२) **ईर्या** में संयुक्त व्यञ्जन से पूर्व **इ** का आगम होने पर **इरिया** बन गया।

इव अ [इव] तरह, सादृश्य, तुल्य। ठिदिकिरियाजुत्ताणं कारणभूदं तु पुढवीव। (पंचा.८६) करेंति सुहिदा इवाभिरदा। (प्रव.७३)

इसि पुं [ऋषि] मुनि, श्रमण, साधु। तं सुयकेवलिमिसिणो, भणंति लोयप्पदीवयरा। (प्रव.७३) इसिणो (प्र.ब.)

इह अ [इह] ऐसा, इस प्रकार, यहाँ, इस तरह। (स.९८, प्रव.१०,३०, बो.४, भा.३१) रदणमिह इंदणीलं। (प्रव.३०)

ई

ईसर पुं [ईश्वर] भगवान्, परमेश्वर, प्रभु।

ईसर न [ऐश्वर्य] वैभव, प्रभुता, सम्पन्नता। उत्तमज्झिमगेहे, दारिद्दे

ईसरे णिरावेक्खा। (बो.४७)

ईसरिय न [ऐश्वर्य] ईश्वरत्व, ईश्वरपन। (प्रव.ज.वृ.३८) सोक्खं तहेव ईसरियं।

ईसा स्त्री [ईर्षा] ईर्ष्या, द्रोह, मन-मुटाव। ईसा विसादभावो, असुहमणं त्ति य जिणा वेंति। (द्वा.५१) **-भाव** पुं [भाव] ईर्ष्या भाव। ईसाभावेण पुणो, केई णिंदंति सुदंरं मग्गं। (निय.१८५)

ईह सक [ईह्] इच्छा करना, चाहना, विचार करना। चारित्तसमारूढो, अप्पासु परं ण ईहए णाणी। (चा.४३) ईहए (व.प्र.ए.) पालिह भाव-विसुद्धो पूयालाहं ण ईहंतो। (भा.११३) ईहंतो (व.कृ.)

ईहा स्त्री [ईहा] विचार, ऊहापोह, विमर्श, जिज्ञासा। जाणंतो पस्संतो, ईहा पुव्वं ण होइ केवलिणो। (निय.१७२) **-पुव्व** वि [पूर्व] ईहापूर्वक। ईहापुव्वं वयणं। (निय.१७४) ईहापुव्वेहिं जे विजाणंति। (प्रव.४०) ईहापुव्वेहिं (तृ.ब.) **-रहिय** वि [रहित] ईहा से रहित। (निय.१७४) अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा, ये चार इन्द्रिय जन्य ज्ञान हैं। अवग्रह, ईहा आदि से हुआ ज्ञान परोक्ष होता है।

उ

उ अ [तु] और, कि, तथा, परन्तु, अथवा। (स.१८०,१८३,१८४, ३२७,३४४,३५१,३५५) अणज्जभासा विणा उ गाहेउं। (स.८)

उग्गह पुं [अवग्रह] इन्द्रियों द्वारा होने वाला सामान्य ज्ञान, अवग्रह। रहिदं तु उग्गहादिहि। (प्रव.५९)

उग्गह सक [उद्+ग्रह्] प्राप्त करना, ग्रहण करना। ते तेहिं उग्गहदि। (पंचा.१३४)

उग्गाह सक [अव+गाह] अवगाहन करना। उग्गाहेण बहुसो, परिभमिदो खेत्तसंसारे। (द्वा.२६)

उच्च सक [वद्] कहना, कथन करना, बोलना। (स.४७, नियं.७,२९,८४-८९) ववहारेण दु उच्चदि। (स.४७)

उच्चार पुं [उच्चार] मलोत्सर्ग, विष्ठा। उच्चारादिच्चागो। (नियं.६५)

उच्चारण न [उच्चारण] कथन। वयणोच्चारणकिरियं। (नियं.१२२)

उच्छाह पुं [उत्साह] उत्साह, उद्यम, शक्ति, सामर्थ्य, पराक्रम। उच्छाहभावणा। (चा.१३,१४)

उच्छेद पुं [उच्छेद] नाश, उन्मूलन। सस्सधमध उच्छेदं। (पंचा.३७ शाश्वत्, उच्छेद, भव्य, अभव्य, शून्य, अशून्य, विज्ञान, और अविज्ञान, इन आठ विकल्पों का सद्भाव होने पर ही आत्मा का सद्भाव माना गया है।

उज्झ सक [उज्झ्] त्याग करना, छोड़ना। भावविमुत्तो मुत्तो, ण य मुत्तो बंधवाइ मित्तेण। इय भाविऊण उज्झसु, गंथं अब्भंतरं धीरं।। (भा.४३) उज्झसु (वि./आ.म.ए.)

उज्जद वि [उद्यत] प्रयत्नशील, उद्यमी। वेज्जावच्चत्थुज्जदो

समणो। (प्रव.चा.५०)

उज्जाण न [उद्यान] बगीचा, आराम, उद्यान। (बो.४१) उज्जाणे तह मसाणवासे वा।

उज्जोययर वि [उद्योतकर] प्रकाशवान्, चमकवाले। (ती.भ.२)

उज्झिय वि [उज्झित] 1.परित्यक्त, फैंका हुआ, विमुक्त। (भा.२०, गहि उज्झियाइं मुणिवरकलेवराइं तुमे अणेयाइं। (भा.२४) सव्वे वि पुग्गला खलु एगे भुत्तुज्झिया हु जीवेण। (द्वा.२५) 2.रहित। उज्झियकालं तु अत्थिकायत्ति। (प्रव.ज्ञे.ज.वृ. ४४)

उडु त्रि [ऋतु] ऋतु। (द्वा.४१) उडुआदितेसट्ठी। (द्वा.४१)

उड्ढ न [ऊर्ध्व] ऊपर, ऊँचा। (पंचा.९२,स.३३४)

उण्ह पुं [उष्ण] आतप, गर्मी। (प्रव.६८)

उत्त वि [उक्त] कथित, कही गई, अभिहित। सुत्ते ववहारदो उत्ता। (स.६७) जे णिच्चमचेदणा उत्ता। (स.६८) उत्ता मग्गेण सावि संजुत्ता। (सू.२५) **-लिंग** वि [लिङ्ग] उक्त लिङ्ग, कथित लिंग। दुइयं च उत्तलिंगं। (सू.२१) ग्यारहप्रतिमाधारी को सूचित किया गया है।

उत्तम वि [उत्तम] श्रेष्ठ, परम, उत्कृष्ट। (स.२०६, भा.१६१, बो.४७) उत्तम अट्ठं आदा। (निय.९२) **-अट्ठ** वि [अर्थ] उत्तमार्थ, उत्तमता के अर्थ युक्त। उत्तमअट्ठस्स पडिकमणं। (निय.९२) **-देव** पुं [देव] उत्तम देव, भगवान्, अरिहन्त। उत्तमदेवो हवइ अरहो। (बो.३३) **-पत्त** न [पात्र] उत्तमपात्र।

उत्तमपत्तं भणियं, सम्मत्तगुणेण संजुत्ते माहू। (द्वा.१७) **-बोहि** स्त्री [बोधि] उत्तमबोधि, सद्धर्म का ज्ञान। उत्तमबोहिणिमित्तं (भा.११०)

उत्तर वि [उत्तर] श्रेष्ठ, मुख्य। **-गुण** पुं न [गुण] उत्तरगुण,विशुद्ध भावों से युक्त मुनि के गुण।बाहिरसयणत्तावण, तरुमूलाईणि उत्तरगुणाणि। पालिह भावविसुद्धो, पूयालाहं ण ईहंतो।। (भा.११३)

उत्तरय वि [उत्तरक] मुख्य, प्रधान। उत्तरयम्मि (स.ए.भा.१४२) **उत्तरय** में **य** स्वार्थिक प्रत्यय है। जिसके आने से अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता। सवओ लोयअपुज्जो, लोउत्तरयम्मि चलसवओ। यहां तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग हुआ है।

उत्तारिय वि [उत्तारिय] पार पहुंचाया हुआ, बाहर निकला हुआ। विसयमयरहरपडिया, भविया उत्तारिया जेहिं। (भा.१५६)

उत्तावण वि [उत्तापन] तपाया गया। खणणुत्तावण। (भा.१०)

उत्थर सक [उत्+स्तृ] आक्रमण करना, आच्छादन करना। उत्थरइ (व.प्र.ए.भा.१३)

उदअ पुं [उदय] अभ्युदय, उत्पत्ति, आविर्भाव, उन्नयन, उत्कर्ष, वृद्धि। अण्णाणस्स दु उदओ। (स.१३२)

उदग पुं न [उदक] जल, पानी। पुढवी य उदगमगणी। (पंचा.११०)

उदधि पुं [उदधि] समुद्र, सागर। (शी.२८)

उदय देखो उदअ। उदयादु (पं.ए.प्रव.ज्ञे.६१)कम्मेण विणा उदयं।

(पंचा.५८) **-ठाण** पुं न [स्थान] उदयस्थान, उदयस्थिति। (स.५३, निय.४०) जीवस्स ण उदयठाणा वा।

-यर वि [कर]उदय करने वाला, अभ्युदय करने वाला। (बो.२४) उदययरो भव्वजीवाणं (बो.२४) **-विवाग** पुं [विपाक] उदय-परिणाम,सुख-दुःखादि भोगरूप कर्मफल का परिणाम। उदय-विवागो विविहो। (स.१९८) **-संभव** पुं [संभव] उदय की संभावना। पुग्गलकम्मुदयसंभवा जम्हा। (स.१११)

उदिण्ण वि [उदीर्ण] उत्पन्न हुए, प्रकट हुए। जं सुहमसुहमुदिण्णं। (पंचा.१४७) **-तण्हा** स्त्री [तृष्णा] उत्पन्न हुई तृष्णा, उत्पन्न इच्छा। (प्रव.७५) ते पुण उदिण्णतण्हा, दुहिदा तण्हादि विसय-सोक्खाणि। (प्रव.७५)

उदिद वि [उदित] उदय में आए हुए, उदयागत। णाणी पुण कम्मफलं जाणदि उदिदं ण वेदेदि। (स.३१७)

उदु त्रि [ऋतु] ऋतु। (पंचा.२५) मासोदुअयण। (पंचा.२५)

उद्दंस पुं [उद्दंस] डाँस-मच्छर, खटमल, मधुमक्खी। (पंचा.११६) उद्दंसमसयमक्खिय।

उद्दिट्ठ वि [उद्दिष्ट] 1.कथित, प्रतिपादित, उपदेशित। आदा णाणपमाणं, णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं। (प्रव.२३) अप्पडिकम्मत्तिमुद्दिट्ठा। (प्रव.चा.२४) 2. उद्देश्य, निमित्त, देशविरतश्रावक के ग्यारह व्रतों में उद्दिष्टत्याग एक व्रत। (चा.२२) उद्दिट्ठदेसविरदो य।

उद्देसिय वि [औद्देशिक] लक्ष्य, अभिप्राय। आधाकम्मं उद्देसियं।

(स.२८७) संजमचरणं उद्देसियं सयलं। (चा.२७)

उद्ध न [ऊर्ध्व] ऊर्ध्व, ऊपर। उद्धद्धमज्झलोए। (मो.८१)

उद्धर वि [उद्धुर] प्रचण्ड, अत्यधिक, प्रबल। (भा. १५५) दुज्जयपबलबलुद्धर। (भा.१५५)

उद्धुद वि [उद्धूत] नष्ट किया हुआ, पवन से उड़ाया गया। उद्धुददुस्सील सीलवंतो वि। (द.१६)

उपहद वि [उपहत] नष्ट होना, अभाव होना, क्षय होना। पावोपहदिभावो, सेवदि य अबंभु लिंगिरूपेण। (लिं.७)

उप्पज्ज अक [उत्+पद्] उत्पन्न होना। णवि परिणमदि ण गिण्हदि, उप्पज्जदि णेव परदव्वपज्जाए। (स.७६) उप्पज्जदे (स.२१७) उप्पज्जदि (व.प्र.ए.स. ७६-७९) उप्पज्जइ (व. प्र. ए. स. ३०८) उप्पज्जंति (व.प्र.ब.स. ३११) उप्पज्जंते (व.प्र.ब.स.३७२) तम्हा उ सव्वदव्वा उप्पज्जंते सहावेण। (स.३७२) उप्पज्जंत (व. कृ. भा. १३४)

उप्पड सक [उत्+पत्] उड़ना, उछलना। उप्पडदि (व.प्र.ए.लिं.१५)

उप्पण्ण वि [उत्पन्न] उत्पन्न, अद्भूत, पैदा हुआ। (पंचा.१८,स.३१०, प्रव. ज्ञे.४७) ण कुदोचि वि उप्पण्णो। (स.३१०) **-उदयभोगी** वि [उदयभोगी] उत्पन्न उदय का उपभोग करने वाला। (स. २१५) उप्पण्णोदयभोगी। (स.२१५)

उप्पत्ति वि [उत्पत्ति] उत्पन्न, उद्भूत, पैदा हुआ, उपजा। (पंचा.१८)

उप्पल न [उत्पल] कमल, पद्म। (शी.१)

उप्पाडिद वि [उत्पाटित] उखाड़े हुए, लौंच किये गये। (प्रव.चा.५)

उप्पाद पुं [उत्पाद] उत्पत्ति,प्रादुर्भाव।जीवस्स णत्थि उप्पादो। (पंचा. १९) उप्पादो य विणासो, विज्जदि सव्वस्स अत्थजादस्स। (प्रव.१९)

उप्पाय सक [उत्+पादय्] उत्पन्न करना। उप्पादेदि (व. प्र. ए. पंचा. ३६, स. १०७) उप्पादेदि ण किंचि वि।

उप्पादग वि [उत्पादक] उत्पन्न करने वाला।सद्दो उप्पादगो णियदो। (पंचा.७९) जोगुवओगा उप्पादगा। (स. १००)

उब्भव पुं [उद्भव] उत्पत्ति, उद्भव, उत्पन्न होना। अपदेसो परमाणू तेण पदेसुब्भवो भणिदो। (प्रव.ज्ञे.४५)

उब्भसण वि [ऊर्ध्व+आशन] खड़े होते हुए। णाणम्मि करणसुद्धे, उब्भसणे दंसणं होई। (द. १४)

उब्भाम पुं [उद्भ्राम] संचार, परिभ्रमण। **धरिदुं** जस्स ण सक्कं, चित्तुब्भामं विणा दु अप्पाणं। (पंचा.१६८)

उभय स [उभय] युगल, दो, दोनों। पज्जाएण दु केण वि, तदुभयमादिमण्णं वा। (प्रव. ज्ञे. २३ पंचा.९९, स. १०४) **-त्त** वि [त्व] दोनों की अपेक्षा, उभयपने से। (पंचा.१७) उभयत्त जीवभावो, ण णस्सदि ण जायदे अण्णो। (पंचा. १७)

उम्मग्ग पुं [उन्मार्ग] मिथ्यापथ, कुमार्ग, विपरीत मार्ग। उम्मग्गं गच्छंतं। (स.२३४) उम्मग्गं परिचत्ता, जिणमग्गे जो दु कुणदि थिरभावं। (निय. ८६) **-पर** वि [पर] उन्मार्ग में रत, मिथ्यामार्ग

में तत्पर। उग्गो उम्मग्गपरो, उवओगो जस्स सो असुहो (प्रव.ज्ञे.६६) **-य** वि [क] उन्मार्गक, विपरीत मार्ग पर चलने वाला। (सू.२३) सेसा उम्मग्गया सव्वे। (सू. २३)

उम्मुक्क वि [उन्मुक्त] विमुक्त, रहित। (भा.९३) सोस उम्मुक्का। (भा. ९३)

उयर न [उदर] पेट, कुक्षि, उदर। उयरे वसिओ सि चिरं, णव-दस-मासेहिं पत्तेहिं।(भा.३९)**-अग्गिसंजुत्त** [अग्निसंयुक्त] उदराग्नि से युक्त। मंसवसारुहिरादि, भावे उयरग्गिसंजुत्तो। (स.१७९)

उवइट्ठ वि [उपदिष्ट] कथित, प्रतिपादन। (द.२, भा.६, मो.७) दंसणमूलो धम्मो, उवइट्ठो जिणवरेहिं सिस्साणं। (द.२)

उवउत्त/उवजुत्त वि [उपयुक्त] न्यायसंगत, युक्तियुक्त। उवजुत्तो सत्तभंगसब्भावो। (पंचा.७२)

उवएस पुं [उपदेश] उपदेश, शिक्षा, कथन, प्रतिपादन। ववहारस्स दरीसणमुवएसो वण्णिदो जिणवरेहिं। (स.४६) उवएसो (प्र.ए.स.४६) उवएसं (द्वि.ए.निय.१०९)

उवओग पुं [उपयोग] ध्यान, ज्ञान, चैतन्यधारा। (पंचा.१६, स. ८९, १००, प्रव. १५, निय. १०) उवओगो अण्णाणं। (स. ८८) उवओगो (प्र. ए.स.९०, निय.१०) उवओगा (प्र. ब. स. १००) उवओगो/उवओए (द्वि.ब.स.१८१) उवओगस्स (ष.ए.स.९४,९५) उवओगम्हि (स. ए.स. १८२) **-अप्पग** पुं [आत्मक] उपयोगात्मक, उपयोगस्वरूप आत्मा। अह दे अण्णो

कोहो, अण्णुवओगप्पगो हवदि चेदा। (स.११५) -**गुणाधिग** वि [गुणाधिक] उपयोग के गुणों से अधिक। उवओगगुणाधिगो। (स.५७) -**मय** वि [मय] उपयोगमय। जीवो उवओगमयो। (निय.१०) -**लक्खण** पुं न [लक्षण] उपयोग के लक्षण, कारण। (स.२४) सव्वण्हु णाणदिट्ठो जीवो उवओगलक्खणो णिच्चं। (स.२४) -**विसेसिद** वि [विशेषित] उपयोग से निरूपित, जानने रूप परिणामों से कथित। जीवो त्ति हवदि चेदा, उवओगविसेसदो पहू कत्ता। (पंचा.२७) -**सुप्पा** पुं [शुद्धात्मन्] उपयोग से विशुद्ध आत्मा। भावं उवओग-सुद्धप्पा। (स.१८३) आचार्य कुन्दकुन्द ने उपयोग का
लक्षण इस प्रकार प्रतिपादित किया है। उवओगो णाणदंसणं भणिदो। (प्रव. ज्ञे.६३) उपयोग को ज्ञान एवं दर्शन के अतिरिक्त जीव/आत्मा के परिणामों की अपेक्षा शुभ,अशुभ और शुद्ध रूप में भी प्रतिपादित किया गया है। उवओगो जदि हि सुहो, पुण्णं जीवस्स संचयं जादि।असुहो वा तध पावं, तेसिमभावे ण चयमत्थि। (प्रव. ज्ञे. ६४) जीवो य साणुकंपो उवओगो सो सुहो तस्स।।(६५)विसयकसाओ गाढो,दुस्सुदिदुच्चित्तदुट्ठ-गोट्ठिजुदो। उग्गो उम्मग्गपरो उवओगो जस्स सो असुहो।। (६६) विशुद्ध आत्मा के उपयोग को **णाणप्पगमप्पगं** ज्ञानात्मस्वरूप कहा है।

उवकुण सक[उप+कृग्]उपकार करना। (हे.कृगेःकुणः४/६५) उवकुणदि जो वि णिच्चं।(प्रव.चा.४९)

उवगद वि [उपगत] पास आया हुआ, ज्ञात, जाना गया। णिव्वाणमुवगदो वि। (स.६४)

उवगूहण न [उवगूहन] प्रच्छन्न, गुप्त, सम्यग्दृष्टि का एक अङ्ग। जो सिद्धभक्तिजुत्तो, उवगूहणगो दु सव्वधम्माणं। सो उवगूहणकारी, सम्मादिट्ठी मुणेयव्वो। (स.२३३) उवगूहण रक्खणाए य(चा.११)**-ग** वि [क] सम्यग्दृष्टि,उपगूहन अङ्गधारी। (स.२३३)

उवघाद पुं [उपघात] विनाश, विराधन। सच्चित्ताच्चित्ताणं करेइ दव्वाणमविघादं। (स.२३८, २४३)

उवज्झाय पुं [उपाध्याय] उपाध्याय, अध्यापक, पंचपरमेष्ठी में चतुर्थ परमेष्ठी की संज्ञा। रयणत्तयसंजुत्ता, जिणकहियपयत्थदेसयासूरा। णिक्कंखभाव सहिया, उवज्झाया एरिसा होंति।। (निय.७४)

उवट्ठिद वि [उपस्थित] उपस्थित, मौजूदगी, प्राप्त। (प्रव.चा.७,भा.५७)

उवदिट्ठ वि [उपदिष्ट] कथित, प्रतिपादित। णिम्ममत्तिमुवदिट्ठो। (निय.९९)

उवदिस सक [उप+दिश्] उपदेश देना, समझना। ववहारेणुवदिस्सदि। (स.७)

उवदिसद वि [उप+दिशत्] उपदेश दने वाला। उवदिसदा खलु धम्मं। (प्रव. ज्ञे.५)

उवदेस पुं [उपदेश] व्याख्यान, प्ररूपण, प्रवचन, कथन।

एएणुवदेसेण य।(स.२८३) उवदेसेण (तृ. ए. स. २८३) उवदेसे (प्र. ब. प्रव.७१) उवदेसो (प्र. ए. प्रव. ८७)

उवधि पुं [उपाधि] माया, कपट, शरीररूप परिग्रह। (प्रव. चा.३१) आहारे व विहारे, देसं कालं समं खमं उवधिं। (प्रव. चा.३१)

उवभुंज सक [उप-भुज्] भोगना। (प्रव. ज्ञे. ५६) उवभुंजंते (व. प्र.ब. स. १९४)

उवभोग पुं [उपभोग] जिसका बार-बार भोग किया जाता है, उपभोग।उपभोगमिंदिएहिं। (स.१९३) **-णिमित्त** न [निमित्त] उपभोग के कारण। बंधुवभोगणिमित्ते। (स.२१७)

उवभोज्ज वि [उपभोग्य] भोगने योग्य, उपभोग्य, भोगे जाते हुए। उवभोज्जमिंदिएहि।(पंचा. ८२) उवभोज्जे (प्र.ब.स.१७४) उवभोज्जा (प्र.ब.स.१७५)

उवयरण न [उपकरण] साधन, कारण, निमित्त, उपकारी। उवयरणे जिणमग्गे। (प्रव. चा.२५)

उवया सक [उप+या] प्राप्त होना,समीप में जाना।मरण-मुवयादि। (स. १९५) दोसमुवयादि। (प्रव. चा. ४४) उवयादि (व.प्र.ए.)

उवयार पुं [उपकार] 1. भलाई, हित, कल्याण। अणुकंपयोवयारं। (प्रव. चा. ५१) 2. पुं [उपचार] चिकित्सा, शुश्रूषा, लक्षणा, शब्दशक्ति विशेष। भण्णदि उवयारमत्तेण। (स.१०५)

उवरद वि [उपरत] विरत, निवृत्त, रहित। उवरदपावो पुरिसो।

(प्रव. चा. ५९)

उवरिट्ठाण न [उपरिस्थान] ऊर्ध्वस्थान, ऊँचा स्थान। जम्हा उवरिट्ठाणं, सिद्धाणं जिणवरेहिं पण्णत्तं। (पंचा. ९३)

उवरिल्लय वि [उपरित] उपरिम, ऊपरीभाग। (द्वा.२८) भाव अर्थ में **इल्ल** और **उल्ल** प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

उवलंभ पुं [उपलम्भ] लाभ, प्राप्ति। एयत्तस्सुवलंभो। (स.४)

उवलंभ सक [उप+लभ्] प्राप्त करना, जानना। उवलंभंतं (व. कृ. स.२०३)

उवलद्ध वि [उपलब्ध] उपलब्ध, प्राप्त,विज्ञात, ग्रहण किया हुआ। (प्रव. ८१, मो.१, द.१५) उवलद्धं तेहिं कहं।

उवलद्धि स्त्री [उपलब्धि] प्राप्ति, उपलब्धि। (स.१३२) सम्मत्तादो णाणं, णाणादो सव्वभावउवलद्धी। (द.१५)

उववज्ज अक [उप+पद्] उत्पन्न होना। उववज्जिऊण। (सं कृ. भा.२७)

उववास पुं न [उपवास] उपवास, व्रत विशेष, इन्द्रिय संयम के लिए एक उपाय, अनाहार। (प्रव. ६९) उववासादिसु रत्तो। (प्रव. ६९)

उवसंत वि [उपशान्त] क्रोधादि भाव से रहित, नीचे दबा हुआ। उवसंतखीणमोहो। (पंचा.७०)

उवसंपय सक [उप+संपद्] प्राप्त होना। उवसंपयामि सम्मं, जत्तो णिव्वाणसंपत्ती। (प्रव.५)

उवसग्ग पुं [उपसर्ग] उपद्रव, उपसर्ग, व्यवधान, बाधा। णवि इंदिय

उवसग्गा। (निय.१७९) उवसग्गपरीसहेहिंतो। (भा.९५)

उवसप्पिणी स्त्री [उत्सर्पिणी] काल विशेष। (द्वा.२७)

उवसम पुं [उपशम] इन्द्रिय निग्रह, क्रोधादि का अभाव, शान्तपरिणाम। कम्मेण विणा उदयं, जीवस्स ण विज्जदे उवसमं वा। (पंचा. ५६, ५८, स. ३८२) उवसमदमखमजुत्ता (बो.५१)

उवसमण पुं न [उपशमन] औपशमिक भाव, आत्मिक प्रयत्न विशेष। ओदइयभावठाणा णो उवसमणे सहावठाणा वा। (निय.४१)

उवहस सक [उप+हस्] हंसी करना, उपहास करना। (लिं.३)

उवहाण न [उपधान] उपधान, आश्रय। (लिं.८)

उवहि पुं स्त्री [उपधि] परिग्रह, कर्मपरिणाम। (प्रव.चा.७३)

उवाअ पुं [उपाय] हेतु, साधन। जुत्ति त्ति उवाअं त्ति य। (निय.१४२) अंतोवाएण चयहि बहिरप्पा। (मो.४)

उवादेय वि.[उपादेय] ग्राह्य, ग्रहण करने योग्य। हेयमुवादेयमप्पणो अप्पा। (निय.३८) सगदव्वमुवादेयं। (निय.५०)

उवासेय वि [उपासेय] सेवन करने योग्य। (प्रव.चा.६३)

उवे सक [उप+इ] प्राप्त करना। पडिए ण पुणोदयमुवेई। (स.१६८)

उव्वह सक [उद्+वह] धारण करना, ऊपर उठाना। सम्मत्तमुव्वहंतो झाणरओ होइ जोई सो। (मो.५२) उव्वहंतो (व.कृ.)

उव्वेग पुं [उद्वेग] व्याकुलता, शोक, अठारह दोषों में अंतिम दोष विम्हयणिद्दाजणुव्वेगो। (निय.६)

उसह पुं [ऋषभ] प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव। (निय. १४०, ती.भ.३) उसहादिजिणवरिंदा। (निय.१४०)

उस्सास पुं [उच्छ्वास] श्वास, जीवन का एक प्राण। सो जीवो पाणा पुण, बलमिंदियमाऊ उस्सासो। (पंचा.३०) उस्सासाणं (ष.ब.भा.२५) **-मेत्त** न [मात्र] एक उच्छ्वास मात्र। तं प्पाणी तिहिं गुत्तो, खवेइ उस्सासमेत्तेण। (प्रव.चा.३८)

उहय स [उभय] दो, दोनों। (स.४२, पंचा.१४)

ए

ए अ [ए] इस तरह। (निय.११५) जयदि खु ए चहुविहकसाए। (निय.११५)

ए सक [आ+इ] प्राप्त करना, आना। ण य एइ विणिग्गहिउं। (स. ३७५-३८१) एदि (व.प्र.ए. प्रव. ७८) हरिहरतुल्लो वि णरो, सग्गं गच्छेइ एइ भवकोडी। (सू.८)

एअ स [एतत्] यह। एए सव्वे भावा। (स. ४४) एए (प्र.ब.चा.४) एएण (तृ. ए. स. ८२, २८३ सू.१६, भा.८७) एएहि/एएहिं (तृ.ब.स.५७,७९,चा.१२) एएसु (स.ब.स.९०) एएसु य उवओगो (स.९०)

एइंदिय पुं न [एकेन्द्रिय] एकेन्द्रिय, जाति नामकर्म का एक भेद, जिसके उदय से एकेन्द्रियों में जन्म होता है। (पंचा. १११, ११२)

एक स [एक] एक, अकेला। एको चेव महप्पा। (पंचा. ७१) एकस्स

दु परिणामो (स.१३८, १४०) एकम्मि चेव समए। (प्रव. ज्ञे.१०)

एक्क स [एक] एक, अकेला। एक्कं खलु तं भत्तं।(प्रव. चा. २९) **-अट्ठ** पुं [अर्थ] एकरूप,एक पदार्थ।(पंचा.३४,स.२७) **-काय** पुं [काय] एक शरीर। सव्वत्थ अत्थि जीवो, ण य एक्को एक्ककाय एक्कट्ठो।(पंचा.३४)**-ठाण** न [स्थान] एकस्थान, एक जगह।दिण्णण्णं एक्कठाणम्मि।(सू.१७)**-एक्क** स [एक] एक-एक, प्रत्येक। (भा.३७) **-मेत्त** स [मात्र] एकमात्र, केवल एक। (स.२०४) तं होदि एक्कमेत्तपदं। (स.२०४)

एग स [एक] अकेला, एक। (पंचा.११२,स.२०३,प्रव.ज्ञे.७२ भा. ५९ द. १८) एगं जिणस्स रूवं। (द. १८) एगो य मरदि जीवो, एगो य जीवदि सयं। एगस्स जादि मरणं, एगो सिज्झदि णीरयो।। (निय.१०१) **-अंत** पुं [अन्त] एकान्त,तत्त्व,प्रमेय,विशेष। एगंतेण हि देहो। (प्रव. ६६) **-त्त** वि [त्व] 1. एकत्व, एकरूप, पहले जैसा। एगत्तप्पसाधगं होदि। (पंचा.४९) 2. एकत्व, एक भावना का नाम। (द्वा.२) अद्धुवमसरणमेगत्त। एक्को करेदि कम्मं एक्को हिंडदि य दीहसंसारे। एक्को जायदि मरदि य तस्स फलं भुंजदे एक्को।। (द्वा. १४)

एगागी वि [एकाकी] अकेला, असहाय। **केई मज्झं ण अहयमेगागी।** (मो.८१)

एतदट्ठ वि [एतदर्थ] इस प्रयोजन हेतु। (पंचा.१०४)

एत्तो अ [इतः] इससे,यहां से। (स.५४, २५०) णाणी एत्तो दु विवरीदो।

एद स [एतत्] यह। (स. २७०, प्रव ८५) एदे जीवणिकाया। (पंचा. ११२) जीवो चेव हि एदे। (स.६२) एदे (प्र.ब.स. ६२) एदाणि (प्र. ब. प्रव.८५) एदम्हि (स.ए.स.२०६) एदेण (तृ. ए. स. १७६) एतत् का प्रथमा एकवचन में एस/एसो रूप बनते हैं। (पंचा. १००, स. ५९, १५५) स्त्रीलिङ्ग में एसा (स.१९)एदेसिं (च./ष. ब. निय. १७) एदेसिं वित्थारं।

एमेव अ [एवमेव] इस तरह, ऐसा ही, इसी प्रकार। पज्जएसु एमेव णायव्वो। (स.३६५) एमेव य ववहारो। (स.४८)

एय स [एक] एक, अकेला। (निय.२७, पंचा.८१) एयरसवण्णगंधं। (पंचा.८१) **-अग्ग** पुं [अग्र] एकाग्र, स्थिर। (प्रव. चा.३२)**-अट्ठ** पुं [अर्थ] एकार्थ, एकार्थवाची। (स.३०४) **-अंत** पुं [अन्त] एकान्त, एक पक्ष। (स.३४५, द्वा.४८) अण्णो व णेयंतो। (स.३४६) **-अंतिय** न [अन्तिक] ऐकान्तिक, मिथ्यात्मक। (प्रव.५९) सुहं त्ति एयंतियं भणिदं। (प्रव.५९) **-त्त** वि [त्व] एकत्व, एक भाव। (पंचा.९६, स.३) **-पदेस** पुं [प्रदेश] एक प्रदेश, एक हिस्सा। (निय.३६)

एयत्तु अ [दि] इतने। (स.२२) एयत्तु असंभूदं। (स.२२)

एयारस त्रि [एकादश] ग्यारह। (द्वा.६८)

एरिस वि [ईदृश] ऐसा, इस तरह का। (निय.७१, स.७५, बो.९,४४,५२) जिणमग्गे एरिसा पडिमा। (बो.९) **-गुण** पुं न [गुण] ऐसे गुण, इस प्रकार के गुण। एरिसगुणेहिं सव्वं। (बो.३८)

एरिसी वि [ईदृशी] ऐसी, इस तरह की। एरिसी दु सुई। (स.३३६)

एव अ [एव] ही, तरह, समान। जइया स एव संखो। (स.२२२) यहां एव समानता के अर्थ में प्रयोग हुआ है। तस्सेव पज्जाया। (पंचा.११) में ही अर्थ में है।

एवं अ [एवम्] इस तरह, तथा, क्योंकि। एवं सदो विणासो। (पंचा.१९) सो आहारओ हवइ एवं। (स.४०५, निय.१०६, चा.६) **-विह** वि [विध] इस प्रकार, इस विधि से। (स.४३, प्रव.ज्ञे.१९) एवंविहा बहुविहा। (स.४३)

एसण न [एषण] अन्वेषण, ग्रहण, अचौर्यव्रत की एक भावना, प्राप्ति। (चा.३४) एसणसुद्धिसउत्तं। (चा.३४) **-सुद्धि** स्त्री [शुद्धि] अन्वेषण शुद्धि, आहारशुद्धि, एक भावना। (चा.३४)

एसणा स्त्री [एषणा] एक समिति का नाम, जिसमें निर्दोष आहार आदि क्रियाओं को किया जाता है। (निय.६३) कदकारिदाणुमोदणरहिदं तह पासुगं पसत्थं च। दिण्णं परेण भत्तं, समभुत्ती एसणासमिदी।। (निय.६३)

एहिअ/एहिग वि [ऐहिक] इस लोक सम्बन्धी, इस जन्म सम्बन्धी। (प्रव.चा.६९) जदि एहिगेहि कम्मेहिं। (प्रव.चा.६९)

एहे वि [ईदृक् अपभ्रंश] इसमें, इसके जैसा। एहे गुणगणजुत्तो। (बो.३५)

ओ

ओगाढ वि [अवगाढ] व्याप्त, भरा हुआ, गहरा। (पंचा.६४) ओगाढगाढणिचिदो, पोग्गलकाएहिं सव्वदो लोगो। (प्रव.ज्ञे.७६, पंचा.६४)

ओगास पुं [अवकाश] जगह, स्थान। अण्णोण्णं पविसंता, दिंता ओगासमण्णमण्णस्स। (पंचा.७)

ओगिण्ह सक [अव+ग्रह्] लेना, ग्रहण करना, जानना। (प्रव.५५) ओगिण्हित्ता जोग्गं, जाणदि वा तण्ण जाणादि। (प्रव.५५) ओगिण्हित्ता (सं.कृ.)

ओग्गह पुं [अवग्रह] इन्द्रियजन्य ज्ञान, सामान्य ज्ञान। (प्रव.२१) अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा ये चार सामान्य इन्द्रिय द्वारा होने वाले ज्ञान हैं। सो णेव ते विजाणदि, ओग्गहपुव्वाहिं किरियाहिं। (प्रव.२१)

ओच्छण्ण वि [अवच्छन्न] आच्छादित, ढँका हुआ। (प्रव.८३) खुब्भदि तेणोच्छण्णो, पय्या रागं व दोसं वा। (प्रव.८३) मंसविलित्तं तएण ओच्छण्णं। (द्वा.४३)

ओदइय/ओदयिग पुं न [औदयिक] औदयिक भाव, कर्मविपाक। (प्रव.४५) पुण्णफला अरहंता, तेसिं किरिया पुणो हि ओदयिगा। (प्रव.४५) ओदइयभावठाणा। (निय.४१)

ओधि पुं स्त्री [अवधि] 1. रूपी पदार्थों का अतीन्द्रिय ज्ञान, अवधिज्ञान। (पंचा.४१) आभिणिसुदोधिमणकेवलाणि। (पंचा.४१) 2.सीमा, मर्यादा, परिमाण।

ओरालिय न [औदारिक]औदारिक शरीर विशेष। (प्रव.ज्ञे. ७९, बो.३८) औदारिक, वैक्रियिक, तैजस, आहारक और कार्मण ये पांच शरीर पुद्गल द्रव्यात्मक हैं। ओरालिओ य देहो। (प्रव.ज्ञे.७९)

ओसह न [ओषध] दवा, औषधि। (द्वा.८, द.१७) जिणवयणमोसहमिणं। (द.१७)

ओहि पुं स्त्री. [अवधि] रूपी पदार्थों का अतीन्द्रिय ज्ञान, अवधिज्ञान, दर्शन का एक भेद। (पंचा.४२, स.२०४, प्रव.चा.३४, निय.१२,१४) देवा य ओहिचक्खू। (प्रव.चा.३४)

क

कंख सक [कांक्ष्] चाहना, इच्छा करना। (स.२१६) तं जाणगो दु णाणी, उभयं पि ण कंखइ कया वि।(स.२१६)

कंखा स्त्री [कांक्षा] आकांक्षा, इच्छा, अभिलाषा। कंखामणागयस्स (स. २१५) जो दु ण करेदि कंखं, कम्मफलेसु तह सव्वधम्मेसु। (स.२३०)

कंचण न [काञ्चन] सोना, स्वर्ण। (शी.९) जह कंचणं विसुद्धं, धम्मइयं खंडियलवणलेवेण। (शी.९)

कंड पुं न [काण्ड]1. बाण,सर।(बो.२०) जह ण वि लहदि हु लक्खं रहिओ कंडस्स वेज्झयविहीणो। (बो.२०) 2. न [काण्ड] पर्व, सन्धिस्थल, गांठ।

कंति स्त्री [कान्ति] कान्ति, तेज, शोभा, सौन्दर्य। रूवसिरिगव्विदाणं, जुव्वणलावण्णकंतिकलिदाणं। (शी.१५)

कंद पुं [कंद] कन्द, जमीन में पैदा होने वाले। (भा.१०३)

कंदप्प पुं [कंदर्प] काम सम्बन्धी चेष्टा, उत्तेजनात्मक प्रवृत्ति। कंदप्पमाइयाओ। (भा.१३, लिं. १२)

कक्कस वि [कर्कश] कठोर, प्रचण्ड, कर्कश। पेसुण्णहासकक्कस। (निय.६२)

कक्ख पुं [कक्ष] कांख, हाथों का सन्धिस्थल।(सू.२४) थणंतरे णाहिकक्खदेसेसु। (सू.२४)

कज्ज वि [कार्य] 1. करने योग्य, कर्म। (निय.३) णियमेण य तं कज्जं तं णियमं णाणदंसणचरित्तं। (निय.३) 2. न [कार्य] कार्य, प्रयोजन, उद्देश्य। (निय. २५) **-परमाणु** पुं [परमाणु] कार्यपरमाणु। खंधाणं अवसाणो, णादव्वो कज्जपरमाणू। (निय.२५)

कट्ठ न [काष्ठ] 1. काठ, लकड़ी। (बो.५५) सिलकट्ठे भूमितले। (बो.५५) 2. न [कष्ट] दुःख, पीड़ा, व्यथा। (लिं.२२) पालेहिं कट्ठसहियं। (लिं.२२)

कडय पुं न [कटक] कंगन, कड़ा। (स.१३०) अमयमया भावादो, जह जायंते तु कडयादी। (स.१३०) जह कडयादीहिं दु। (स.३०८) कडयादीहिं (तृ.ब.)

कडुय पुं [कटुक] कड़ुवा, तिक्त। महुरं कडुयं बहुविहमवेयओ तेण सो होई। (स.३१८) णिट्ठुरकडुयं सहंति सप्पुरिसा। (भा.१०७)

कणअ/कणग/कणय न [कनक] सोना, स्वर्ण। (स. १८४, २१८, १३०, बो.४६) णो लिप्पदि रएण दु, कद्दममज्झे जहा कणयं। (स.२१८) कणयभावं ण तं परिच्चइ। (स. १८४)

कत्ता वि [कर्त्ता] कर्त्ता, करने वाला, निर्माता, सम्पादक। (स.६१, १२६, भा. १४७, निय. ७७-८१, स. ज.वृ. ९१) जं कुणदि

भावमादा,कत्ता सो होदि तस्स भावस्स। (स.ज.वृ.९१) कत्ता भोत्ता आदा, पोग्गलकम्मस्स होदि ववहारा। (निय. १८) कत्तारं (द्वि.ए.)

कत्ति वि [कर्तृ] करने वाला, सम्पादक। अणुमंता णेव कत्तीणं। (निय.७७) कत्तीणं (ष.ब.)

कद वि [कृत] किया हुआ, बनाया हुआ। (स.२७, १०५, निय.६३, भा. १३३) जीवेण कदं कम्मं। (स. १०५) जोधेहिं कदे जुद्धे, राएण कदं ति जंपदे लोगो। (स.१०६)

कद्दअ अक [दि] नष्ट करना, क्षय करना। पेच्छंतो कद्दए कालो। (द्वा.१०)

कद्दम पुं [कर्दम] कीचड़,रज।(स.२१८,२१९)कद्दममज्झे जहा लोहं। (स.२१९)

कमंडल पुं न [कमण्डल] साधुओं का लकड़ी या मिट्टी का पात्र। (निय. ६४) पोत्थइ कमंडलाइं।

कमलिणी स्त्री [कमलिनी] पद्मिनी, कमलिनी। (भा. १५३) जह सलिलेण ण लिप्पइ कमलिणिपत्तं सहावपयडीए। (भा. १५३)

कम्म पुं न [कर्मन्] कर्म,जीव के द्वारा ग्रहण किया गया अत्यन्त सूक्ष्म पुद्गलपरिणाम। (पंचा.५८, स. १९, निय.१०६, भा. १०७, मो. ५६, बो. ११) जो कम्मजादमइओ। (मो.५६) **-अट्ठ** वि [अष्ट] 1. अष्टकर्म, आठकर्म।(बो.११,५२) ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु,नाम, गोत्र और अन्तराय। 2. पुं [अर्थ] कर्म के लिए, कर्म के हेतु। **-उदय** पुं

[उदय] कर्म-उदय, कर्म का फल। ता कम्मोदयहेदूहिं, विणा जीवस्स परिणामो। (स.१३८) -**उवदेस** वि [उपदेश] कर्म का व्याख्यान। (स.२) -**उवाहि** पुं स्त्री [उपाधि] कर्मजनित विशेषण। (निय.१५)-**कलंक** पुं [कलङ्क] कर्मदोष,कर्मरूपीपाप।(भा.५) -**क्खय** वि [क्षय] कर्मक्षय, कर्मरहित। (भा. ८४, सू.१२, बो. १५, स.१५६) -**गंठि** पुं स्त्री [ग्रन्थि] कर्मग्रन्थि, कर्मरूप परिग्रह, कर्म की गांठ। आदेहि कम्मगंठी। (शी.२७) -**गुण** पुं न [गुण] कर्मगुण। (स.८१) -**ज** वि [ज] कर्मजनित। (निय.१८) -**जाद** वि [जात] कर्मजन्य, कर्म से उत्पन्न। (मो. ५६) जो कम्मजादमइओ। (मो.५६) -**त्त** वि [त्व] कर्मत्व, कर्मपना। (स.९१) कम्मत्तं परिणमदे। -**पयडि** स्त्री [प्रकृति] कर्मस्वभाव, कर्मप्रकृति। एमेव कम्मपयडी। (स. १४९) कम्मपयडी णियदं। (भा. ५४) -**परिणाम** पुं [परिणाम] कर्म परिणाम। (स.१३९) -**परि मोक्खं** पुं [परिमोक्ष] कर्म से पूर्णमुक्त।(स.२०५) -**फल** न [फल] कर्मफल। (स.२३०) सव्वे खलु कम्मफलं थावरकाया तसा हि कज्जजुदं। (पंचा.३९) -**बंध** पुं [बन्ध] कर्मसंयोग, कर्मपुद्गलों का जीव के साथ दूध-पानी की तरह मिलना। (स. २२९) -**बीय** न [बीज] कर्मबीज। (भा.१२५) जह बीयम्मि य दड्ढे, णवि रोहइ अंकुरो य महीवीढे। तह कम्मबीजदड्ढे, भवंकुरो भावसवणाणं।। -**भाव** पुं [भाव] कर्मभाव। जीवस्स कम्मभावे। (स.१६८) उवओगप्पओगं बंधंते कम्मभावेण। (स. १७३) -**मज्झगद** वि [मध्यगत] कर्मों के मध्यगत, कर्मों के बीच।

(स.२१९) **-मल** पुं न [मल] कर्ममल। (भा.७४,१०६) **-मही** स्त्री [मही] कर्मभूमि।(निय.१६)कम्ममहीरुहमूलच्छेद-समत्थो।(निय.११०)**-रय** पुं न [रजस्] कर्मरज, कर्मधूलि। कम्मरएण णिएण वच्छण्णो। (स.१६०) लिप्पदि कम्मरएण दु, कद्दममज्झे जहा लोहं । (स. २१९) **-वग्गण** पुं न [वर्गणा] कर्मवर्गणा। सुहुमा हवंति खंधा, पावोग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो। (निय.२४) वग्गणा शब्द का प्रयोग स्त्रीलिङ्ग में ही होता है। (देखो - पाइयसद्दमहण्णव पृ. ७३७) परंतु नियमसार में यह प्रयोग पुंलिङ्ग में हुआ है। **-विणासण** वि [विनाशन] कर्मों का नाश करने वाला। (निय. १४१) कम्मविणासणजोगो। (निय.१४१) **-विमुक्क** वि [विमुक्त] कर्मरहित। कम्मविमुक्को अप्पा, गच्छदि लोयग्गपज्जंतं। (निय.१८२) अप्पो वि य परमप्पो, कम्मविमुक्को य होइ फुडं। (भा. १५०) **-विवाग** पुं [विपाक] कर्म परिणाम, सुख-दुखदि भोगरूप कर्मफल। उदयं कम्मविवागं। (स.२००` **-सरीर** न [शरीर] कर्मशरीर। (स. १६९) कम्मसरीरेण दु ते बद्धा सव्वे वि णाणिस्स।। (स. १६९) कम्मो (प्र. ए. स. २२५, २२७) कम्मं (प्र. ए. स. २५४) कम्मं च ण देसि तुमं। कम्माणि (द्वि. ब. स. ३११) कम्माइं (द्वि. ब. स. ३१९) कम्मेण (तृ. ए. मो. १) कम्मणा (तृ. ए. स. ३६७) जीवा वज्झंति कम्मणा जदि हि। कम्मेहि/कम्मेहिं (तृ. ब. स. ३३२) कम्मेहि दु अण्णाणी, किज्जदि णाणी तहेव कम्मेहिं। कम्मस्स (च./ष. ए. स. ७५) कम्मणो (ष. ए. निय. १०६) कम्मस्स य परिणामं, णोकम्मस्स य

तहेव परिणामं।कम्मादो (पं.ए.नियं.१११) कम्माण/ कम्माणं (च./ष.ब.) कम्माणं कारगो होदि। (स.९२) कम्मम्हि (स.ए.स. १०४) दव्वगुणस्स य आदा, ण कुणदि पुग्गलमयम्हि कम्मम्हि। कम्मे (स.ए.स.१८२) अट्ठवियप्पे कम्मे। (स.१८२)

कय वि [कृत] किया हुआ। (स. २८७, भा. १०६) कह ते मरणं कयं तेहिं। (स. २४८) **-त्थ** वि [अर्थ] कृतकृत्य, कृतार्थ। (शी. २७) तं छिंदंति कयत्था। (शी. २७)

कयलि स्त्री [कदलि] केला का तना, केला। (स. २३८, २४३) तालीतलकयलिवंसपिंडीओ। (स. २४३)

कयाइ/कयावि अ [कदापि] कभी भी। (स. २१६, ३०२) उभयं पि ण कंखइ कयावि। (स. २१६)

कर सक [कृ] करना, बनाना। (स. १००, १११, निय. १०३) ते जदि करंति कम्मं। (स. १११) अप्पवियप्पं करेइ कोहो हं। (स. ९४) करिंतो (व. कृ. स. ९२) अप्पाणं वि य परं करिंतो सो (स.९२) करमाणो (व. कृ. लिं. ६,९) करमाणो लिंगरूवेण। करेज्ज (वि.प्र.ए.निय.१५४) पडिकमणादिं करेज्ज झाणमयं। करिज्ज (वि. प्र. ए. स. ९९) करिज्ज णियमेण तम्मओ होदि।

कर पुं [कर] हाथ, हस्त। (भा. ७५) करंजलिमालाहिं। (भा.७५)

करण न [करण] क्रिया, कार्य, इन्द्रिय, साधन, प्रयोजन, निमित्त। (स. ९८, निय. ११३, द. १४, भा. ९०) करणाणि य कम्माणि। (स. ९८) तस्स णाणाविहेंहि करणेहिं। (स. २३९) मा जणरंजकरणं। (भा. ९०) **-णिग्गह** पुं [निग्रह] इन्द्रिय निरोध।

वदसमिदिसीलसंजमपरिणामो करणणिग्गहो भावो। (निय. ११३) **-भूद** वि [भूत] करणस्वरूप, साधनरूप। (स.६६) एदेहिं य णिव्वत्ता जीवट्ठाणाउ करणभूदाहिं। **-सुद्ध** वि [शुद्ध] करण से निर्दोष, कार्यो से निर्दोष, इन्द्रियों के कारणों से पवित्र। णाणम्मि करणसुद्धे, उब्भसणे दंसणं होई। (द.१४)

करुण वि [करुण] दयाभाव, कृपा, करुणा। करुणभावसंजुत्ता। (भा.१५८)

कल वि [कल] शरीर, सम्बन्ध, कोलाहल, कलह। (मो.६) **-चत्त** वि [त्यक्त] शरीर के सम्बन्ध से रहित। (मो.६)

कलि पुं [कलि] युग विशेष, कलयुग। कलिकलुसपावरहिया। (द.६)

कलुस वि [कलुष] मलीनता, कालिमा। (द.६) कलिकलुसपावरहिया। (द.६) **-उवओग** पुं [उपयोग] मलिन उपयोग। जो दु कलुसोवओगो। (स.१३३)

कलुसिअ वि [कलुषित] कालिमायुक्त, पापयुक्त। (भा.४४) देहादिचत्तसंगो, माणकसाएणकलुसिओ धीर। (भा.४४)

कलेवर न [कलेवर] शरीर, देह। गहि उज्झियाइं मुणिवर, कलेवराइं तुमे अणेयाइं। (भा.२४)

कल्लाण पुं न [कल्याण] हित, सुख,निर्वाण, मोक्ष। (भा. १३५, १००, द. ३३) कल्लाणसुहणिमित्तं परंपरा तिविहसुद्धीए। (भा. १३५) **-परंपरा** स्त्री [परंपरा] कल्याण की परम्परा, विधि पूर्वक कल्याण। कल्लाणपरंपरया कहंति जीवा विसुद्धसम्मत्तं। (द.३३)

कवाड पुं न [कपाट] किवाड, द्वार, दरवाजा। (द्वा. ६१) वज्जिय सम्मत्तदिढकवाडेण। (द्वा.६१)

कसाअ/कसाय पुं [कषाय] कषाय,क्रोध,मान,माया और लोभ ये चार कषायें हैं। आत्मा को जो कसे, दुःख दे, वह कषाय है। सव्वे कसाय मोत्तुं।(भा.२७) णाहं कोहो माणो, ण चेव माया ण होमि लोहो हं। (निय..८१) **-उदय** पुं [उदय] कषाय का उदय। (स. १३३)-**कम्म** पुं न [कर्मन्] कषाय कर्म।(स.२८१) **-णाण** न [ज्ञान] कषाय ज्ञान। (बो.३२) **-दढमुद्दा** स्त्री [दृढमुद्रा] कषाय की दृढ़ मुद्रा। (बो.१८) **-भाव** पुं [भाव] कषाय भाव। ण य रायदोसमोहं, कुव्वदि णाणी कसायभावं वा। (स.२८०) **-मल** पुं न [मल] कषायमल, कषायरूपी पाप। (बो.१) **-विसअ** पुं [विषय] कषाय विषय,कषाय से उत्पन्न भोग, कषाय के कारण। तह भावेण ण लिप्पदि, कसायविसएहिं सप्पुरिसो। (भा.१५३)

कह/कहं अ [कथम्] कैसे, किस तरह, क्यों, किसलिए। (निय.१३४, स.२४९,सू.२४) ते कह हवंति जीवा। (स.६८) ताहिं कहं भण्णदे जीवो। (स.६६)

कह सक [कथय्] कहना, बोलना। कहयंति (व.प्र.ब.निय.१४५) कहंति जीवा विसुद्धसम्मत्तं। (द.३३) कहंता (व.कृ.द.९) तस्स य दोसकहंता।

कहा स्त्री [कथा] कथा, वार्ता,। (स.३, निय.६७) आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार में कथा के तीन भेद किये हैं-काम,भोग और बन्ध। सव्वस्स वि काम-भोग-बंधकहा। (स.४) नियमसार में

स्त्रीकथा, राजकथा, चोरकथा, और भक्त कथा (भोजन कथा) ये चार भेद किये हैं। थी-राज-चोर-भत्तकहादिवयणस्स पावहेउस्स। (निय.६७)

कहिय वि [कथित] उपदेशित, प्रतिपादित, कथित। (निय.१३९, बो.६०, मो.१८) परिचत्ता जोण्हकहियतच्चेसु। (निय.१३९) सुद्धं जिणेहि कहियं। (मो.१८)

का सक [कृ] करना। काहिदि/काहदि (भवि.प्र.ए.मो.९९, निय.१२४) काउं/कादुं (हे.कृ.स.२२०) सक्कदि काउं जीवो। (निय.११९) काऊण (सं.कृ.निय.१४०, लिं.१,१३,द.१) काऊण णमुक्कारं। (द.१) कायव्वो/कायव्वं (वि.कृ.निय.११३, भा.९६, सू.७,लिं.२) खेडे वि ण कायव्वं। (सू.७) अणवरयं चेव कायव्वो। (निय.११३)

काउस्सग्ग पुं [कायोत्सर्ग] शरीर के प्रति ममत्व भाव रहित। (निय.७०)

काम पुं [काम] इच्छा, अभिलाषा, वासना, चार पुरुषार्थों में एक, इन्द्रिय अनुराग। (स.४,भा.१६३) अत्थो धम्मो य काममोक्खो य। (भा.१६३)

काअ/काय पुं [काय] 1.शरीर, देह। 2.प्रदेश, समूह, राशि। (स.२४०, निय.६८, बो.३८) भणिओ सुहुमो काओ। (सू.२४) **-कलेस** पुं [क्लेश] शरीर की पीड़ा, शारीरिक दुःख। कायकिलेसो। (निय.१२४) **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] काय की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना, शरीर की प्रवृत्तिमात्र को रोकना।

बंधणछेदणमारणआकुंचण तह पसारणादीया। कायकिरियाणियत्ती, णिद्दिट्ठा कायगुत्ति त्ति। (निय.६८) **-चेट्ठा** स्त्री [चेष्टा] शारीरिक चेष्टा, शरीर की क्रिया। ण कायचेट्ठाहिं सेसाहिं। (स.२४०,२४५) **-त्त** वि [त्व] प्रदेशत्व। कालस्स ण कायत्तं। (निय.३६) - **विसय** पुं [विषय] शारीरिक कामभोग, शरीर की वासना, शरीर की इच्छा, स्पर्शनेन्द्रिय के विलास। ण य एइ विणिग्गहिउं, कायविसयमागयं फासं। (स.३७९)

कारइद/कारयिद वि [कारयित] करवाया गया, कराने वाला। कत्ता ण हि कारइदा। (निय.७७-८१)

कारक/कारग वि [कारक] करने वाला, कर्त्ता। (स.२८०,२८३,२८४) अण्णाणमओ जीवो कम्माणं कारगो होदि। (स.९२)

कारण न [कारण] हेतु, निमित्त, प्रयोजन। (स.१६५,निय.२५, भा.८७) एएण कारणेण दु।(भा.८७)-**णिमित्त** न [निमित्त] कारण विशेष। (द.२९) कम्मक्खय कारणणिमित्तो। (द.२९) **-भूद** वि [भूत] कारणभूत, प्रयोजनभूत। भावो कारणभूदो (भा.२,६६)

काल पुं [काल] समय, अवसर, द्रव्य का एक भेद। (स.२८८, पंचा.२४, भा.१०) पत्तो सि अणंतयं कालं। (भा.१०) कालस्स ण कायत्तं, एयपदेसो हवे जम्हा। (निय.३६) काल द्रव्य के दो भेद हैं- निश्चयकाल और व्यवहार काल। निश्चयकाल में उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल आते हैं। व्यवहारकाल समय,अवलि या भूत,

भविष्यत् और वर्तमान के भेद रूप है। (निय.३१) समय, निमेष, काष्ठा, कला, नाड़ी, दिन, रात, मास, ऋतु, अयन और वर्ष यह सब व्यवहार काल है। समयो णिमिसो कट्ठा, कला य णाडी तदो दिवारत्ती। मासोदुअयणसंवच्छरो त्ति कालो परायत्तो। (पंचा.२५) **-अट्ठ** पुं न [अर्थ] कालार्थ, काल विशेष, काल में स्थित। (भा.३५) परिणामणामकालट्ठं। (भा.३५)

कालायस न [कालायस] लोहे की बेड़ी। (स.१४६) सोवण्णियम्हि णियलं, बंधदि कालायसं च जह पुरिसं। (स.१४६)

कालिज्जय न [कालेय] यकृत, जिगर, हृदय का मांसपिण्ड, कलेजा। (भा.३९)

कालिया स्त्री [कालिका] मेघ समूह, बादल। रागादि कालिया तह विभाओ। (स.ज.वृ.२१९)

कालुस्स न [कालुष्य] मलिनता, कलुषपन, कलुषता। कालुस्समोहसण्णा। (निय.६६)

कि सक [कृ] करना। किज्जदि/किज्जइ (स.३३२, ३३४) किच्चा (सं.कृ.निय.८३, प्रव.४)

कि/किं स [किम्] कौन, क्या, क्यों। ता किं करोमि तुमं। (स.२६७, भा.५)

किंचि/किंचिवि अ [किञ्चित्/किञ्चिदपि] कुछ भी, कोई, थोड़ा। (स.३८, भा.१०३, पंचा.५९) उप्पादेदि ण किंचिवि। (स.३१०) जम्हा सत्थं ण याणए किंचि। (स.३९०)

किंणर पुं [किन्नर] व्यन्तर देवों का एक समूह। (भा.१२९) किंणर-

किंपुरिसअमरखयरेहिं। (भा.१२९)

किंपुरिस पुं [किंपुरुष] व्यन्तर देवों का एक भेद। (भा.१२९)

किंते अ [किंते] जो कि,यतः। (भा.६९)

किं बहुणा अ [किं बहुना] बहुत क्या। (निय.११७)

किं वा अ [किं वा] और क्या ? किं वा बहुएहिं लाविएहिं। (भा.३८)

किण्णग वि [कृष्णक] कालापन,कालिमायुक्त,कृष्णपन। (स.२२०) संखस्स सेदभावो, ण वि सक्कदि किण्णगो काउं। (स.२२०)

किण्ह पुं [कृष्ण] काला, श्याम। (स.२२२) **-भाव** पुं [भाव] कृष्णभाव, कालापन, कालास्वभाव। गच्छेज्ज किण्हभावं। (स.२२२)

कित्त सक [कीर्त्तय्] स्तुति करना, गुणगान करना। कित्तिस्से (भवि.उ.ए.ती.भ.२)

कित्तिय वि [कीर्तित] स्तुत्य, प्रशंसित। (ती.भ.७)

कित्तियं/कित्तिया अ [कियन्तं] कितने। (भा.३७,४४) अत्तावणेण आदो, बाहुबली कित्तियं कालं। (भा.४४)

किमि पुं [कृमि] कीट, कीड़ा, द्वीन्द्रिय जीव विशेष, पित्त, मूत्र, रुधिर आदि के जीव। (भा.३९) **-जाल** न [जाल] कीटसमूह। (भा.३९) **-संकुल** न [संकुल] कीट समूह से भरा हुआ, कीड़ों से व्याप्त। किमिसंकुलेहिं भरियं। (द्वा.४३)

किर अ [किल] निश्चय ही। एएणच्छेण किर। (स.३३८)

किरण पुं न [किरण] रश्मि, प्रभा। माणिक्ककिरणविप्फुरिओ।

(भा.१४४)

किरिया स्त्री [क्रिया] क्रिया, व्यापार, प्रयत्न। कायकिरियाणियत्ती। (निय.६८,७०) **-वाइ** पुं [वादिन्] क्रियावादी। (भा.१३६) असियसयकिरियावाई।

किवया स्त्री [कृपया] कृपा, दया, अनुकम्पा। (प्रव.चा.ज.वृ.६८, पंचा.१३७)

किसि स्त्री [कृषि] खेती, कृषि। (लिं.९) **-कम्म** पुं न [कर्मन्] कृषिकर्म, खेती। (लिं.९)

किह अ [कथम्] कैसे, क्यों। (स.१४५, निय.१३८) किह तं होदि सुसीलं। (स.१४५)

कीर सक [कृ] करना, कीरइ/कीरए (प्रे.व.प्र.ए.स.२६३, भा.४८, द.२२) कीरइ अज्झवसाणं। (स.२६३) किं कीरइ दव्वलिंगेण। (भा.४८) बाहिरगंथस्स कीरए चाओ। (भा.३)

कु सक [कृ] करना। कुज्जा (वि./आ.निय.१४८) णाऊण धुवं कुज्जा। (मो.६०) कुज्जा अप्पे सभावणा। (मो.७१) (हे. वर्तमानापञ्चमीशतृषु वा ३/१५८, ज्जा-ज्जे ३/१५९)

कु अ [कु] कुत्सित, निर्दोष, मिथ्या। (चा.१३) **-णय** न [नय] कुनय, मिथ्यानय। (भा.१४०) कुणयकुसत्थेहिं मोहिओ जीवो। (भा.१४०) **-तित्थ** वि [तीर्थ] कुतीर्थ, मिथ्यातीर्थ। (द्वा.३२) **-दंसण** न [दर्शन] मिथ्यादर्शन। कुदंसणे सद्धा। (चा.१३) **-द्दाण** पुं न [दान] कुदान, खोटा दान। कुद्दाणविरहरहिया। (बो.४५) **-देव** पुं [देव] कुदेव,खोटेदेव,राग-द्वेष-मोह से सहितदेव,

वीतरागता से रहित देव। (भा.८) कुदेवमणुवाइए। (भा.८) -**देवत्त** वि [देवत्व] कुदेवत्व, कुदेवापना, कुदेवों की पर्याय, भवनत्रिक देवत्व। होऊण कुदेवत्तं, पत्तोसि अणेयवावारो। (भा.१६)-**धम्म** पुं [धर्मन्]कुधर्म,खोटाधर्म।(द्वा.३२) -**मद** न [मद] कुमद। (शी.१४) -**मरण** न [मरण] कुमरण, खोटामरण। (भा.३२) -**लिंग** न [लिङ्ग] कुलिङ्ग, मिथ्यालिङ्ग।(द्वा.३२) -**सत्थ** न [शास्त्र] मिथ्याशास्त्र। कुणयकुसत्थेहिं मोहिओ जीवो। (भा.१४०) -**सुद** न [श्रुत] कुश्रुत, मिथ्याश्रुत। (शी.१४)

कुंछा स्त्री [दे] घृणा। (प्रव.चा.ज.वृ.२५)

कुच्छिद/कुच्छिय वि [कुत्सित] निंदित, गर्हित, घृणित। (स.१४८, १४९, भा.१३९) कुच्छियतवं कुव्वंतो,कुच्छियगइभायणं होई। (भा.१३९)

कुठार न [कुठार] कुल्हाड़ी, कुठार। छिंदंति भावसमणा, झाणकुठारेहिं भवरुक्खं। (भा.१२१)

कुडिल त्रि [कुटिल] वक्र, टेढ़ा। (द्वा.७३) मोत्तूण कुडिलभावं। (द्वा.७३)

कुण सक [कृ] करना, बनाना। (स.७२, निय.८५,सू.३, भा.५) कुणदि/कुणइ (व.प्र.ए.) कुणादि (व.प्र.ए.स.ज.वृ.८६) कुणंति (व.प्र.ब.मो.७८)कुण (वि./आ.म.ए.भा.१०५) कुणसु (वि.म.ए.मो.९६) कुणहि (वि.म.ए.भा.१३१) कुणह (वि.म.ब.निय. १८५) कुणिज्ज (वि.म.ए.भा.४८) कुणंतो (व.कृ.भा.१३९) (हे. कृगेः कुणः ४/६५)

कुणिम पुं न [दे] शव, मृतक। (भा.४२) कुणिमदुग्गंधं। (भा.४२)

कुदोचिवि अ [कुतश्चित् अपि] किसी से भी।

कुर सक [कृ] करना। कुरु (वि.म.ए.भा.१३२) कुरु दयपरिहरमुणिवर।

कुल पुं न [कुल] कुल, वंश, जाति। (निय.४२,५६,द.२७) ण वि य कुलो ण वि य जाइसंजुत्तो। (द.२७)

कुव्व सक [कृ] करना। (स.८१,३०१, निय.१५२, चा.१३) कुव्वइ/कुव्वदि (व.प्र.ए.स.३०१,३४९) कुव्वए (व.प्र.ए.स.२१५) कुव्वंति (व.प्र.ब.स.८६) कुव्वंतो (व.कृ.प्र.ए.निय.१५२) कुव्वंता (व.कृ.प्र.ब.स.१५३) सीलाणि तहा तवं च कुव्वंता। (स.१५३) कुव्वंतस्स (व.कृ.ष.ए.स.२३९, २४४) उवघादं कुव्वंतस्स। कुव्वंताणं (व.कृ.ष.ब.स.३२३) णिच्चं कुव्वंताणं, सदेवमणुयासुरे लोए। (स.३२३) वर्तमानकाल कृदन्त के **न्त** एवं **माण** प्रत्यय होने पर किसी भी क्रिया के तीनों लिङ्गों के दोनों वचनों में सातों विभक्तियों में रूप बनते हैं। कर्ता, कर्म आदि के अनुसार इनका प्रयोग होता है।

कुसमयमूढ वि [कुसमयमूढ] मिथ्यामत में मुग्ध। (शी.२६)

कुसल वि [कुशल] निपुण, चतुर, दक्ष। तवसीलमंतकुसला, खिवंति विसयं विसं व खलं। (शी.२४)

कुसील न [कुशील] संयम रहित, चारित्र रहित, ब्रह्मचर्य रहित। कम्ममसुहं कुसीलं। (स.१४५) -**संग** पुं न [सङ्ग] कुशील के प्रति

आसक्ति, कुशीलसंपर्क। कुसीलसंगं ण कुणदि विकहाओ। (बो.५६) -**संसग्ग** पुं न [संसर्ग] कुशील सम्बन्ध। (स.१४७) कुसीलसंसग्गरायेण। (स.१४७)

केइ/केई अ [कोऽपि] कुछ भी, कोई भी। (स.६१, निय.१८५) जीवस्स णत्थि केई। (स.५३) ण दु केई णिच्छयणयस्स। (स.५६)

केइं अ [किंचित्] कुछ भी। (निय.९७) परभावं णेव गेण्हए केइं। (निय.९७)

केणवि अ [केनापि] कोई भी, किसी के साथ। वेरं मज्झं ण केणवि (निय.१०४) मा वज्झेज्जं केण वि। (स.३०१)

केरिस वि [कीदृश] कैसा, किस तरह का। (शी.४०)

केवल वि [केवल] अद्वितीय, अनुपम, शुद्ध, ज्ञान, विशेष, अकेला (स.९,निय.९६) जं केवलि त्ति णाणं। (प्रव.६०) -**णाण** न [ज्ञान] केवलज्ञान, समस्त पदार्थो एवं उनके समस्त परिणमनों को युगपत् देखने वाला ज्ञान।विज्जदि केवलणाणं। (निय.१८१) -**णाणी** वि [ज्ञानिन्] केवलज्ञानवाला,सर्वज्ञ।केवलणाणी जाणदि पस्सदि णियमेण अप्पाणं। (निय.१५९,१७२) -**दंसण न** [दर्शन] केवलदर्शन,पूर्णबोध।(निय.९६)-**दिट्ठि** स्त्री [दृष्टि] केवल दर्शन। (निय.१८१) -**भाव** पुं [भाव] केवलभाव, केवलज्ञानरूप भाव (बो.३९) -**वीरिय** पुं न [वीर्य] केवलशक्ति, केवलज्ञानरूपी शक्ति। (निय.१८१) -**सत्ति** स्त्री [शक्ति] केवलज्ञानरूपी शक्ति (निय.९६) -**सोक्ख** न [सौख्य] केवलज्ञानरूपी सुख। (निय.१८१) केवलसोक्खं च केवलं विरियं। (निय.१८१)

केवलि वि [केवलिन्] केवलज्ञानी, सर्वज्ञ, चराचर को जानने वाला। (स.२९, निय.१२५, द.२२) परमट्ठो खुल समओ, सुद्धो जो केवली मुणी णाणी। (स.१५१) ववहारणएण केवली भगवं। (स.१५९) **-गुण** पुं न [गुण] केवली का गुण, केवलज्ञान। केवलिगुणे थुणदि जो। (स.२९) **-जिण** पुं [जिन] केवलिभगवान्। केवलिजिणेहि भणियं। (द.२२) **-सासण** न [शासन] केवलिशासन। (निय.१२५) केवलिणो (ष.ए.निय.१७२, स.२९)

के वि अ [केऽपि/किञ्चित्अपि] कुछ भी, कोई भी। जे के वि दव्वसवणा। (भा.१२१)

केस पुं [केश] केश, बाल। (भा.२०) केसणहरणालट्ठी। (भा.२०)

केसव पुं [केशव] अर्धचक्रवर्ती, नारायण, केशव। (भा.१६०)

केहिंचिदु अ [कैश्चित्तु] कितनी ही। (स.३४५, ३४६)

को स [किम्] कौन। को णाम भणिज्ज बुहो। (स.२०७) को (प्र.ए.)

कोइ/को अ [कोऽपि] कोई भी। (स.५८, निय.१६६, प्रव.ज्ञे.२७) जह कोइ भणइ एवं। (निय.१६६)

कोडि स्त्री [कोटि] करोड़,संख्या विशेष। (भा.४) जो कोडिए ण जिप्पइ। (मो.२२) कोडिए (ष.ए.) स्त्रीलिङ्ग सम्बन्धी **ए** प्रत्यय लगने पर दीर्घ हो जाता है। (हे. टाङस्ङेरदादिदेद्वा तु ङसेः ३/२९) परन्तु यहां दीर्घ न होकर ह्रस्व ही रह गया। अपभ्रंश में **ए** प्रत्यय लगने पर दीर्घ का ह्रस्व, ह्रस्व का ह्रस्व, ह्रस्व का दीर्घ और

दीर्घ का दीर्घ होता है। (हे. स्यादौ दीर्घह्रस्वौ ४/३३०)

कोध पुं [क्रोध] क्रोध। (स.८७) कोधादीया इमे भावा। (स.८७)

कोमल वि [कोमल] मृदु, सुकुमार, कोमल। (शी.१) कोमलस्समप्पायं। (शी.१)

को वि अ [कोऽपि] कोई भी। (स.३६, भा.२०, द.९) णत्थि मम को वि मोहो। (स.६६)

कोस पुं [क्रोश] कोस, पृथ्वीतल का मापक एक प्रमाण। (मो.२१) सो किं कोसद्धं पि हु।(मो.२१)

कोह पुं [क्रोध] क्रोध, गुस्सा, कोप। (स.११५,१८१, निय.११४, चा.३३, भा.१०९) कोहे कोहा चेव हि। (स.१८१) **-उवजुत्त** वि [उपयुक्त] क्रोध सहित। (स.१२५) कोहुवजुत्तो कोहो। (स.१२५) **-त्त** वि [त्व] क्रोधत्व, क्रोध करने वाला। (स.१२३) पुग्गलकम्मं कोहो, जीवं परिणामएदि कोहत्तं। (स.१२३) **-भाव** पुं [भाव] क्रोधभाव। (स.१२४) कोहभावेण एस दे बुद्धी। (स.१२४)

ख

ख न [ख] 1.आकाश, गगन। (पंचा.३, भा.१४५) **- मंडल** न [मण्डल] आकाशमण्डल, आकाश क्षेत्र। जह तारयाण सहियं, ससहरबिंबं खमंडले विमले। (भा.१४५) **-चर** वि [चर] खचर, विद्याधर, आकाश में गमन करने वाले। (पंचा.११७) 2. इन्द्रिय, साधन।

खअ पुं [क्षय] विनाश, कर्मनाश, कर्म का अभाव। (पंचा.५८) **-उवसमिय** पुं [औपशमिक] क्षय और उपशम, कर्मो का नाश एवं उपशम, क्षायोपशमिक अवस्था विशेष। खइयं खओवसिमियं, तम्हा भावं तु कम्मकदं। (पंचा.५८) खएण (तृ.ए.पंचा.५६, निय.१७५)

खइअ/खइग/खइय पुं [क्षायिक] क्षय, विनाश, कर्मो के नाश से उत्पन्न भाव। (पंचा.५८) णो खइयभावठाणा। (निय.४१) **-भाव** पुं [भाव] क्षायिकभाव। (निय.४१) णो खइयभावठाणा। (निय.४१)

खं सक [ख्या] कहना। खंति (चा.३७) खंति जिणा पंचसमिदीओ। (चा.३७)

खंड पुं न [खण्ड] टुकड़ा, हिस्सा, भाग। (शी.२५) वट्टेसु य खंडेसु। (शी.२५)

खंड सक [खण्ड्य] तोड़ना, खण्डित करना, विच्छेद करना। सस्सं खंडेदि तह य वसुहं पि। (लिं.१६) **-दूसयर** वि [दूष्यकर] खण्डित करने एवं दोष लगाने वाला। (मो.५६)

खंध पुं [स्कन्ध] स्कन्ध, पुद्गलपिण्ड। (पंचा.९८, प्रव. ज्ञे.७५, निय.२०) सव्वेसिं खंधाणं। (पंचा.७७) पुद्गल द्रव्य के चार भेद कहे गये हैं-स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणु। खंधा य खंधदेसा, खंधपदेसा य होंति परमाणू। (पंचा.७४) परमाणुओं से मिलकर बने हुए पिण्ड को स्कन्ध कहते हैं। खंधं सयलसमत्थं। (पंचा.७५) खंधा हु छप्पयारा। (निय.२०) स्कन्ध के छह भेद

किये गये हैं-अइथूलथूलथूलं थूलसुहुमं च सुहुमथूलं च। सुहुमं च सुहुमसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेदं।। (निय.२१) **-अंतरिद** वि [अन्तरित] स्कन्ध में व्यवहित, स्कन्ध में समाहित। खंधंतरिदं दव्वं। (पंचा.८१) **-णिव्वत्ति** वि [निर्वृत्ति] स्कन्धों की परिणति, स्कन्धों की रचना। (पंचा.६६) बहुप्पयारेहिं खंधणिव्वत्ती। (पंचा.६६) **-देस** पुं [दिश] स्कन्ध का भाग,एक स्कन्ध का आधा। (पंचा.७४) **प्पदेस** पुं [प्रदेश] स्कन्ध प्रदेश,स्कन्ध के आधे भाग का भी आधा।(पंचा.७४) **-प्पभव** वि[प्रभव]स्कन्ध से उत्पन्न होने वाला।(पंचा.७९)सद्दो खंधप्पभवो।(पंचा.७९) **-सरूव** वि [स्वरूप] स्कन्ध स्वरूप। (निय.२८) खंधसरूवेण पुणो परिणामो। (निय.२८)

खंभ पुं [स्तम्भ] खंभा, स्तम्भ। (भा.१५८) ते सव्वदुरियखंभ, हणंति चारित्तखग्गेण। (भा.१५८)

खण सक [खन्] खोदना। खणदि (व.प्र.ए.लिं.१५) खणंति (व.प्र.ब.भा.१५२) ते जम्मवेलिमूलं खणंति वरभावसत्थेण। (भा.१५२)

खण पुं [क्षण] बहुत थोड़ा समय, क्षणभर मात्र। (प्रव. ज्ञे. २७) **-भंग** वि [भङ्ग] क्षण में नष्ट होने वाला, समय-समय में नष्ट हुआ। (प्रव. ज्ञे. २७) खणभंगसमुब्भे जणे कोई। (प्रव. ज्ञे.२७) **-भंगुर** वि [भङ्गुर] प्रति समय नष्ट होने वाला। कालो खणभंगुरो णियदो। (पंचा.१००)

खणण न [खनन] खोदा जाना। (भा.१०) खणणूत्तावण।

खणरुइ स्त्री [क्षणरुचि] बिजली,उल्का,विद्युत्।(द्वा.५) खणरुइघणसोहमिव थिरं ण हवे। (द्वा.५)

खम सक [क्षम्] क्षमा करना,सहना।खमेहिं तिविहेण सयल-जीवाणं। (भा.१०९)

खम वि [क्षम] सहन शक्ति, क्षमा, क्रोध का न आना। (प्रव.चा.३१)

खमा स्त्री [क्षमा] क्षमा,क्रोध का अभाव, धर्म का एक लक्षण। (निय.११५, प्रव. चा. ३१, भा १५५, १०९, बो.५१) खमदमखग्गेण विप्फुरंतेण। (भा.१५५) कोहं खमया। (निय.११५) -**गुण** पुं न [गुण] क्षमा गुण। इस णाऊण खमागुण। (भा. १०९) -**सलिल** न [सलिल] क्षमारूपी जल। वरखमसलिलेण सिंचेह। (भा.१०९) धर्म के दश भेदों में क्षमा का पहला नाम है। (द्वा.७०) कोहुप्पत्तिस्स पुणो, बहिरंगं जदि हवेदि सक्खादं। ण कुणदि किंचिवि कोहो, तस्स खमा होदि धम्मो त्ति।। (द्वा.७०) खमाय (तृ.ए.भा. १०८) खमेहि (वि./आ. म. ए. भा. १०९)

खय पुं [क्षय] विनाश, नष्ट होना। (स. ७३, निय. ११४) सव्वे एए खयं णेमि। (स.७३) -**करण** न [करण] क्षय का आश्रय, क्षपणाविधि। खयकरणं सव्वदुक्खाणं। (द.१७) -**हेउ** पुं [हेतु] क्षय का कारण। पायच्छित्तं जाणह, अणेयकम्माण खयहेऊ। (निय.११७)

खयर पुं स्त्री [खचर] विद्याधर, आकाश में चलने वाले।

खयरामरमणुयकरंजलि। (भा. ७५, १२९)

खरिस पुं [खरिस] आमांस। (भा. ३९, ४२)

खलु अ [खलु] ही, निश्चय ही। (प्रव.७, स.१८१)

खव सक [क्षपय्] नाश करना, फेंकना। सो खवेदि देहुब्भवं दुक्खं। (प्रव.७८) खवइ/खवदि (व. प्र. ए. सू.६) खवेदि (व. प्र. ए. प्रव. ज्ञे. १०२) खवयंत (व. कृ. प्रव. ४२) खविऊण /सं. कृ. द. ३६) खवीय (सं.कृ.प्रव.ज्ञे.१०३)

खवण न [क्षपण] उपवास, अनाहार। भत्ते वा खवणे वा। (प्रव. चा. १५)

खाइअ/खाइग/खाइय पुं [क्षायिक] षय से उत्पन्न, विनाश से पैदा हुआ। परिणमदि णेयमट्ठं णादा जदि णेव खाइगं तस्स। (प्रव.४२)

खिज्ज अक [खिद्] क्षय होना, नष्ट होना, थक जाना, खिन्न होना। (भा.२५) आहारुस्सासाणं णिरोहणा खिज्जए आऊ। (भा.२५)

खित्त वि [क्षिप्त] डाली हुई, फैंकी हुई। (पंचा. ३३) खित्तं खीरे पभासयदि खीरं। (पंचा.३३)

खिदि स्त्री [क्षिति] भूमि, पृथ्वी। खिदिसयणमदंतयणं। (प्रव. चा. ८, भा.८१) **-सयण** न [शयन] पृथ्वी पर सोना, पृथ्वी की शय्या, साधुओं का एक मूलगुण। खिदिसयणं दुविहसंजमं भिक्खू। (भा.८१)

खिप्प वि [क्षिप्र] शीघ्र, जल्दी, वेग से। (द्वा. ५८, पंचा.२६) णत्थि चिरं वा खिप्पं । (पंचा.२६)

खिब्बिस न [किल्विष] अपवित्र, अपराध, पाप, बीमारी।

खिब्बिसभरियं। (भा.४२)

खीण वि [क्षीण] नष्ट हुए, क्षय को प्राप्त हुए। (पंचा. ११९, स. ३३) खीणो मोहो हविज्ज साहुस्स। (स.३३) **-मोह** पुं [मोह] मोहरहित, मोहनीय कर्म से रहित। (स.३३) तइया हु खीणमोहो। (स.३३)

खीय अक [क्षि] नाश को प्राप्त होना, क्षय होना। (प्रव. ८६) खीयदि मोहोवचयो। (प्रव. ८६) तेसिं दुक्खाणि खीयंति। (प्रव. ज वृ. २२) खीयदि (व.प्र.ए.) खीयंति (व.प्र.ब.)

खीर न [क्षीर] दुग्ध, दूध। (पंचा. ३३, बो. १४) जह पउमरायरयणं खित्तं खीरे पभासयदि खीरं। (पंचा.३३)

खु अ [खलु] यथार्थ में, निश्चय ही, पादपूर्ति अव्यय। (पंचा. १४, स.१५७, निय.११५, भा.५८) दव्वं खु सत्तभंगं। (पंचा.१४)

खुद्द वि [क्षुद्र] तुच्छ, अधम, क्षुद्र, जघन्य। खुद्दभवंतो मुहुत्तस्स। (भा.२९)

खुब्भ अक [क्षुभ्] क्षुभित होना, घबड़ाना, डरना। (प्रव. ८३) खुब्भदि तेणोच्छण्णो, पय्या रागं वा दोसं वा। (प्रव. ८३)

खेड न [खेल] खेल। (सू.७) खेडे वि ण कायव्वं। (सू.७)

खेत्त पुं न [क्षेत्र] खेत, जमीन, स्थान, प्रदेश, क्षेत्र। (प्रव.३, प्रव. चा. २२) अरहंते माणुसे खेत्ते। (प्रव.३)

खेद पुं [खेद] दुःख, राग, द्वेष, मोह। (प्रव. ६०) खेदो तस्स ण भणिदो, जम्हा घादी खयं जादा। (प्रव. ६०) सेदं खेदमदो रइ। (निय.६)

खेयर [खेचर] विद्याधर। (भा. १०८) खेयरअमरणराणं। (भा.१०८)

खेल पुं [श्लेष्मन्] कफ, थूक। (बो.३६) सिंहाणखेलसेओ। (बो.३६)

खोह पुं [क्षोभ] रञ्ज, राग-द्वेष, संवेग, उत्तेजना, व्याकुलता। (पंचा.१३८) जीवस्स कुणदि खोहं। (पंचा.१३८) मोहक्खोह विहीणो। (प्रव.७)

ग

गअ वि [गत] प्राप्त हुआ। (भा.८८, सू.४) असुद्धभावो गओ महाणरयं। (भा. ८८)

गइ स्त्री [गति] जीव की अवस्था। नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव की अवस्था। (भा.८, बो.३२) गइ-इंदिए च काए। (बो.३२)

गइंद पुं [गजेन्द्र] ऐरावत हाथी, श्रेष्ठ हाथी। (द्वा.१०) हयमत्तगइंद चाउरंगबलं। (द्वा.१०)

गंथ पुं [ग्रन्थ] 1. शास्त्र, सूत्र, आगम। २.गांठ, परिग्रह, अन्तरङ्गासक्ति। सव्वेसिं गंथाणं। (निय.६०) गिहगंथमोहमुक्का। (भा.४४) **-गाहीय** वि [ग्रहीत] परिग्रह को ग्रहण करने वाले। (मो. ७९) **-चाय** न [त्याग] परिग्रह त्याग। (द.१४)

गंथिय वि [ग्रथित] गूंथा गया, निर्मित किया गया। (सू.१, भा.९२) अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं। (सू.१)

गंध पुं [गन्ध] गन्ध, सुवास, महक। (पंचा.२४, स.३७७, प्रव.५६, निय. २७, चा.३६) रूवं रसं च गंधं। (पंचा. ११६)

गच्छ सक [गम्] जाना, गमन करना, प्राप्त होना। (पंचा.९, स.३८२, सू.८) दवियदि गच्छदि ताइं। (पंचा.९) गच्छदि। (व. प्र.ए.पंचा.९,सू.९) गच्छेइ (व.प्र.ए.सू.८) गच्छंति (व.प्र.ब.पंचा.६) गच्छदु (वि./आ.प्र.ए.स.२०९) गच्छे (वि./आ. म. ए. स. २२३) गच्छेज्ज (वि./आ. उ. ए. स. २०८) गच्छंतं (व. कृ.स. २३४) उम्मग्गं गच्छंतं। (स.२३४)

गण पुं [गण] समूह, समुदाय। (पंचा.१६६) **-धर/हर** पुं [धर] गणधर, जिनदेव का प्रधान शिष्य, आचार्य। किच्चा अरहंताणं, सिद्धाणं तह णमो गणहराणं। (प्रव.४) प्रवचनसार की इस गाथा में जो **गणहर** शब्द आया है, वह आचार्य विशेष का वाचक है। गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं। (सू.१) यहाँ आया हुआ **गणहर** शब्द गणधर वाचक है।

गणि पुं [गणिन्] आचार्य, श्रमण संघ का नायक, साधु संघ का प्रमुख। (प्रव. चा. ३) समणं गणिं गुणड्ढं। (प्रव. चा. ३)

गद वि [गत] प्राप्त हुआ, गया हुआ। (पंचा.६५, प्रव. २६) तत्थ गदा पोग्गला सभावेहिं। (पंचा.६५)

गदि देखो गइ। (पंचा.१९, १२९) **-णाम** पुं न [नामन्] गति नामकर्म। (पंचा.१९,११९) तावदिओ जीवाणं, देवो माणुसो त्ति गदिणामो। (पंचा.१९)

गद्दह पुं [गर्दभ] गधा, खर। सुणहाण गद्दहाण। (शी.२९)

गब्भ पुं [गर्भ] गर्भ, उदर, कुक्षि, पेट, उत्पत्ति स्थान, जन्मस्थान। (पंचा.११३) **-त्थ** वि [स्थ] गर्भ में स्थित।(पंचा.११३) **-वसहि** स्त्री [वसति] गर्भ के आवास, गर्भ के स्थान। (भा.१७) कलिमलबहुला हि गब्भवसहीहि। (भा.१७)**-हर** न [गृह] गर्भघर, गर्भगृह, घर का भीतरी भाग। (भा.१२२) जह दीवो गब्भहरे। (भा.१२२)

गम सक [गम्] जाना, गमन करना। (शी.३२) सो गमयदि णरयवेयणं पउरं। (शी.३२)

गमण न [गमन] गमन, गति। (पंचा.८८, प्रव. ज्ञे.४१, निय.१८३) गमणं जाणेहि जाव धम्मत्थी। (निय.१८३) **-अणुग्गहयर** वि [अनुग्रहकर] गमन में उपकारक। (पंचा.८५) गमणाणुग्गहयरं हवदि लोए। (पंचा.८५) **-ठिदि** स्त्री [स्थिति] गमनस्थिति, गमन की मर्यादा। जादो अलोगलोगो, तेसिं सब्भावदो गमणठिदी। (पंचा.८७) **-णिमित्त** पुं [निमित्त] गमन में कारण। गमणणिमित्तं धम्मं। (निय.३०) **-हेदु** पुं [हेतु] गमन में कारण, गमन में सहकारी। जदि हवदि गमणहेदू। (पंचा.९४)

गमय वि [गमक] बोधक, व्याख्याता। (बो.६१) **-गुरु** पुं [गुरु] व्याख्याकारों में प्रमुख। (बो.६१) गमयगुरु भयवओ जयउ। (बो.६१)

गरह सक [गर्ह] निंदा करना, घृणा करना। तं गरहि गुरुसयासे। (भा.१०६) गरहि (वि./आ.म.ए.भा.१०६)

गरहा स्त्री [गर्हा] निंदा, घृणा, दोष प्रकट करना। णिंदा

गरहासोही। (स.३०६)

गरहिअ वि [गर्हित] निंदित, घृणित, निंदनीय। सो गरहिउ जिणवयणे। (सू.१९) गरहिउ (अप. प्र. ए.)

गरुय वि [गुरुक] गुरु, बड़ा, भारी। (सू.९) गरुयभारो य। (सू.९)

गलिय वि [गलित] गला हुआ, पतित, नष्ट हुआ। लंबियहत्थो गलियवथो। (भा.४)

गव्व पुं [गर्व] अहंकार, घमण्ड। (भा.१०३) असिऊण माणगव्वं। (भा.१०३)

गव्विद वि [गर्वित] अभिमानी, घमण्डी। जे णाणगव्विदा होऊण। (शी.१०)

गस सक [ग्रस्] निगलना, आहार ग्रहण करना। (भा.२२) गसिउं असुद्धभावेण। गसिउं (हे.कृ.भा.२२)

गसिअ/गसिय वि [ग्रसित] भक्षित, खाया हुआ। गसियाइं पोग्गलाइं। (भा.२२)

गह सक [ग्रह्] ग्रहण करना, लेना, प्राप्त करना। (भा.७, २४) गहि (वि./आ. म. ए.) गहिऊण (सं.कृ.मो.८६)

गहण न [ग्रहण] ग्रहण करने वाला। (पंचा.१४८, प्रव. चा.२२, निय.६४) जोगणिमित्तं गहणं। (पंचा.१४८) **-भाव** पुं [भाव] ग्रहण भाव। जो मुचदि गहणभावं। (निय.५८)

गहिय वि [गृहीत] स्वीकृत,विदित,ज्ञात।अच्चेयणं वि गहियं। (मो.९) ते गहिया मोक्खमग्गम्मि। (मो.८०,८२)

गा/गाअ सक [गै] गाना। गायदि (व. प्र. ए. लिं.४) णच्चदि गायदि तावं।

गाम पुं [ग्राम] ग्राम, गांव, नगर, पुर। (निय.५८, स.३२५) गामे वा णयरे वा। (निय.५८)

गारव पुं न [गौरव] महत्त्व, प्रभाव, आदर, महान्, अहंकार। ये गारवं करंति य, सम्मत्तविवज्जिया होंति। (द.२७)

गाह सक [गाह्] अनुभव करना, अभ्यास करना, प्राप्त करना। (स.८, पंचा.१३४, लिं.२२) जो मुयदि रागदोसे सो गाहदि दुक्खपरिमोक्खं। (पंचा.१०३) अणज्जभासं विणा उ गाहेउं। (स.८) गाहेदुं (हे.कृ.स.८)

गिण्ह सक [ग्रह्] ग्रहण करना, प्राप्त करना। (स.७७, सू.१८) गिण्हदि/गिण्हइ/गिण्हए (व.प्र.ए.स.७६,३५१,४०७) गिण्ह (वि./आ.म.ए.स. २०३) तं गिण्ह णियदमेदं। (स.२०५)

गिद्धि स्त्री [गृद्धि] आसक्ति। (भा. १०२) गिद्धीदप्पेणधी पभुत्तूण। (भा.१०२)

गिरि पुं [गिरि] पहाड़, पर्वत। (भा.२१, बो.४१) **-गुह/गुहा** स्त्री [गुफा] गिरिगुफा। (बो.४१) **-सिहर** पुं [शिखर] पर्वत का शिखर, पर्वत का ऊपरी भाग। (बो.४१) गिरिगुह गिरिसिहरे। (बो.४१)

गिलाण वि [ग्लान] अशक्त, असमर्थ, रोगपीड़ित। (प्रव.चा.५३) बालो वा वुड्ढो वा समभिहदो वा पुणो गिलाणो वा। (प्रव. चा.३०)

गिह न [गृह] मकान, घर। (स.४०८, बो.४४) गिहगंथमोहमुक्का। (बो.४४)

गिहि पुं [गृहिन्] गृही, संसारी, गृहस्थ। (स.४१०) पाखंडी गिहिमयाणि लिंगाणि। (स.४१०)

गिहिद वि [गृहीत] ग्रहण किया हुआ। सव्वत्थ गिहिदपिण्डा। (बो.४७)

गुंभी स्त्री [दे] क्षुद्र कीट विशेष, कुम्भी, तीन इन्द्रिय जीव। जूगागुंभीमक्कडपिपीलियाविच्छियादिया कीडा। (पंचा.११५)

गुड पुं [गुड] गुड, मीठा, मधुर रस। (स.३१७, भा.१३७) गुडदुद्धं पि पिबंता। (भा.१३७)

गुण पुं न [गुण] गुण, स्वभाव, धर्म, पर्याय। (पंचा.१०, स.१०८ प्रव.१० नियं.३३, भा. १५, बो. २७) **-अंतर** न [अन्तर] गुणों के मध्य, गुणों के बीच। (प्रव. ज्ञे. १२) **-गंभीर** वि [गम्भीर] गुणों में गंभीर। धीरा गुणगंभीरा। (निय.७३) **-गण** पुं [गण] गुण समूह। चउरासी गुणगणाण लक्खाइं। (भा.१२०) **-चित्त** न [चित्त] चेतना, ज्ञानगुण। अणंतणाणाइ गुणचित्तं। (भा. ११९) **-ठाण/ट्ठाण** न [स्थान] गुणस्थान।(स.५५,बो.३०,निय. ७८) गुणट्ठाणा य अत्थि जीवस्स। (स.५५) **-ड्ढ** [ढ्य] गुणी, गुणाढ्य, गुणों से परिपूर्ण। समणं गणिं गुणड्ढं। (प्रव. चा.३) **-त्त** वि [त्व] गुणों वाला, गुणीपना। (प्रव.८०) **-दोस** पुं [दोष] गुण और दोष। भावो कारणभूदो, गुणदोसाणं जिणा विंति। (भा.२, चा.४२) **-पज्जत्त** वि [पर्याप्त] गुणों से परिपूर्ण। (बो.५८) आयत्तणपुणपज्जत्ता। (बो.५८) **-पज्जय** पुं [पर्यय] गुण और पर्याय। गुणपज्जएसु भावा। (पंचा.१५) **-रयण** न [रत्न]गुणरूपी

रत्न। सारं गुणरयणाणं। (भा.१४६) **-वंत** वि [वन्त] गुणवान्। (प्रव. ज्ञे.३) **-व्वय** न [व्रत] गुणव्रत। (चा.२५) **-वादी** वि [वादिन्] गुणवादी। (द.२३) **-विसुद्ध** वि [विशुद्ध] गुणों में विशुद्ध।(चा.८)**-वित्थर** पुं [विस्तार] गुणों का विस्तार। (शी.३६) **-सण्णिद** वि [सन्नित] गुणयुक्त। (स.११२) **-समिद्ध** वि [समृद्ध] गुणों से समृद्ध। (बो.३३) **-हीण** वि [हीन] गुणों से हीन। (द.२७) को वंदमि गुणहीणो। (द.२७) गुणों (प्र.ए. प्रव.ज्ञे.१५,१६) गुणा (प्र.ब.प्रव.ज्ञे.४२) गुणं (द्वि.ए.बो.२८) गुणेहि/गुणेहिं (तृ.ब.भा.१५४, प्रव.चा.७०) गुणदो/गुणादो (पं.ए.प्रव.ज्ञे.१२)

गुत्त न [गोत्र] 1. गोत्र, कर्मो का एक भेद। (द.३४) तह उत्तमेण गुत्तेण। (द.३४) 2.वि [गुप्त].प्रच्छन्न, छिपा हुआ, गुप्त गुप्ति विशेष। (मो. ५३, प्रव. चा.३८) गुत्तो खवेइ अंतोमुहुत्तेण। (मो.५३)

गुत्ति स्त्री [गुप्ति] प्रवृत्ति का निरोध, मन-वचन और काय की चेष्टाओं को रोकना। तिहिं गुत्तिहिं जो स संजदो होई। (सू.२०) गुत्तीओ (द्वि.ब.स.२७३)

गुरव पुं [गुरु] धर्माचार्य, पंचपरमेष्ठी। झाएहि पंच वि गुरवे। (भा.१२३) गुरवे (द्वि.ब.भा.१२३)

गुरु पुं [गुरु], गुरु, भारी, अध्यापक, धर्मोपदेशक। (प्रव. चा.२, भा.९१) **-पसाअ** पुं [प्रसाद] गुरु की प्रसन्नता, गुरुकृपा। जो झायव्वो णिच्चं, पाऊण गुरुपसाएण। (भा.६४) **-भार** पुं [भार]

गुरुत्व, गुरुभार, बहुत भारी भार। (मो.२१) लेवि गुरुभारं। **-भेय** पुं न [भेद] बड़ा भेद,बड़ा अन्तर।पडिवालंताणं गुरुभेयं। (मो.२५) **-यर** वि [तर] गुरुतर, अत्यन्तभारी। (भा.२६) गुरुयरपव्वय। (भा.२६) **-वयण** न [वचन] गुरुवचन, गुरुवाणी। गुरुवयणं पि य विणओ।(प्रव.चा.२५)गुरुणा(तृ.ए.प्रव.चा.७) गुरूणं (ष.ब.पंचा.१३६,भा.९१) अणुगमणं पि गुरूणं। (पंचा. १३६)

गूढ वि [गूढ] प्रच्छन्न, छिपा हुआ। गूढे रहिए परोपरोहेण। (निय.६५)

गेज्झ वि [ग्राह्य] ग्रहण योग्य। णेव इंदिए गेज्झं। (निय.२६)

गेण्ह सक [ग्रह्] ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना। गेण्हदि णेव ण मुंचदि। (प्रव.३२) गेण्हदे (व.प्र.ए.निय.९७) गेण्हंति (व. प्र.ब. प्रव.५६) गेण्हदु (वि./आ. प्र. ए.प्रव.चा. २३)

गेवेज्ज न [ग्रैवेयक] ग्रैवेयक, देवों का विमान। (द्वा.२८) जाव दु उवरिल्लया दु गेवेज्जा। (द्वा.२८)

गेह न [गृह] घर, मकान, गृह। उत्तममज्झिमगेहे। (बो.४७)

गो स्त्री [गो] गाय। (शी.२९) गोपसुमहिलाण। (शी.२९) **-खीर** न [क्षीर] गाय का दूध। गोखीरखंधधवलं। (बो.३७)

गोसीर न [गोशीर्ष] चन्दन। (भा.८२) वज्जं जह तरुगणाण गोसीरं। (भा.८२)

घ

घट पुं [घट] घड़ा, कलश। जीवो ण करेदि घडं। (स.१००) करेदि घडपडरथाणि दव्वाणि। (स.९८)

घण वि [घन] 1. अतिशय, अधिक, अत्यन्त घोर। (निय.७१, द्वा.५) घणघाइकम्मरहिया। (निय.७१) 2.पुं [घन] बादल, मेघ। (द्वा.५)**-सोहा** स्त्री [शोभा] मेघ की अत्यधिक दीप्ति। घणसोहमिव थिरं ण हवे। (द्वा.५)

घर न [गृह] गृह, घर, मकान। (हे. गृहस्य घरोपतौ २/१४४) गृह को घर आदेश हो जाता है। **-त्थ** [स्थ] गृहस्थ। समणाणं वा पुणो घरत्थाणं। (प्रव. चा.५४)

घाइ वि [घातिन्] घाति, नाश किये जाने वाले, क्षय करने योग्य। (प्रव.७१) धोदघाइकम्ममलं। (प्रव.१) **चउक्क** वि [चतुष्क] घाति चतुष्क।(भा.१४९) णट्ठे घाइचउक्के। (भा.१४९) ज्ञानावरण,दर्शनावरण,मोहनीय और अन्तराय,इन चार की घातिया संज्ञा है।

घाण पुं न [घ्राण] नाक, नासिका, नासा। (स.३७७) **-विसय** पुं [विषय] घ्राण का विषय, सुगन्ध-दुर्गन्ध। (स.३७७) घाणविसयमागयं गंधं। (स.३७७)

घाद सक [घातय्] विनाश करवाना, नष्ट करवाना, क्षय कराना। तम्हा किं घादयदे। (स.३६६, ३६८)

घाद पुं [घात] प्रहार, घात, विनाश, क्षय। णाणस्स दंसणस्स य, भणिओ घादो तहा चरित्तस्स। (स.३६९)

घादि देखो घाइ। (प्रव.६०) -**कम्म** पुं. न [कर्मन्] घातिया कर्म। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय ये चार घातिया कर्म हैं। पक्खीणघादिकम्मो। (प्रव.१९)

घि सक [ग्रह] ग्रहण करना। (स.४०६) घित्तुं (हे. कृ.) घित्तव्वो (वि. कृ. स. २९६) पण्णाए घित्तव्वो। (स.२९९)

घिप्प सक [ग्रह्] ग्रहण करना, लेना। (स.२९६) कह सो घिप्पदि अप्पा। (स.२९६)

घिय न [घृत]घी, घृत। (बो.१४) खीरं स घियमयं चावि। (बो.१४)

घे सक [ग्रह्] ग्रहण करना,लेना,धारण करना।सुद्धो अप्पा य घेत्तव्वो। (स.२९५) घेत्तव्वो (वि.कृ.स.२९६) घेत्तूण (सं.कृ.मो.७८,लिं ३)

घोर वि [घोर] भयंकर, भयानक। हिंडदि घोरमपारं। (प्रव.७७) घोरं चरियचरित्तं। (सू.२५)

घोस सक [घोषय्] घोषणा करना , रटना, घोखना, याद करना। तुसमासं घोसंतो। (भा.५३) घोसंतो (व.कृ.)

च

च अ [च] और, तथा, फिर, पुनः, ऐसा, अथवा, क्योंकि, पादपूर्ति। (पंचा १०८, स.२९२, २९३, ३९२, प्रव. १३, प्रव. ज्ञे. ३८, निय. २१, भा. २) अण्णं च वसिट्ठमुणी । (भा.४६) णाणी णाणं च सदा। (पंचा.४८)

चइ सक [त्यज्] छोड़ना, त्याग करना। (निय.९१, भा. ६०, चा.४५) लहु चउगइं चइऊणं। (भा.६०) चइऊण (सं.कृ.निय.९१, भा.७३) चइऊणं (सं.कृ.निय.१५७) भुंजेइ चइत्तु परतत्तिं। (निय.१५७)

चइय न [चैत्य] प्रतिमा, देव, चैत्य। (भा.९१)

चउ वि [चतुर्] चार, संख्या विशेष। (निय.२३, भा.२३, द.१८, चा.४५) **-क्क** वि [ष्क] चार प्रकार। पावदि आराहणाचउक्कं। (भा.९९) **-गइ** स्त्री [गति] चतुर्गति, चार गतियाँ। लहु चउगइ चइऊणं। (चा.४५, भा.६०, निय.४२) **-णाण** न [ज्ञान] चार ज्ञान। (मो.६०) **-ण्णिकाय** न [निकाय] चार निकाय, चार समूह। (पंचा.११८) **-तीस** वि [त्रिंशत्] चौंतीस। (बो.३१, द.३५) चउतीस अइसयगुणा। (बो.३१) **-त्थ** न [थ] चतुर्थ, चौथा। (भा.११४, चा.२६) **-दस** त्रि [दशन्] चौदह, चतुर्दश। (भा.९७,बो.६१)चउदसगुणठाण---।(भा.९७)**-दसम** [दशम] चौदहवां। (बो.३५) **-भेद/ब्भेद** पुं न [भेद] चार भेद,चार प्रकार।(निय.१२,१७)सण्णाणं चउभेदं।(निय.१२) तेरिच्छा सुरगणा चउब्भेदा।(निय.१७)**-मुह** पुं [मुख] चतुर्मुख, ब्रह्मा, विधाता। कर्मों से विमुक्त आत्मा चतुर्मुख (ब्रह्मा) आदि के रूपों को प्राप्त होती है। सव्वण्हू विण्हू चउमुहो बुद्धो। (भा.१५०) **-विह/व्विह** वि [विध] चार प्रकार। (निय. १०८, भा.१६) सेवहि चउविहलिंगं। (भा.१११) **-वीस** स्त्री न [विंशति] चौबीस। पंचिदिय चउवीसं। (भा.२९) **-सट्ठि** स्त्री [षष्टि]

चौसठ। (द.२९)

चउण वि [च्यवन] च्युत, नीचे आना। (बो.२७)

चउर वि [चतुर्] चार। चउरो चिट्ठहि आदे। (मो.१०५) चउरो भण्णंति बंधकत्तारो। (स.१०९) **-असी** स्त्री [अशीति] चौरासी। (भा.१२०) चउरासीलक्खजोणिमज्झम्मि। (भा.४७, १३४)

चंकम वि [चंक्रम] इधर उधर घूमना। (प्रव. चा.१३)

चंकमण न [चंक्रमण] परिभ्रमण। (पंचा.७१)

चंद पुं [चन्द्र] चन्द्र, चन्द्रमा। (भा.१४३) **-प्पह** पुं [प्रभ] चन्द्रप्रभ, आठवें तीर्थकर का नाम। (ती.भ.४)

चक्क न [चक्र] चक्र, अस्त्रविशेष। **-धर/हर** पुं [धर] चक्रधर, चक्रवर्ती। कुलिसाउहचक्कधरा। (प्रव.७३) चक्कहररायलच्छी। (भा.७५) **-ईस** पुं [ईश] चक्रेश, चक्रवर्ती। चक्केसस्स ण सरणं। (द्वा.१०)

चक्खु पुं न [चक्षुष्] नेत्र, आँख, दर्शन का एक भेद। (स.३७६, प्रव.२९, निय.१४) चक्खू अचक्खू ओही। **-जुद** वि [युत] नेत्रों सहित, नेत्रों का आलम्बन। दंसणमवि चक्खुजुदं। (पंचा.४२) **-विसय** पुं [विषय] चक्षु के विषय। चक्खूविसयमागयं रूवं। (स.३७६)

चडक्क पुं न [दे] वचन की मार,चपेट,कठोर।दुज्जणवयण-चडक्कं। (भा. १०७)

चत्त वि [त्यक्त] छोड़ा हुआ, परित्यक्त। वोसट्ठचत्तदेहा। (द.३६) चत्ता (सं. कृ. निय.८८, प्रव.७९) चत्ता हि अगुत्तिभावं।

(नियं.८८) चत्ता (अ. भू. मो. ७८, ७९) ते चत्ता मोक्खमग्गम्मि।

चत्तारि वि [चतुर्] चार। जो चत्तारि वि पाए। (स.२२९, भा.११, चा.२३)

चदु वि [चतुर्] चार। चदुचंकमणो भणिदो। (पंचा.७१) **-कप्प** पुं [कल्प] चार कल्प। (द्वा.४१) ब्रह्म आदि चार कल्प। **-क्क** वि [ष्क] चतुष्क, चार प्रकार, चारों। पाणचदुक्कहि संबद्धो। (प्रव.ज्ञे.५३) **-ग्गदि** स्त्री [गत्ति] चार गतियाँ।चदुग्गदिणिवारणं। (पंचा.२) **-गुण** वि [गुण] चतुर्गुण, चार गुण। चदुगुणणिद्धेण। (प्रव.ज्ञे.७४) **-वियप्प** वि [विकल्प] चार विकल्प। (स.१७८, पंचा.१४९) इदि ते चदुव्वियप्पा। (पंचा.७४) **-विह** वि [विध] चार प्रकार। (स. १७०, पंचा.३०) चदुहिं (तृ. ब. पंचा.३०)

चमर पुं [चमर] चमर, चामर, जरी से निर्मित उपकरण विशेष, चँवर, प्रातिहार्य का एक भेद। (द.२९) चउसट्ठिचमरसहिओ। (द.२९)

चम्म न [चर्मन्] चमड़ा, खाल। (द्वा.४५) चम्ममयमणिच्चमचेयणं पडणं।

चय सक [त्यज्] छोड़ना, त्याग करना। (स.३५, भा.९१, मो.४) परदव्वमिणंति जाणिदुं चयदि। (स.३५) चयसु (वि./आ. म.ए.भा.९१) चयहि (वि./आ. म. ए. मो. ४) चएवि (अप. सं. कृ. मो.२८)

चर सक [चर] गमन करना, आचरण करना, चलना, जाना।

(प्रव. चा.३०, निय. १४४, बो. १०, भा.४, शी.५) चरियं चरउ सजोग्गं। (प्रव.चा.३०) जो चरदि संजदो खलु। (निय.१४४) चरंताण (व.कृ.द.५)

चरण पुं न [चरण] आचरण, जीवन चर्या, चरित्र। (स.१५५, प्रव.चा.२९,मो.५०,चा.४५,निय.१४८,द.३१) चरणं एसो दु मोक्खपहो। (स.१५५) चरणदो (पं.ए.निय.१४८) चरणाओ (पं.ए.द.३१)

चरमंत पुं [चरमान्त] सबसे अन्तिम। मिच्छादिट्ठी आदी, जाव सजोगिस्स चरमंतं। (स.११०)

चरित्त न [चरित्र] चरित, आचरण। (स.७, प्रव.२, निय.३, सू.२५,शी.५,मो.५७)णवि णाणं णचरित्तं। (स.७) **-वंत** वि [वन्त] चरित्रवान्, आचरणसंपन्न। अप्पा चरित्तवंतो। (मो.६४) **-सुद्ध** वि [शुद्ध] चारित्र से शुद्ध। णाणं चरित्तसुद्धं। (शी.६) **-हीण** वि [हीन] चारित्रहीन, चारित्ररहित। णाणं चरित्तहीणं। (शी.५, मो.५७) चरित्ताणि (द्वि.ब.पंचा.१६४) चरित्तादो (पं. ए. प्रव. ६)

चरिय न [चरित] आचरण। (पंचा.१५९)

चरिया स्त्री [चर्या] आचरण, गमन, प्रवृत्ति, चर्या। चरिया पमादबहुला। (पंचा.१३९) अपयत्ता वा चरिया। (प्रव. चा. १६) **-जुत्त** वि [युक्त] चर्यायुक्त,आचरणयुक्त।सागारण-गारचरियजुत्ताणं। (प्रव. चा. ५१)

चल वि [चल] चंचल, अस्थिर। चलमलिणमगाढत्तविवज्जिय।

(निय.५२) दंसणमुक्को य होइ चलसवओ। (भा. १४२)

चहुविह वि [चतुर्विध] चार प्रकार। चहुविहकसाए। (निय. ११५)

चाअ/चाग/चाय पुं [त्याग] छोड़ना, परित्यक्त। बाहिचाओ विहलो। (प्रव. चा. २०, भा.३,८१ निय.६५)

चाउरंग वि [चतुरङ्ग] चार प्रकार की, चार अवयव वाली। हिंडदि चाउरंगं। (मो.६७) छंडंदि चाउरंगं। (मो. ६८) **-बल** न [बल] चतुरङ्गिणी सेना। (द्वा.१०)

चादुर वि [चतुर्] चार, संख्या विशेष। **-गदि** स्त्री [गति] चतुर्गति। हिंडति चादुरगदिं। (शी.८) **वण्ण** पुं [वर्ण] चार वर्ण। उवकुणदि जो वि णिच्चं, चादुरव्वण्णस्स समणसंघस्स। (प्रव.चा.४९)

चारण पुं [चारण] ऋद्धि, आकाश में गमन करने की शक्ति। चारणमुणिरिद्धिओ। (भा.१६०)

चारित्त न [चारित्र]चारित्र,आचरण।(पंचा.१६२,स.१६३, प्रव.७ चा.२) **-पडिणिबद्ध** वि [प्रतिनिबद्ध] चारित्र को रोकने वाला। चारित्तपडिणिबद्धं। (स.१६३) **-भर** पुं न [भर] भार, बोझ। चारित्तभरं वहंतस्स।(निय६०)चारित्र के दो भेद हैं- सम्यक्त्वाचरण चारित्र और संयमाचरण चारित्र। निःशंकित, निःकांक्षित आदि आठ गुणों से युक्त जो यथार्थ ज्ञान का आचरण करता है उसे सम्यक्त्वाचरण चारित्र कहते हैं तथा संयम का आचरण संयमाचरण चारित्र है। जिणणाणदिट्ठी सुद्धं, पढमं सम्मत्तचरणचारित्तं। विदियं संजमचरणं, जिणणाणसदेसियं तं

पि।। (चा.५)

चावि अ [च+अपि] और भी । (पंचा.४२, स.२१) अहमेदं चावि पुव्वकालम्हि। (स.२१)

चालीस स्त्री न [चत्वारिंशत्] चालीस। सट्ठी चालीसमेव जाणेह। (भा.२९)

चि अ [चि] ही। (स.१२०) कम्मं चि य होदि पुग्गलं दव्वं। (स.१२०)

चिंत सक [चिंतय्] याद करना, विचार करना, ध्यान करना, चिंतन करना। (स.१८८, निय.९८, भा.१३०) चेदा चिंतेदि एयत्तं। (स.१८८) चिंतिज्जो (वि./आ. म. ए. निय. ९८, द्वा.२, ५८) चिंतिज्ज (वि./आ. म. ए. स. २३९) णिच्छयदो चिंतिज्ज। चिंतेइ (व. प्र. ए. भा. ११५) चिंतए (व. प्र. ए. निय. ९६) सोहं इदि चिंतए णाणी। चिंत/चिंतेहि (वि./आ. म. ए. भा. ४२,१०२) चिंतेह (वि./आ.म.ब.भा.२३) चिंतंतो (व.कृ.भा.१३०, स.२९१)

चिंतणीय वि [चिन्तनीय] चिन्तन करने योग्य।(भा.११५)जाव ण चिंतेह चिंतणीयाइं। (भा.११५)

चिंता स्त्री [चिन्ता] शोक, चिन्ता। (स. ३०३, निय.६,१८०) णवि चिंता णेव अट्टरुद्दाणि। (निय.१८०)

चिट्ठ अक [स्था] स्थित होना, बैठना, ठहरना, रुकना। (पंचा.१४४, प्रव. ज्ञे.८६) तवेहिं जो चिट्ठदे बहुविहेहिं। (पंचा.१४४)

चिट्ठा स्त्री [चेष्टा] प्रयत्न, आचरण। (स.३२५, पंचा. १६०)जह

चिट्ठं कुव्वंतो। (स.३५५) चिट्ठासु (स.ब.स.२४१)

चित्त न [चित्त] 1. हृदय, मन। (पंचा.१३५, निय.११६,स.२७१) चित्ते णत्थि कलुस्सं। (पंचा.१३५) **-पसाद** पुं [प्रसाद] चित्त की प्रसन्नता, चित्त की निर्मलता। चित्तपसादो य जस्स भावम्मि। (पंचा.१३१) बुद्धि, व्यवसाय, अध्यवसान, मति, विज्ञान, चित्त भाव और परिणाम ये सब एकार्थवाची हैं। (स.२७१) 2. वि [चित्र] विचित्र, नाना प्रकार का। (प्रव.५१) सव्वत्थ संभवं चित्तं। (प्रव.५१)

चिय/च्चिय अ [एव] ही, निश्चयात्मक अव्यय। (स.१३९, चा.६) जह जीवेण सहच्चिय। (स.१३९)

चिर न [चिर] बहुत समय, देर। (स.२८८) णत्थि चिरं वा खिप्पं। (पंचा.२६) **-काल** पुं [काल] बहुत समय, अधिकसमय। चिरकालपडिबद्धो। (स.२८८) **-संचिय** वि [संचित] बहुत समय से संचित, काफी समय से इकट्ठा किया हुआ। (भा.१०९) चिरसंचियकोहसिहिं। (भा.१०९)

चुअ वि [च्युत] च्युत, एक जन्म से दूसरे जन्म को प्राप्त। (मो. ८,७७)

चुक्क अक [भ्रंश्] चूकना, रहना, छूट जाना। (बो.२२, स.५)

चुलसीदी वि [चतुरशीति] चौरासी।(भा.१३६)

चूडामणि पुं स्त्री [चूड़ामणि] सिरमोर, सिरताज, शिखर का ऊपरी हिस्सा। (भा.९३)

चेइ/चेइय पुं न [चैत्य] प्रतिमा, देव। (भा.९१, बो.७८) चेइयबंधं

मोक्खं। (बो.८) **-हर** न [गृह] चैत्यगृह, जिनालय, मन्दिर। चेइहरं जिणमग्गो। (बो.८)

चेट्ठ अक [स्था] चेष्टा करना, प्रवृत्ति करना। तह चेट्ठंतो दुही जीवो।(स.३५५) चेट्ठंतो (व.कृ.)

चेद अक[चित्] अनुभव करना, जानना। तं दोसं जो चोददि। (स. ३८५) चेदयदि जीवरासी। (पंचा.२८)

चेद पुं [चेत्] आत्मा, जीव, चेतना। (पंचा.२७, स.११८)

चेदग वि [चेतक] 1. चेतक, चैतन्य। 2.पुं [चेतक] अनुभव करने वाला, जानने वाला, ज्ञाता। (पंचा.६८) जीवो चेदगभावेण कम्मफलं। (पंचा.६८)

चेदण पुं [चेतन] चैतन्य, जीव, चेतना, आत्मा। (पंचा.१६, प्रव. ज्ञे. ३१, निय. ३७) जीवगुणा चेदणा य उवओगो। (पंचा.१६) **-अप्पग** वि [आत्मक] चैतन्यमय, चैतन्यस्वरूप, चेतनात्मक। जीवा संसारत्था, णिव्वादा चेदणप्पगा दुविहा। (पंचा.१०९) **-गुण** पुं न [गुण] चैतन्गुण।(निय.३७)**-भाव** पुं [भाव] चैतन्यभाव। चेदणभावो जीवो। (निय.३७)

चेदणा स्त्री [चेतना] चेतना, उपयोग। (प्रव. ज्ञे.३१) परिणमदि चेदणाए, आदा पुण चेदणा तिधाभिमदा। (प्रव.ज्ञे.३१) चेदणाए (तृ.ए.) **-गुण** पुं न [गुण] चेतना गुण। (पंचा.१२७, निय.४६, स.४९) चेदणागुणमसद्दं। (पंचा.१२७)

चेदय न [चेतक] चेतक,ज्ञानी,चैतन्य।अप्पाणं चेदयाइं अण्णं च। (बो.७)

चेदि अ [च+इति] तथा, और,ऐसा। (स.२५७,२५८)

चेदि/चेदिय पुं न [चैत्य] प्रतिमा, मूर्ति। अरहंतसिद्धचेदिय। (पंचा.१६६) **-हर** न [गृह] चैत्यगृह, चैत्यालय। णाणमयं जाण चेदिहरं। (बो.७)

चेयणा स्त्री [चेतना] चेतना,जीव। (भा.६४)-**गुण** पुं न. [गुण] चेतना गुण। अव्वत्तं चेयणागुणमसद्दं। (भा.६४) **-भाव** पुं [भाव] चेतनाभाव, चैतन्यभाव। अत्थि धुवं चेयणाभावो। (बो.१६) **-सहिअ** वि [सहित] चेतना सहित। णाणसहाओ य चेयणासहिओ।(भा.६२)

चेल न [चेल] वस्त्र, कपड़ा। पंचविहचेलचायं। (भा.८१) चेलेण य परिगहिया। (सू.१३) **-खंड** पुं न [खण्ड] वस्त्रखण्ड, वस्त्र का टुकड़ा। गेण्हदि व चेलखंडं। (प्रव.चा.ज.वृ.२०)

चेव अ [च+एव] ही, पादपूर्ति अव्यय। (पंचा.७५, स.६,प्रव.४,चा.८) सो चेव हवदि लोओ। (पंचा.४) णाणमओ चेव जायदे भावो। (स.१२८)

चो वि [चतुर्] चार, संख्या विशेष। (द.३२) चोण्हं वि समाजोगे। चोण्हं (च./ष.ब.) (हे.संख्याया आमो ण्ह ण्हं ३/१२३)

चोक्ख वि [दे], चोखा, शुद्ध, पवित्र, साफ। चोक्खो हवेइ अप्पा। (द्वा.४६)

चोर पुं [चोर] चोर,तस्कर। चोरो त्ति जणम्मि वियरंतो। (स.३०१, लिं.१०)

छ

छ त्रि [षष्] छह संख्याविशेष। (पंचा.७६, स.३२१, निय.२१) **-क्क** वि [ष्क] छह प्रकार। (द्वा.४१) **-क्काय** न [काय] छहकाय, छह प्रकार के जीव। (बो.२,५९,पंचा.११०,१११) छक्कायसुहंकरं। (बो.२) पृथिवीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रसकाय ये छह भेद हैं। **-जीव** पुं [जीव] छह जीव। (स.२७६,भा.१३२) **-ण्णवदि** वि [नवति] छियानवें। (भा.३७) एक्केक्कंगुलिवाही, छण्णवदी होंति जाणमणुयाणं। **-त्तीस** स्त्री न [त्रिंशत्] छत्तीस। छत्तीसं तिण्णिसया। (भा.२८) **-द्दव्व** पुं न [द्रव्य] छह द्रव्य। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। एदे छद्दव्वाणि। (निय.३४) **-द्दस** त्रि [दश] सोलह। (भा.७९) **-प्पयार** पुं [प्रकार] छह प्रकार। ते होंति छप्पयारा। (पंचा.७६) खंधा हु छप्पयारा। (निय.२०) स्कन्ध के छह भेद हैं। (देखो-खंध) **-ब्भेय** पुं न [भेद] छह प्रकार। (निय.२१) **-व्विह** वि [विध] छह प्रकार। (स.३२१) छस्सु (स.ब.प्रव.चा.१८)

छंड सक [छर्दय्/मुच्] छोड़ना, त्याग करना। (प्रव.चा.१९, सू.१४, मो.६८) सुत्तठिओ जो हु छंडए कम्मं। (सू.१४) छंडंति (व.प्र.ब.मो.६८) छंडिऊण (सं.कृ.मो.७)

छंडिय वि [मुक्त] छोड़ा हुआ। इदि समणा छंडिया सव्वं। (प्रव.चा.१९)

छंद पुं न [छन्दस्] छन्द, वृत्त। वायरणछंदवइसेसिय। (शी.१६)

छत्त न [छत्र] छत्र, छाता, आतपत्र। (बो.४५)

छद्दि स्त्री [दि] वमन, उल्टी। (भा.४०) छद्दिखरिसाणमज्झे। (भा.४०)

छदुमत्थ वि [छद्मस्थ] असर्वज्ञ, सम्पूर्ण ज्ञान से रहित, अज्ञानी। (प्रव.चा.५६)

छल न [छल] कपट, माया, छल। चुक्किज्ज छलं ण घेत्तव्वं। (स.५)

छह वि [षष्] छह। (बो.५३) छहसंहणणेसु भणियणिग्गंथा। (बो.५३) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] छहद्रव्य। (द.१९) छहदव्वणवपयत्था। (द.१९)

छादाल स्त्री [षट्चत्वारिंशत्] छयालीस। (भा.१०१) छादालदोसदूसिय। (भा.१०१)

छाया स्त्री [छाया] छाया, छाँव। (निय.२३, मो.२५) छायातवट्ठियाणं। (मो.२५)

छिंद सक [छिद्] छेदना, खण्ड-खण्ड करना, काटना, विभक्त करना।(भा.१२१,लिं.१६) छिंददि य भिंददि य तहा। (स.२३८) छित्तूण (सं.कृ.मो.९८)

छिज्ज सक [छिंद] छेदना, खण्डित करना, काटना। (स.२०९, २९४) छिज्जदु वा भिज्जदु वा। (स.२०९) छिज्जदु (वि./आ.प्र.ए.) छिज्जति (व.प्र.ए.स.२९५)

छिद्द न [छिद्र] छेद, दरार, कटाव, विवर, गड्ढा। (पंचा.१४१) पावासवं छिद्दं। (पंचा.१४१)

छिण्ण वि [छिन्न] खण्डित, कटे हुए, छिन्न-भिन्न। (भा.२०) छिण्णा णाणत्तमावण्णा। (स.२९४)

छुधा/छुह/छुहा स्त्री [क्षुध्] छुधा, भूख। (प्रव.चा.५२) रोगेण वा छुधाए। (प्रव.चा.५२) छुहतण्हभीरु। (निय.६) ण य तिण्हा णेव छुहा। (निय.१७९)

छेद पुं [छेदय्]छिन्न करना, तोड़ना, काटना। (वि.कृ.स.२९५)

छेद पुं [छेद] छेद, नाश, नष्ट। (प्रव.चा.११) छेदो समणस्स कायचेट्ठम्मि। (प्रव.चा.११) **-उवट्ठावग न** [उपस्थापक] संयम के छेद का फिर स्थापन करने वाला, संयम विशेष। (प्रव.चा.९) समणो छेदोवट्ठावगो होदि। (प्रव.चा.९) **-विहीण** वि [विहीन] छेद विहीन, भङ्ग रहित। छेदविहूणो भवीय सामण्णे। (प्रव.चा.१३)

छेदण वि [छेदन] छेदन करने वाला, काटने वाला, तोड़ने वाला, छिन्नभिन्न करने वाला।(निय.६८)बंधणछेदणमारण।(निय.६८)

छेदणअ न [छेदनक] छैनी। पण्णाछेदणएण उ, छिण्णा णाणत्तमावण्णा। (स.२९४)

ज

ज स [यत्] जो। जं (प्र.ए.चा.३) जो (प्र.ए.चा.३९) जत्तो (पं.ए. प्रव.५) जत्थ (स.ए.भा.३३) जो वावीसपरीसहसहंति।(सू.१२)

जइ अ [यदि] 1.यदि, जो। (स.२८९,२९०, सू.१८, भा.४) जइ दंसणेण सुद्धा। (सू.२५) 2. पुं [यति] मुनि, इन्द्रियविजयी। (चा.२७,भा.५)**-धम्म** पुं न [धर्म] यतिधर्म।सुद्धं संजमचरणं

जइधम्मं णिक्कलं वोच्छे। (चा.२७)

जइआ/जइया अ [यदा] जो, जितने, जिस प्रकार, जिस समय। (स.१८३,२२२) जइया उ होदि जीवस्स।

जं अ [यत्] जो, क्योंकि, जो कुछ, परन्तु, जैसे।(पंचा.८२,९०, स.१४५,१७२,२६०, बो.४) कम्मं जं पुव्वकयं। (स.३८३)

जंगम वि [जङ्गम] चलने वाला, एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करने वाला। (बो.१२) जंगमेण रूवेण। (बो.१२) **-देह** न [देह] जंङ्गम शरीर, चलता-फिरता शरीर। सपरा जंगमदेहा। (बो.९)

जंत न [यन्त्र] यन्त्र, शिल्पकर्म। जंतेण दिव्वमाणो। (लिं.१०)

जंप सक [जल्प्] बोलना, कहना, जह को वि णरो जंपदि। (स.३२५) राएण कदंति जंपदे लोगो। (स.१०६) जंपिऊण (सं.कृ.भा.१६३) जंपेमि (व.प्र.ए.मो.२९)

जग न [जगत्] संसार। (प्रव.२९) अक्खातीदो जगमसेसं। जगदि (स.ए.प्रव.२६) सव्वे वि य तग्गया जगदि अट्ठा।

जग्ग अक [जागृ] जागना, नींद से उठना, सचेत होना। (मो.३१) जो सुत्तो ववहारे, सो जोई जग्गए सकज्जम्मि। (मो.३१) जग्गाविज्जइ (प्रे.व.प्र.ए.) कम्मेहिं सुवाविज्जइ, जग्गाविज्जइ तहेव कम्मेहिं। (स.३३३)

जठर न [जठर] पेट, उदर। (भा.४०) जठरे वसिओ सि जणणीए। (भा.४०)

जण पुं [जन] 1.मनुष्य, आदमी। चोरो त्ति जणम्हि वियरंतो।

(स.३०१) जणेहिं (तृ.ब.प्रव.चा.२३) मा जणरंजणकरणं। (भा.९०) **-वद** पुं [पद] जनपद, नगर। 2. जन्म। जणुव्वेगो। (निय.६)

जण सक [जनय्] उत्पन्न करना, पैदा करना। जणयंति विसयतण्हं। (प्रव.७४) जणयंति (व.प्र.ए.) जणेदि (व.प्र.ए.निय.१२८)

जणण न [जनन] उत्पत्ति। (निय.१७८) मुच्छादिजणणरहिदं। (प्रव.चा.२३)

जणणी स्त्री [जननी] माता, जननी। (भा.१७,१९,४०) जणणीए (ष.ए.भा.४०) जणणीण (ष.ब.भा.१७)

जद वि [यत] यत्नाचार, उपयोगमय प्रवृत्ति। (प्रव.चा.१८)

जदा अ [यदा] जब, जिस समय। (पंचा.१४३, प्रव.९) कोधो व जदा माणो। (पंचा.१३८)

जदि अ [यदि] 1.देखो जइ। (पंचा.९२, स.८५, प्रव.६९) **-वि** अ [अपि] लेकिन, किन्तु, यद्यपि। कुव्वदु लेवो जदिवि अप्पं। (प्रव.चा.५१) 2.पुं [यति] देखो जइ। (स.१५६, प्रव.ज्ञे.९७) जदीणं (ष.ब.प्रव.ज्ञे.९७)

जध/जधा अ [यथा] जैसे, जिस तरह, जिस प्रकार। (प्रव.६८) **-जाद** वि [जात] यथाजात, वास्तविकरूप में उत्पन्न। जधजादरूवजादं। (प्रव.चा.५) **-त्थपद** वि [अर्थपद] यथावस्थित पदार्थ। जधत्थपदणिच्छदोपसंतप्पा। (प्रव.चा.७२) **-आदिच्च** पुं [आदित्य] जिस प्रकार सूर्य। सयमेव जधादिच्चो। (प्रव. ६८)

जप्प पुं [जल्प] वचनविस्तार, कथन। (निय.९५,१५०) जप्पेसु जो

ण वट्टइ। (निय.१५०)

जम्म पुं न [जन्मन्] जन्म, उत्पत्ति, उद्‌भव। (निय.४७, बो.२९, भा.२७) जम्मजरामरणपीडिओ। (भा.३४) **-अंतर** न [अंतर] जन्मान्तर, दूसरे जन्म में। (भा.४) **-वेलि** स्त्री [वल्लि] जन्मवेल, जन्मरूपी लता। ते जम्मवेलिमूलं। (भा.१५२)

जम्हा अ [यस्मात्] क्योंकि, इसलिए, यतः, चूंकि, जिस कारण। (पंचा.९३,१३३, स.३३९,३४६, निय.३६) जम्हा तम्हा गच्छदु। (स.२०९)

जय अक [जय] जयवन्त होना, पूजा को प्राप्त होना। सुदणाणि भद्दबाहू, गमयगुरू भयवओ जयउ। (बो.६१) जयउ (वि./आ.प्र.ए.)

जय पुं [जय] जय, विजय, जीत। (मो.६३) जयं च काऊण जिणवरमएण। (मो.६३)

जया अ [यदा] जब,जिस समय। जया विमुंचदे चेदा। (स.३१५)

जर वि [जरत्] बूढ़ा,वृद्ध। (निय.४७,भा.६१,द.१७) जरमरणवाहिहरणं। (द.१७)

जरा स्त्री [जरा] बुढ़ापा। (निय.६,४२)

जल न [जल] पानी, जल। (निय.२२, भा.२१, प्रव.ज्ञे.७५) **-चर** पुं स्त्री [चर] जल में रहने वाले जीव। जलचरथलचरखचरा। (पंचा.११७) **-बुब्बुद** वि [बुद्‌बुद] जल का बबूला। (द्वा.५)

जल अक [ज्वल्] जलना, दहना। मारुयवाहा विवज्जिओ जलइ। (भा.१२२)

जलण पु [ज्वलन] अग्नि, आग। हिमजलणसलिल। (भा.२६)

जसु पुं [दि] आहार। (लिं.२१) पुंस्चलिघरि जसु भुंजइ। (लिं.२१)

जह अ [यथा] जिस तरह, जैसे, जिस प्रकार। (पंचा.३३, स.८, नियं.४८, द.१०, सू.१८) जह राया ववहारा। (स.१०८)

जह सक [हा] त्यागना, छोड़ना। (प्रव.७९,८१, चा.१३,१४, स.१८४,४११) ण जहदि णाणी उ णाणित्तं। (स.१८४) जहित्तु (सं.कृ.स.४११)

जहण्ण वि [जघन्य] निष्कृष्ट, हीन, जघन्य, अत्यन्त कम। जम्हा दु जहण्णादो। (स.१७१) जहण्णादो (पं.ए.) **-पत्त** पुं [पात्र] जघन्यपात्र। (द्वा.१८) **-भाव** पुं [भाव] जघन्यभाव। दंसणणाण-चरित्तं, जं परिणमदे जहण्णभावेण। (स.१७२)

जहा अ [यथा] देखो जह। (स.२१८, प्रव.३०, सू.३) **-कम** न [क्रम] यथाक्रम, अनुक्रम, क्रम के अनुसार। जहाकमं समासेण। (द.१) **-कमसो** अ [क्रमशः] यथाक्रम से, एक-एक करके। इय णायव्वा जहाकमसो। (बो.४) **-खाद** न [ख्यात] यथाख्यात, निर्दोषचरित्र, परिपूर्ण संयम। संखेवेणं जहाखादा। (बो.५८) **जंग्ग** वि [योग्य] यथायोग्य, उसी के अनुसार, यथानुरूप। पविसंति जहाजोग्गं। (प्रव. ज्ञे.८६) **-बल** न [बल] यथाशक्ति। तम्हा जहाबलं जोई। (मो.६२)

जहेव अ [यथैव] जैसे ही, समान। (स.५७, १७६) बाला इत्थी जहेव पुरिसस्स। (स.१७४)

जा अ [यावत्] जबतक, जो। (पंचा.१३९, स.१९, नियं.६९,

भा.१३१) उत्थरइ जा ण जर ओ। (भा.१३१)

जा सक [या] प्राप्त करना, जानना, जाना। तेहिं वि ण जाइ मोहं। (भा.१२९, मो.२१) जाओ (अनि.भू.भा.३३,५०,५३) मोहो खलु जादि तस्स लयं। (प्रव.८०)

जाइ स्त्री [जाति] जन्म, जाति, कुल,नामकर्म का एक भेद। जाइजरमरणरहियं। (निय.१७६) देसकुलजाइसुद्धा।

जाण सक [ज्ञा] जानना, समझना, ज्ञान प्राप्त करना। (स.२) तं जाण परसमयं। (स.२) जाणइ/जाणदि (व.प्र.ए.सू.५, भा.३१, स.१४३, २०१) जाण (वि./आ. म.ए.स. २१६, निय.४६,भा.२ चा.४३, बो.७) जाणिज्जइ (वि.प्र.ए.सू.१६) जाणिज्जह (वि.म.ब.भा.८७) जाणिऊण (सं. कृ.सू.६, चा.४०) जाणंतो (व.कृ.स. २९०) जाणादि (व.प्र.ए.प्रव. ज्ञे.४९, ६५)

जाण वि [जानन्] जानता हुआ। (प्रव.५२)

जाणअ/जाणग वि [ज्ञायक] जानने वाला, ज्ञायक। (स.६,७, प्रव३३, मो.२९) जाणओ दु जो भावो। (स.६) जाणगो तेण सो होदि। (स.२१०,२१३) **-भाव** पुं [भाव] ज्ञायक भाव।जाणगभावो णियदो। (स.२१४)

जाणणा न [ज्ञान] जानना, जानकारी, बोध। (प्रव.३४) तज्जाणण हि णाणं, सुत्तस्स य जाणणा भणिया। (प्रव.३४)

जाणय वि [ज्ञायक] जानने वाला। जीवो दु जाणयो णाणी। (स.४०३) **-सहाव** [स्वभाव] ज्ञायक स्वभाव। अप्पाणं मुणदि जाणयसहावं। (स.२००)

जाणि वि [ज्ञानिन्] ज्ञाता, जानने वाला। (प्रव. ज्ञे. ८२, नियं.६९)

जाद वि [जात] उत्पन्न हुआ, पैदा। (पंचा.२९, प्रव.१९, नियं.१५८) जादो सयं स चेदा। (पंचा.२९)

जाम अ [यावत्] जब तक। विसएसु णरो पवट्टए जाम। (मो.६६)

जाय अक [जन्] उत्पन्न होना, जन्म लेना। (पंचा.१७, स.१९२, प्रव. ज्ञे.७५) जायदि कम्मस्स वि णिरोहो। (स.१९१) जायइ/जायदि (व.प्र.ए.स.१९२) जायदे (व.प्र.ए.पंचा.१७) जायंते (व.प्र.ब.पंचा.१२९, स.१३१, प्रव. ज्ञे.७५)

जायणा स्त्री [याचना] याचना, प्रार्थना। गंथग्गाहीय जयणासीला। (मो.७९)

जरिसया वि [यादृशक] जैसा, जिस तरह का। (पंचा.११३, नियं.४७) जीवो भावं करेदि जारिसयं। (पंचा.५७)

जाव/जावं अ [यावत्] जब तक, जो कि। (पंचा.१४१, स.६९, प्रव. ज्ञे.७२, भा.११५) जावत्तावत्तेहिं पिहियं। (पंचा.१४१) जावं अपडिक्कमणं। (स.२८५)

जिग्घ सक [घ्रा] सूघना, गन्ध लेना। ण तं भणइ जिग्घ मंति से चेव। (स.३७७) जिग्घ (वि./आ.म.ए.)

जिण पुं [जिन] जिन, अर्हत्, केवलज्ञानी, सर्वज्ञ, जितेन्द्रिय। जो कर्ममलरहित, शरीर रहित, अतीन्द्रिय, केवलज्ञानयुक्त, विशुद्धात्मा, परमेष्ठी, परमजिन, शिवंकर, शाश्वत् और सिद्ध है। मलरहिओ कलचत्तो अणिंदिओ केवलो विसुद्धप्पा। परमेट्ठी

परमजिणो, सिवंकरो सासओ सिद्धो।। (मो.६) **-अवमद** वि [अवमत] जिनकथित। (स.८५) **-आणा** स्त्री [आज्ञा] जिनेन्द्र देव की आज्ञा। (भा.९१) **-इंद** पुं [इन्द्र] जिनेन्द्र। (प्रव. चा. ४८) **-उवएस/उवदेस** पुं [उपदेश] जिनेन्द्र द्वारा प्रतिपादन, सर्वज्ञ का।(स.१५०, निय.१७, प्रवं. १७, मो. १३) एसो जिणोवदेसो।(स.१५०)**-उत्तम** वि [उत्तम] जिनोत्तम, सर्वज्ञ। (पंचा.३) **-कहिय** वि [कथित] सर्वज्ञ द्वारा कथित, सर्वज्ञ द्वारा प्रतिपादित। जिणकहियपरमसुत्ते। (निय.१५५) **-क्खाद** वि [ख्यात] जिनकथित, सर्वज्ञ कथित। (प्रव. चा. ६४) **-णाण** न [ज्ञान]सर्वज्ञ का ज्ञान। जिणणाणदिट्ठिसुद्धं।(चा.५)**-दंसण** न [दर्शन] जिनदर्शन। जिणदंसणमूलो। (द.११) **-देव** पुं [दिव] जिनदेव, वीतराग प्रभु। (मो.३०) **-धम्म** पुं न [धर्म] जिन धर्म। (भा.८२) **-पडिमा** स्त्री [प्रतिमा] जिन प्रतिमा, जिनमूर्ति। (बो.३) **-पण्णत्त** वि [प्रज्ञप्त] जिनदेव प्रतिपादित, कथित। (भा.६२, मो.१०६) एवं जिणपण्णत्तं। (द.२१) **-भणिय** वि [भणित] सर्वज्ञकथित। (चा.६, सू.५) **-भत्ति** स्त्री [भक्ति] जिनेन्द्रभक्ति, जिनभक्ति। तं कुण जिणभत्तिपरं। (भा.१०५) **-भवण** न [भवन] जिनालय। (बो.४२) **-भावण** पुं [भावन] जिनचिंतन। जिणभावण भविओ धीरो। (भा.१२९) **-भावणा** स्त्री [भावना] जिनेन्द्र प्रणीत भावना, जिनेन्द्रकथित चिंतन। भावहि जिणभावणा जीवा। (भा.८) **-भासिद** वि [भाषित] जिनेन्द्र कथित। उवसंतखीणमोहो,मग्गं जिणभासिदेण समुपगदो।

(पंचा.७०) **-मग्ग** पुं [मार्ग] जिनमार्ग, जिनेन्द्रदेव द्वारा प्रतिपादित आगमपथ। तम्हा जिणमग्गादो। (प्रव.९०) जिणमग्गादो (पं.ए.)जिणमग्गे (स.ए.निय.१८५, बो.२) जिण मग्गम्मि (स.ए.लिं.१३) **-मद/मय** न [मत] जिनमत, जिनसिद्धान्त। जिणमदम्मि (स.ए.प्रव.चा.१२) जिणमयवयणे। (भा.१५९) **-मुद्दा** स्त्री [मुद्रा] जिनमुद्रा, जिनदेव की छवि। (बो.३) दृढ़ता से संयम धारण करना संयममुद्रा, इन्द्रियों को विषयों से विमुख करना इन्द्रिय मुद्रा, कषायों के वशीभूत न होना कषायमुद्रा और ज्ञान स्वरूप में स्थिर होना,ज्ञानमुद्रा है।इस प्रकार जिनमुद्राएं कही गई हैं। (बो.१८) **-लिंग** न [लिङ्ग] जिनलिङ्ग, जिनदेव द्वारा प्रतिपादित मार्ग का अवलम्बन, सर्वज्ञ प्रणीत मार्ग का अनुसरण। जिणलिंगेण वि पत्तो। (बो.१४, भा.३४, ४९) **-वयण** न [वचन] जिनवचन, सर्वज्ञवाणी, वीतरागवाणी। (पंचा.६१, भा.११७, सू.१९) **-वर** पुं [वर] जिनदेव, जिनवर, जिनों में श्रेष्ठ। (पंचा.५४,स.४६,प्रव.४३,निय.८९, भा.१५२, द.१) **-वरवसह** पुं [वरवृषभ] प्रधान गणधर। (प्रव.चा.१) **-वरिंद** पुं [वरेन्द्र] सर्वज्ञ।(प्रव.चा.२४,भा.७६,मो.७) **-वसह** पुं [वृषभ] जिनश्रेष्ठ। (प्रव.२६) **-बिंब** न [बिम्ब] जिनबिम्ब, जिनदेव का आकार,सर्वज्ञ का प्रतिरूप।(बो.१५)**-सत्थ** पुं न [शास्त्र] जिनागम। जिणसत्थादो अट्ठे। (प्रव.८६) अर्हन्त भगवान् द्वारा कथित, गणधरों के द्वारा अच्छी तरह रचित वचन, जिनागम या जिनशास्त्र है। अरहंतभासियत्थं, गणधरदेवेहिं

गंथियं सम्मं। (सू.१) जिनागम या जिनशास्त्र सर्वज्ञ के वे वचन हैं, जो परस्पर विरोध से रहित हैं, उनको जो श्रमण जीवादि तत्त्वों के मनन पूर्वक धारण करता है उसका उद्यमश्रेष्ठ है। (प्रव.चा.३२-३७) -**समय** पुं [समय] जिनशासन, जिनागम, जिनवचन। णिद्दिट्ठा जिणसमए। (निय.३४) -**सम्म** न [सम्यग्] जिनोपदिष्ट सम्यक्त्व। जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित तत्त्व के प्रति आठ अङ्ग सहित जो श्रद्धान है, वह जिनसम्यक्त्व है। (चा.८) -**सम्मत्त** न [सम्यक्त्व] जिनश्रद्धान। (चा.११,१४) -**सासण** न [शासन] जिनशासन, जिनागम, जिनवचन। रायादिदोसरहिओ, जिणसासणमोक्खमग्गुत्ति। (चा.३९) -**सुत्त** न [सूत्र] जिनसूत्र, जिनवचन। सम्मत्तस्स णिमित्तं, जिणसुत्तं तस्स जाणया पुरिसा। (निय.५३) जिनसूत्र को जानता हुआ जीव संसार की उत्पत्ति के कारणों को नाश करता है। सुत्तम्मि जाणमाणो, भवस्स भवणासणं च सो कुणदि। (सू.३) जिणा (प्र.ब.स.३९०) जिणस्स (ष.ए.द.१८) जिणाणं (ष.ब.पंचा.१)

जिण सक [जि] जीतना, वश में करना। जे इंदिए जिणित्ता। (स.३१) जिणित्ता (सं.कृ.स.३२)

जित्तिय अ [यावत्] जितने। (स.३३४) सुहासुहं जित्तियं किंचि। (स.३३४)

जिद/जिय वि [जित] जीता हुआ,पराभूत करने वाला,जीतने वाला। -**इंदिय** वि [इन्द्रिय] इन्द्रियों को जीतने वाला। (स.३१) तं खुल जिदिंदियं। (स.३१) -**कसाअ** पुं [कषाय] कषाय को

जीतने वाला, जितकषाय। पंचेंदियसंवुडो जिदकसाओ। (प्रव.चा.४०) वावीसपरीसहा जिदकसाया। (बो.४४) **-भव** पुं [भव] संसार को जीतने वाला। णमो जिणाणं जिदभवाणं। (पंचा.१)**-मोह** पुं [मोह]मोह को जीतने वाला। तं जिदमोहं साहुं।(स.३२)

जिप्प सक [जि] जीत जाना। (मो.२२) जो कोडिए ण जिप्पइ। (मो.२२) जिप्पइ (व.प्र.ए.)

जिव अक [जीव्] जीवनधारण करना, जीवित रहना। मरदु व जीवदु व जीवो। (प्रव.चा.१७) जीवदु (वि./आ.प्र.ए.)

जीव पुं न [जीव] चेतना, आत्मा, प्राणी,। (पंचा.१२७, स.१४६, प्रव.ज्ञे.३५, चा.४, शी.१९,लिं.९,भा.८) जो प्राणों से जीवित है, वह जीव है। जीवो त्ति हवदि चेदा। (पंचा.२७) जो रस, रूप, गन्ध रहित है, अव्यक्त, चेतनागुण युक्त, शब्द रहित, जिसका किसी चिह्न अथवा इन्द्रिय से ग्रहण नहीं होता और जिसका आकार कहने में नहीं आता, वह जीव है। अरसमरूवमगंधं, अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं। जाण अलिंगग्गहणं, जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं।। (स.४९, निय.४६, भा.६४)मोह से रहित जीव है।जीवो ववगदमोहो।(प्रव.८१)जो चार प्राणों से जीवित है वह जीव है। पाणेहिं चदुहिं जीवदि, जीवस्सदि जो हि जीविदो पुव्वं। (प्रव.५५) जीव ज्ञान स्वभाव और चेतना सहित है। णाणसहाओ य चेदणासहिओ। (भा.६२) पंचास्तिकाय में जीव के अनेक भेद किये गये हैं- चैतन्य गुण से युक्त होने से जीव एक

प्रकार का है। ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग के भेद से दो प्रकार का है। कर्मचेतना, कर्मफल चेतना और ज्ञान चेतना से युक्त या उत्पाद,व्यय एवं ध्रौव्यरूप होने से तीन प्रकार का है।चार गतियों में परिभ्रमण करने के कारण चार प्रकार का है। चारों दिशाओं एवं ऊपर व नीचे गमन करने वाला होने से छह प्रकार का है। सप्तभङ्ग के कारण सात प्रकार का है।आठकर्मों के कारण आठ प्रकार का है।नव-पदार्थों रूप प्रवृत्ति होने के कारण नव प्रकार का है। पृथिवी, जल,तेज,वायु, साधारण वनस्पति, प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय इन दश भेदों से युक्त होने से दश प्रकार का है। (पंचा.७१,७२) जीव का विवेचन मुक्त-संसारी, त्रस-स्थावर,गति,भव्य एवं अभव्य की दृष्टि से भी किया गया है। (पंचा.१०९,१२४) जीवस्स चेदणदा। (पंचा.१२४) जीव का गुण चेतनता है। -**काय** पुं [काय] जीव समूह, जीवराशि। (प्रव.४६) -**गुण** पुं न [गुण] जीवगुण। जीवगुणा चेदणा य उवओगो। (पंचा.१६) चेतना और उपयोग के अतिरिक्त औपशमिकादि भाव भी जीव के गुण हैं। (पंचा.५६) -**घाद** पुं [घात] जीवघात, जीवों का विनाश। (लिं.९) किसिकम्मवणिज्जजीवघादं। (लिं.६) -**ट्ठाण/ठाण** न [स्थान] जीवस्थान। (स.५५, निय.७८, बो.३०) पज्जत्तीपाणजीवठाणेहिं। (बो.३०) -**णिकाय** पुं [निकाय] जीव समूह । एदे जीवणिकाया। (पंचा.११२,१२०, प्रव. ज्ञे.९०) -**णिबद्ध** वि [निबद्ध] जीव के साथ बंधे हुए। जीवणिबद्धा एए। (स.७४) -**त्त** वि [त्व] जीवत्व,

जीवपना। जीवत्तं पुग्गलो पत्तो। (स.३५,६४) **-दया** स्त्री [दया]जीवदया, जीवों पर करुणा। (शी.१९) जीवदया दमसच्चं। (शी.१९) **-परिणाम** पुं [परिणाम] जीवस्वभाव। जीवपरिणामहेदुं। (स.८०) **-भाव** पुं [भाव] जीवभाव, जीवस्वभाव। (पंचा.१७,स.१४०) संताणंता य जीवभावादो। (पंचा.५३) **-मय** पुं [मय] जीवमय। (प्रव.ज्ञे.३०) **-राय** पुं [राजन्] जीवरूपी राजा। (स.१८) एवं हि जीवराया। **-रासि** पुं स्त्री [राशि] जीवराशि, जीवसमूह। चेदयदि जीवरासी। (पंचा.३८)**-विमुक्क** वि [विमुक्त] जीव रहित।जीवविमुक्को सवओ। (भा.१४२) **-संसिद** वि [संश्रित] जीवाश्रित, जीवों से सहित। (पंचा.११०) **-सण्णा** स्त्री [संज्ञा] जीवसंज्ञा, जीव के शरीर रूप कारण। एकेन्द्रिय आदि कारण, सूक्ष्म-बादर आदि कारण।(स.६७)**-समास** पुं [समास] जीवसमास,जीवों का संक्षेपीकरण। (भा.९७) **-सरूव** [स्वरूप] जीवस्वरूप, जीव का लक्षण। णाणं जीवसरूवं। (निय.१७०) **-सहाव** पुं [स्वभाव] जीवस्वभाव। (पंचा.३५, भा.६३) जेसिं जीवसहावो। (भा.६३) जीवो (प्र.ए.स.१५०,पंचा.१२८)जीवं(द्वि.ए.पंचा.१२७) जीवा (प्र.ब.पंचा.१०८, स.२२८) जीवे (द्वि.ब.स.१४१) जीवेण (तृ.ए.निय.९०) जीवेहिं (तृ.ब.पंचा.९०) जीवस्स (च./ष.ए.निय.४२) जीवाण/जीवाणं (ष./च.ब.पंचा.१९, स.२६५) जीवादो (पं. ए.स.२८) जीवम्हि (स.ए.स.१०५)

जीव अक [जीव्] जीना। (पंचा.३०, स.२५१, प्रव.ज्ञे.५५)

आऊदएण जीवदि।(स.२५२)जीवदि(व.प्र.ए.स.२५१, पंचा.३०)जीवस्सदि (भवि. प्र.ए.पंचा.३०, प्रव.ज्ञे.५५)

जीव सक [जीव्] जीवित करना। जीवेमि (उ.ए.स.२५०) जीविज्जामि (भवि.उ.ए.स.२५०) जीवावेमि (प्रे.उ.ए.स.२६१)

जीविद/जीविय न [जीवित] जीवन, जिन्दगी। (पंचा.३०, स.२५१, प्रव.चा.४१) कहं णु ते जीवियं कहं तेहिं। (स.२५२)

जुंज सक [युज्] जोड़ना, संयुक्त करना, लगाना। अप्पाणं जुजं मोक्खपहे। (स.४११) जुजं (वि./आ.म.ए.) जो जुंजदि अप्पाणं। (निय.१३९) जुजंदि/जुंजदे (व.प्र.ए.निय.१३७, १३८,१३९)

जुगवं अ [युगपत्] एक ही साथ, एक ही समय में। (प्रव.४७,४९) अक्खाणं ते अक्खा, जुगवं ते णेव गेण्हंति। (प्रव.५६)

जुगुप्पा स्त्री [जुगुप्सा] घृणा, ग्लानि। जो ण करेदि जुगुप्पं। (स.२३१)

जुज्ज सक [युज्] जोड़ना, मिलाना। ण वि जुज्जदि असदि सब्भावे। (पंचा.३७) तं णिच्छए ण जुज्जदि।(स.२९)

जुट्ठ वि [जुष्ट] सेवित, सेवा योग्य। जुट्ठं कदं व दत्तं। (प्रव.चा.५७)

जुत्त वि [युक्त] उचित, योग्य, संयुक्त। (पंचा.१५३, प्रव.७०, निय.१४९) जुत्ता ते जीवगुणा। (पंचा.५६) **-आहार** पुं [आहार] योग्याहार, उचित आहार। जुत्ताहारविहारो। (प्रव.चा.२६)

जुत्ति स्त्री [युक्ति] उपाय, साधन, जुत्ति त्ति उवाअं त्ति य, णिरवयवो होदि णिज्जेत्ति। (निय.१४२)

जुद वि [युक्त] संयुक्त, सम्बद्ध, मिला हुआ। (पंचा.१४४, मो.४६) संवरजोगेहिं जुदो। (पंचा.१४४)

जुद्ध न [युद्ध] लड़ाई, संग्राम। (स.१०६, लिं.१०) जोधेहिं कदे जुद्धे। (स.१०६)

जुवइ स्त्री [युवति] तरुणी, जवान स्त्री। जुवईजणवेड्ढिओ। (भा.५१) **जुवईजण** समास पद है, **जुवइ** की हृस्व इ को ई हो गया है। (हे. दीर्घहृस्वौ मिथौ वृत्तौ १/४)।

जुव्वण न [यौवन] तारुण्य, जवानी, युवावस्था। (शी.१५) जुव्वणलावण्णकंतिकलिदाणं। (शी.१२)

जूगा स्त्री [यूका] जूँ,शिर में रहने वाला कीड़ा विशेष।जूगा-गुंभीमक्कण। (पंचा.११५)

जूव न [यूप] जुआ, द्यूत। (लिं.६) कलहं वादं जूवा। (लिं.६)

जे अ [ये] जो। जे जम्हि गुणो दव्वे। (स.१०३)

जेट्ठ वि [ज्येष्ठ] प्रधान, प्रमुख, श्रेष्ठ। आगमचेट्ठा तदो जेट्ठा। (प्रव.चा.३२)

जेण अ [येन] लक्षण सूचक अव्यय। जेण दु एदे सव्वे। (स.५५, पंचा.१५७, प्रव.८)

जो अ [यत्] जब तक, जो। अवगयराधो जो खलु। (स.३०४) जीवस्सदि जो हु जीविदो पुव्वं। (पंचा.३०)

जो सक [दृश्] देखना, साक्षात्कार करना। जं जाणिऊण जोई, जोअत्थो जोइऊण अणवरयं। (मो.३) जोइऊण (सं.कृ.मो.३)

जोअ पुं [जोग] मन, वचन, और शरीर की प्रवृत्ति। (मो.३) -त्थ

वि [अर्थ] योगार्थ, योग का प्रयोजन।(मो.३०)

जोइ पुं [योगिन्] योगी, मुनि। (निय.१५५, सू.६, चा.४०) जो मिथ्यात्व, अज्ञान, पाप और पुण्य को मन, वचन और कायरूप त्रियोग से छोड़कर मौनव्रत को धारण करता है, वह योगी है। मिच्छत्तं अण्णाणं, पावं पुण्णं चएवि तिविहेण। मोणव्वए जोई, जोयत्थो जोयए अप्पा।। (मो.२८) विस्तार के लिए देखें -मो.३-३६ एवं ४१,४२,५२,६६,८४। जोइणो (प्र.ब.मो.७१)

जोग पुं [योग] योग, चित्तनिरोध, इच्छा का रोकना। (पंचा.१४८, स.१९०, निय.१३७) जो विपरीत भाव को छोड़कर सर्वज्ञकथित तत्त्वों में अपने आपको लगाता है, उसका वह अपना भाव योग है। (निय.१३९) योग मन, वचन, और काय के व्यापार से होता है। जोगो मणवयणकायसंभूदो। (पंचा.१४८) जोगो (प्र.ए.पंचा.१४८, स.१९०) जोगे (द्वि. ब.भा.५८, निय.१००) जोगेहिं (तृ.ब.भा.११७) जोगेसु (स.ब.स.२४६) **-उदअ** पुं [उदय] योग का अभ्युदय। तं जाण जोगउदअं। (स.१३४) **-णिमित्त** न [निमित्त] योग का कारण। जोगणिमित्तं गहणं। (पंचा.१४८) **-परिकम्म** पुं न [परिकर्म] योगों का परिकर्म, योगों का परिणाम।(पंचा.१४६) **-भत्तिजुत्त** वि [भक्तियुक्त] योग की भक्ति से संयुक्त। (निय.१३७) **-वरभत्ति** स्त्री [वरभक्ति] योग की श्रेष्ठ कल्पना, योग की एकाग्र श्रेष्ठवृत्ति। (निय.१४०) **-सुद्धि** स्त्री [शुद्धि] योग की शुद्धि। मुच्छारंभविजुत्तं, जुत्तं उवजोगजोगसुद्धीहिं। (प्रव.चा.६)

जोग्ग वि [योग्य] योग्य, उचित। (प्रव.५५) ओगिण्हत्ता जोग्गं। (प्रव.५५,प्रव.चा.ज.वृ.२५)

जोड सक [योजय्] जोड़ना, मिलाना, संयुक्त करना। जो जोडदि विव्वाहं। (लिं.९)

जोणि स्त्री [योनि] उत्पत्ति स्थान, जीव की उत्पत्ति। (निय.४२,५६) कुलजोणिजीवमग्गण। (निय.५६)

जोण्ह वि [ज्योत्स्न] 1.आलोक युक्त, प्रकाश युक्त। 2. जिनदेव, जिनेन्द्रदेव। उवलद्धं जोण्हमुवदेसं। (प्रव.८८)

जोध पुं [योध] योद्धा, वीर। (स.१०६)

जोय पुं [योग] देखो जोड़, जोग। (स.५३, द.१४, मो.२८) **-ट्ठाण** न [स्थान] योगस्थान। जोयट्ठाणा ण बंधठाणा। (स.५३)

जोय अक [द्युत्] प्रकाशित होना, चमकना, द्युतिमान होना। जोयत्थो जोयए अप्पा। (मो.२८)

जोयण न [योजन] योजन, एक पैमाना, पथ नापने का पैमाना। (मो.२१) **-सय** वि [शत] सौ योजन। (मो.२१) विस्तार के लिए तिलोयपण्णत्ति दृष्टव्य है। जो जाइजोयणसयं। (मो.२१)

जोव्वण न [यौवन] युवावस्था, तारुण्य,जवानी। (द्वा.४) जोव्वणं बलं तेजं । (द्वा.४)

झ

झड अक [शद्] झड़ना, गिरना, क्षय होना। (मो.१) उवलद्धं जेण झडियकम्मेण। (मो.१) झडिय (सं.कृ.मो.१)

झा सक [ध्यै] ध्यान करना, चिंतन करना। (पंचा.१४५, स.१८८,

प्रव. ज्ञे.५९, नियं.८९, भा.१२३, मो.२०) झादि (व.प्र.ए.निय.८९, पंचा.१४५) झाए (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.६७) झाएइ (व.प्र.ए.निय.१२१,मो.२०)झाएदि (व.प्र.ए.निय.१३३, लिं.५) झायइ (व.प्र.ए.निय.१२०, मो.८४) झायदि।

(व.प्र.ए.स.१८८,निय.८३) झायंति (व.प्र.ब.मो.१९) झायंतो (व.कृ.स.१८९,मो.४३) झायव्वो (वि.कृ.मो.६३,६४) झाहि (वि./आ.म.ए.स.४१२) झायहि (वि./आ.म.ए.भा.१२३) झाइज्जइ (कर्म.व.प्र.ए.मो.४)झाइज्जइ परमप्पा। (मो. ७) झाएवि (अप. सं. कृ. मो. ७७)

झाण पुं न [ध्यान] ध्यान, चिंतन, विचार। (पंचा.१५२, निय.१२९, प्रव. चा. ५६, भा.१२१) आत्मस्वरूप के अवलम्बनमय भाव से जीव समस्त विकल्पों का निराकरण करने में समर्थ होता है इसलिये ध्यान ही सब कुछ है। अप्पसरूवालंवणभावेण दु सव्वभावपरिहारं।सक्कदि काउं जीवो, तम्हा झाणं हवे सव्वं। (निय.११९) ध्यान में शुद्धात्मा का ध्यान श्रेष्ठ है। झाणे झाएइ सुद्धप्पाणं। (मो.२०) जो आत्मध्यान करता है। उसे नियम से निर्वाण प्राप्त होता है। अप्पाणं जो झायदि, तस्स दु णियमं हवे णियमा।(निय.१२०)ध्यान के चार भेद हैं- आर्त्तध्यान,रौद्रध्यान,धर्मध्यान और शुक्लध्यान। इन चार ध्यानों में आर्तध्यान और रौद्रध्यान श्रेयस्कर नहीं हैं मात्र धर्मध्यान और शुक्लध्यान ही रत्नत्रय के कारण हैं।(निय.८९)मोक्षपाहुड ७६ में धर्मध्यान के विषय कहा गया है-भरत क्षेत्र में दुःषम नामक

पञ्चमकाल में मुनि के धर्मध्यान होता है, यह धर्मध्यान आत्मस्वभाव में स्थित साधु के होता है। भरहे दुस्समकाले, धम्मज्झाणं हवेइ साहुस्स। तं अप्पसहावठिदे, ण हु मण्णइ सो वि अण्णाणी। आज भी त्रिरत्न से शुद्ध आत्मा का ध्यान करके मनुष्य इन्द्र और लौकान्तिक देव के पद को प्राप्त होते हैं, वहां से च्युत होकर मनुष्य जन्म पाकर निर्वाण को प्राप्त होते हैं। (मो.७७) **-त्थ** वि [स्थ] ध्यानस्थ,ध्यान में लीन।अप्पा झाएइ झाणत्थो। (मो.२७) **-जुत्त** वि [युक्त] ध्यान में लीन। सज्झायझाणजुत्ता। (बो.४३)-**जोअ** पुं [योग] ध्यान योग,ध्यान की चेष्टा,सग्गं तवेण सव्वो,वि पावए तहि वि झाणजोएण । (मो.२३) **-णिलीण** वि [निलीन] ध्यान में तल्लीन, ध्यानमग्न। झाणणिलीणो साहू। (निय.९३)-**पईव** पुं [प्रदीप]ध्यानरूपी दीपक,ध्यानमय ज्योति। झाणपईवो वि पज्जलइ।(भा. १२२)-**मअ/मय** वि [मय] ध्यानयुक्त, ध्यान स्वरूपी। (पंचा.१४६, निय.१५४) **-रअ/रय** वि [रत] ध्यान में लीन,ध्यान में तत्पर। जो देव और गुरु का भक्त,साधर्मी और संयमी जीवों का अनुरागी तथा सम्यक्त्व को धारण करता है,वह ध्यानरत कहलाता है। देवगुरुम्मि य भत्तो, साहम्मि य संजदेसु अणुरत्तो। सम्मत्तमुव्वहंतो, झाणरओ होइ जोई सो।। (मो.५२,८२) **-विहीण** वि [विहीन] ध्यान रहित, ध्यान से च्युत। झाणविहीणो समणो। (निय.१५१)

झादा वि [ध्याता] ध्यान करने वाला, ध्याता। जो ध्यान में अपने शुद्ध आत्मा का चिंतन करता है वह ध्याता है। इदि जो झायदि

झाणे, सो अप्पाणं हवदि झादा। (प्रव. ज्ञे.९९)

ठ

ठव सक [स्थापय्] स्थापन करना,स्थापित करना।ठवेदि (व.प्र.ए. स. २३४) ठविऊण (सं. कृ. निय.१३६) ठविऊण य कुणदि णिव्वुदीभंत्ती।

ठवण न [स्थापन] स्थापन, संस्थापन, पूजा का एक भेद, निक्षेप का एक भेद। णामे ठवणे हि य। (बो.२७)

ठा अक [स्था] बैठना, स्थिर होना, ठहरना, रहना। ठाइ (व. प्र.ए. निय. १२५, १२६) ठादि (द.१४) ठाही (भू. प्र. ए. स. ४१५) अत्थे ठाही चेया। भूतार्थ के सी,ही,हीअ प्रत्यय हैं, जो तीनों पुरुषों के दोनों वचनों में समान रूप से प्रयुक्त होते हैं। ये प्रत्यय दीर्घान्त णी,हो, ठा आदि क्रियाओं में लगते हैं। ठाइदूण (सं कृ. स. २३७)

ठाण पुं न [स्थान] स्थान, स्थिति, पद, कारण, जगह, आश्रय। (पंचा.८९,प्रव.४४,स.५२,निय.१५८,भा.११५) **-कारण** न [कारण] स्थिति में कारण, स्थान देने में कारण। आगासं ठाणकारणं तेसिं। (पंचा.९४) **-कारणदा** [कारणत्व] स्थिति हेतुत्व, स्थिति में कारणपना। गुणो पुणो ठाणकारणदा। (प्रव.ज्ञे.४१) ठाणं (प्र.ए.पंचा.८९) ठाणाणि (प्र.ब.स.५२) ठाणे (स.ए.सू.१४) ठाणम्मि (स.ए.स.२३७)

ठावणा स्त्री [स्थापना] प्रतिकृति,चित्र,आकार,न्यास का एक भेद ठावणपंचविहेहिं।(बो.३०)**ठावण** यह स्त्रीलिङ्ग प्रथमा एकवचन

का रूप है। अपभ्रंश में दीर्घ का ह्रस्व हो जाता है।

ठिद/ठिय/ट्ठिद/ट्ठिय वि [स्थित] अवस्थित, स्थित हुआ। (स.२६७, प्रव. ज्ञे.२,निय.९२,भा.४०,बो.१२,सू.१४) दंसणणाणम्हि ठिदो।(स.१८७) जे दु अपरमे ट्ठिदा भावे। (स.१२)

ठिदि स्त्री [स्थिति] स्थिति, स्थान, कारण, नियम, बन्ध का एक भेद। (पंचा.७३, स.२३४, निय.३०, प्रव.१७) **-करण** न [करण] स्थितीकरण, सम्यक्त्व के आठ अङ्गों में से एक अङ्ग। (चा.७)जो जीव उन्मार्ग में जाते हुए अपने आत्मा को रोककर समीचीन मार्ग में स्थापित करता है वह स्थितीकरण युक्त होता है।(स.२३४)-**किरियाजुत्त** वि [क्रियायुक्त] ठहरने की क्रिया से युक्त। (पंचा.८६) **-बंधट्ठाण** न [बन्धस्थान] स्थितिबन्धस्थान। (स.५४, निय.४०) **-भोयणमेगभत्त** पुं न [भोजनमेकभक्त] खड़े-खड़े एक बार भोजन करना, साधुओं का एक मूलगुण। (प्रव. चा.८)

ड

डह सक [दह्] जलाना, दग्ध करना। (भा.१३१, ११९ शी.३४) डहइ (व.प्र.ए.भा.१३१) डहंति (व.प्र.ब.शी.३४) डहिऊण (सं.कृ.भा.११९)

डहण न [दहन] जलना, भस्म होना। (मो.२६)

डहिअ वि [दहित] जला हुआ, भस्म, भस्मीभूत। (भा.४९)

डाह पुं [दाह] 1. जलन, तपन, गर्मी (भा.९३, १२४) 2. पुं [डाह] जलन, ईर्ष्या।

ढ

ढिल्ल वि [दे] ढीला, शिथिल। (सू.२६)

ढुरुढुल्लिअ वि [दे] भ्रमणशील, घूमता हुआ। (भा.३६,४५)

ण

ण अ [न] नहीं, मत, निषेधार्थक, अव्यय। (पंचा.७,स.२८०,निय. ३६, भा.२, द.२, प्रव. चा.६) ण दु एस मज्झभावो। (स.१९९) ण पविट्ठो णाविट्ठो। (प्रव.२९)

णं अ [णं] वास्तव में, निश्चय से। (चा.२०)

णओसय पुं न [नपुंसक] नपुंसक, क्लीब। (निय.४५)

णग्ग वि [नग्न] वस्त्र रहित, अचेलक, निर्ग्रन्थ। (सू.२३, भा.५४) णग्गो विमोक्खमग्गो। (सू.२३) भावेण होइ णग्गो। (भा.५४) **-त्तण** वि [त्व] नग्नत्व, नग्नपना। (भा.५५) णग्गत्तणं अकज्जं। **-रूव** पुं [रूप] नग्न आकृति। (भा.७१)

णच्च अक [नृत्] नृत्य करना, नाचना। णच्चदि गायदि। (लिं.४)

णच्चा सं.कृ. [ज्ञात्वा] जानकर। (निय.९४)

णज्ज सक [ज्ञा] जानना, ज्ञान करना। दुक्खे णज्जइ अप्पा। (मो.६५)

णट्ठ वि [नष्ट] नष्ट, नाश को प्राप्त, रहित। (पंचा.१७, प्रव.३८, निय.७२, बो.५२, भा.१४९) मणुसत्तणेण णट्ठो। (पंचा.१७) **-अट्ठ** त्रि [अष्ट] अष्ट कर्म से रहित। णट्ठट्ठकम्मबंधेण। (बो.२८) **-चारित्त** पुं न [चारित्र] चारित्र रहित, चारित्र से च्युत। हवदि हि

सो णट्ठचारित्तो। (प्रव.चा.६५) **-मिच्छत** पुं न [मिथ्यात्व] मित्थात्व से रहित, विपरीत मान्यता से रहित। पणट्ठकम्मट्ठ णट्ठमिच्छत्तां। (बो.५२)

णड पुं [नट] नर्तक,नट,जाति। **-सवण** पुं [श्रमण] नटश्रमण। जो धर्म से दूर रहता है, जो दोषों से युक्त है, ईख के पुष्प से समान निष्फल एवं निर्गुण, नग्नरूप में रहने वाला नट श्रमण है। (भा.७१)

णत्थि अ [नास्ति] अभावसूचक अव्यय, नहीं। (पंचा.११, स.६१, प्रव.१०, द.३)

णभ न [नभस्] आकाश, गगन। (प्रव. ज्ञे.४५) णभसि (स.ए.प्रव.६८)

णम सक [नम्] नमन करना, प्रणाम करना, झुकना। (निय.१, भा.१, मो.२) णमिऊण (सं. कृ. निय.१,भा.१, मो.२, द्वा.१) णमंति (व.प्र.ब.भा.१५२)

णमंस सक [नमस्य्] नमन करना, नमस्कार करना। णमंसित्ता।(सं कृ. प्रव. चा.७)

णमंसण न [नमस्यन] नमन, वंदन। णमंसणेहिं (तृ. ब. प्रव. चा.४७)

णमि पुं [नमि] इक्कीसवें तीर्थंकर,नमिनाथ। (ती.भ.५)

णमुक्कार पुं [नमस्कार] नमन, प्रणाम। काऊण णमुक्कारं। (द.१)

णमो अ [नमस्] नमन, प्रणाम। (पंचा.१, प्रव.४, भा.१२८)·

णमोकार पुं [नमस्कार] नमन। (लिं.१)

णमोत्थु अ [नमोस्तु] नमन हो। (प्रव. ज्ञे. १०७)

णय पुं [नय] नय, न्याय, नीति, युक्ति, पक्ष। (स.१४२) दोण्ह वि णयाण भणियं।(स.१४३) वस्तु के अनेक धर्मों में से किसी एक मुख्य अंश को ग्रहण करना नय है। आचार्य कुन्दकुन्द ने व्यवहारनय और निश्चयनय इन दो नयों का कथन किया है। प्रत्येक वस्तु को समझाने के लिए दोनों ही नयों को आधार बनाया जाता है। इनके सभी ग्रन्थों में यही शैली है। इसके अतिरिक्त द्रव्यार्थिक एवं पर्यायार्थिक नय द्वारा भी वस्तुतत्त्व को स्पष्ट किया है। (पंचा.५-६) व्यवहारनय से ज्ञानी के चारित्र, दर्शन और ज्ञान है, किन्तु निश्चयनय से ज्ञान, चरित्र और दर्शन नहीं हैं,ज्ञानी ज्ञायक एवं शुद्ध है। (स.७) व्यवहारनय को अभूतार्थ एवं निश्चय नय को भूतार्थ कहा है। ववहारोऽभूयत्थो, भूयत्थो देसिदो दु सुद्धणओ। (स.११) निश्चयनय को शुद्धनय कहा है। जो नय आत्मा को बन्धनरहित, पर के स्पर्शरहित और अन्य पदार्थो के संयोग रहित अवलोकन करता है, वह शुद्धनय है। (स.१४) आचाराङ्ग आदि शास्त्र ज्ञान है,जीवादि का श्रद्धान दर्शन है,छहकाय के जीव चारित्र हैं,यह कथन व्यवहारनय का है और आत्मा ज्ञान है,आत्मा दर्शन है और आत्मा चारित्र है, प्रत्याख्यान,संवर और योग है यह शुद्ध नय का कथन है। (स.२७६,२७७) -**पक्ख** पुं [पक्ष] नयपक्ष,न्यायशास्त्र में प्रसिद्ध एकपक्ष।(स.१४२,१४३,१४४)जीव में कर्मबंधे हुए हैं या नहीं यह नयपक्ष है। इस पक्ष से रहित समयसार है। कम्मं

बद्धमबद्धं,जीवे एवं तु जाण णयपक्खं।पक्खातिक्कंतो पुण भण्णदि जो सो समयसारो।।(स.१४२)-**परिहीण** वि [परिहीण] नय रहित। (स.१८०)

णयण पुं न[नयन]नेत्र,आंख।वीरं विसालणयणं।(शी.१) -**णीर** [नीर] नेत्रों के आंसू। रुण्णाण णयणणीरं।(भा.१९)

णयर न [नगर] शहर, पुर, नगर। णयरम्मि वण्णिदे जह। (स.३० णयरम्मि/णयरे (स.ए.स.३०)

णर पुं [नर] मनुष्य, पुरुष। (पंचा.१६,स.२४२,प्रव.७२,निय.१५ भा.१) णरो (प्र.ए.स.२४२) णरस्स (च./ष.ए.द.३१)

णरय पुं [नरक] नरक, नारकी, जीवों का स्थान, नरक गति विशेष। (भा.४९,लिं.६)

णव त्रि [नव] नौ, संख्या विशेष। णव जय पयत्थाइं। (भा.९७) -**रूणिहि** वि [निधि] नौ निधियाँ। (द्वा.१०) -**णोकसायवग्ग** वि [नोकषायवर्ग] नौ-नोकषायवर्ग, नोकषायों का समूह। (भा.९१) हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। -**त्थ** वि [अर्थ] नवार्थ, नौ पदार्थ। (पंचा.७२) जीव, अजीव,आस्रव,बंध,संवर,निर्जरा,मोक्ष,पुण्य और पाप। -**पयत्थ** पुं [पदार्थ] नौ पदार्थ । (द.१९) -**विहबंभ** पुं [विधब्रह्म] नवप्रकार का ब्रह्मचर्य। (भा.९८)

णव वि [नव] नवीन, नूतन, नया। णादियदि णवं कम्मं। (मो.४८)

णव सक [नम] नमन करना, प्रणाम करना। णविएहिं तं णविज्जइ (मो.१०३)णविज्जइ(व.प्र.ए.)कर्म और भाव में ईअ और इज्ज

प्रत्यय होते हैं। (हे. ई-इज्जौक्यस्य। ३/१६०)

णवरं अ [केवल] केवल, किन्तु,सिर्फ। जाणइ णवरं तु समयपडिबद्धो। (स.१४३)

णवरि/णवरि अ [दे] केवल, मात्र, किन्तु। णवरि ववदेसं। (स.१४४) अबंधगो जाणगो णवरिं। (स.१६७)

णवि अ [दि] निषेधवाचक, अव्यय, विपरीतसूचक अव्यय,नहीं। णवि सो जाणदि। (स.५०,२०१)

णस/णस्स अक [नश्] नष्ट होना। लिंगं णसेदि लिंगीणं। (लिं.३) ण णस्सदि ण जायदे अण्णो। (पंचा.१७)

णह न [नख] नाखून। (भा.२०)

णहु अ [न खलु] नहीं। (द.२७)

णा सक [ज्ञा] जानना, समझना। (पंचा.१६२, स.१८, प्रव.२५, निय.१६,चा.४२)णादि(व.प्र.ए.पंचा.१६२,प्रव.२५)णाऊण(सं. कृ.भा.५५,चा.६,शी.३)णादूण/णादूणं (सं.कृ.स.७२,३४) णायव्वो/णादव्वो (वि.कृ.स.१२,२८५,बो. ४०) णाउं/णादुं (हे.कृ.प्रव.४०,स.१४९,चा.४२,भा.८८)

-णाग पुं [नाग] सर्प। (स.ज.वृ.२१९) **-फलि** स्त्री [फलि] लता विशेष, नागफणी। (स.ज.वृ.२१९) णागफलीए मूलं, णाइणि तीएण गब्भणाणेण। (स.ज.वृ.२१९)

णाण न [ज्ञान] ज्ञान, बोध, आत्मा का निज गुण। (पंचा.१६४, स.२,प्रव.२,निय.३,चा.३) **-आवरण** न [आवरण] ज्ञानावरण, ज्ञान को आच्छादन करने वाला कर्म। जे पुग्गलदव्वाणं, परिणामा

होंति णाणआवरणा। (स.१०१) **-गुण** पुं न [गुण] ज्ञानगुण। णाणगुणादो पुणो वि परिणमदि। (स.१७१) णाणगुणेण विहीणा। (स.२०५) **-जुत्त** वि [युक्त] ज्ञान युक्त,ज्ञान सम्पन्न। (बो.६)जं चरइ णाणजुत्तं। (चा.८) **-ट्ठिय** वि [स्थित] ज्ञान में स्थित। अट्ठा णाणट्ठिया सव्वे। (प्रव.३५) **-इ्ढ** वि [आढ्य] ज्ञानयुक्त, ज्ञानसहित। (प्रव. चा.६३, १०६) **-पमाण/प्पमाण** न [प्रमाण] ज्ञान प्रमाण। आदा णाणपमाणं। (प्रव.२३) णाणप्पमाणमादा। (प्रव.२४) **-प्पग/प्पाण** वि [आत्मक] ज्ञानात्मक, ज्ञानस्वरूप। (प्रव. ज्ञे. ६७, १००) **-मग्ग** पुं न [मार्ग] ज्ञानपथ । (चा.१४) **-मअ/मय** वि [मय] ज्ञानमय, ज्ञानयुक्त। (स.१३१, प्रव.२६, मो.१) **-विग्गह** पुं [विग्रह] ज्ञानशरीरी। (मो.१८) **-विजुत्त** वि [वियुक्त] ज्ञान से रहित। (मो.५९) **-सत्थ** न [शस्त्र] ज्ञानरूपी शस्त्र । लुणंति मुणी णाणसत्थेहिं। (भा.१५७)**-सलिल** न [सलिल] ज्ञानरूपी जल। पाऊण णाणसलिलं। (भा.९३) **-सरूव** वि [स्वरूप] ज्ञानस्वरूप, ज्ञानात्मक। णाणं णाणसरूवं। (चा.३९) **-सहाअ/सहाव** पुं [स्वभाव] ज्ञान स्वभाव। (स.१६२, भा.६२) णाणसहाओ चेयणासहिओ। **-सुद्धि** स्त्री [शुद्धि] ज्ञान की शुद्धि, ज्ञान की निर्मलता, ज्ञान की निर्दोषता। (शी.२०) णाणं (प्र. ए. स.७) णाणाणि (प्र.ब.पंचा.४३) णाणं (द्वि. ए. पंचा.४७) णाणेण (तृ.ए.द.३०)णाणे/णाणम्मि (स.ए.द.८, १४)णाणदो (पं. ए. द.१५)

णाणा अ [नाना] अनेक, पृथक्-पृथक्।(निय.९,प्रव.ज्ञे.२७)

-**आवरण** न [आवरण] कई प्रकार के आवरण, ज्ञान के आवरण। (पंचा.२०,स.१६५,प्रव.चा.५७) -**कम्म** पुं न [कर्मन्] नाना कर्म, अनेक प्रकार के कर्म। (निय.१५६) -**गुण** पुं न [गुण] अनेक गुण। णाणागुणपज्जएण संजुत्तं। (निय.१६८) -**जीव** पुं [जीव] अनेक जीव। (निय.१५६) -**भूमि** स्त्री [भूमि] अनेक प्रकार की भूमि। (प्रव. चा. ५५) -**विह** वि [विध] अनेक प्रकार। णाणाविहं हवे लद्धी। (निय.१५६)

णाणी वि [ज्ञानिन्] ज्ञानी, विशेषज्ञानी, केवलज्ञानी। (पंचा.४८, स.१७०, प्रव.२८) णाणी (प्र. ए. प्रव. २९) णाणी णाणसहावो। (प्रव.२९) णाणीहि (तृ. ब. पंचा. ४३) णाणिस्स (च./ष.ए. प्रव.२८, स.१८०, निय.१७३, पंचा.१५०) -**त्त** वि [त्व] ज्ञानीपन। ण जहदि णाणी उ णाणित्तं। (स.१८४)

णाणिण वि [ज्ञानिन्] ज्ञानी। धणिणं जह णाणिणं च दुविधेहिं। (पंचा.४७) **धणिण** का प्रयोग धनी के लिए एवं **णाणिण** का प्रयोग ज्ञानी के लिए हुआ है। यद्यपि नियमानुसार अन्त्य व्यञ्जन का लोप होकर **णाणि** रूप के प्रयोग की बहुलता है, परन्तु यह प्रयोग अन्त्य व्यञ्जन के लोप की प्रक्रिया से परे अन्त्यव्यञ्जन में **अ** का आगम होकर बना है। आत्मन् के अप्पण की तरह ज्ञानिन् का णाणिण शब्द बना है।

णाद सक [ज्ञा/ज्ञात] जानना। (स. ज. वृ. १८९) पस्सिदूण णादेदि।

णाद वि [ज्ञात] विदित, जाना हुआ। (स.६, प्रव.५८)

णाम अ [नाम] 1.संभावना बोधक अव्यय। जह णाम को वि

पुरिसो। (स.३५, २८८) 2. वाक्यालङ्कार,पादपूर्ति।को णाम भणिज्ज बुहो।(स.३००)3. पुं न [नाम] नाम,आख्या,अभिधान, संज्ञा।दीवायणु त्ति णामो।(भा.५०)-**कम्म** पुं न [कर्मन्] नाम कर्म, आठ कर्मों में एक भेद। (प्रव. ज्ञे. २६) नामकर्म के उदय से जीवों को मनुष्य,देव,नरक और तिर्यञ्च, इन चार पर्यायों में जन्म लेना पड़ता है। (प्रव.ज्ञे.६१) -**समक्ख** वि [समाख्य] नाम संज्ञा वाला। कम्मं णामसमक्खं। (प्रव. ज्ञे. २५) -**संजुद** वि [संयुत] नाम से युक्त, नामधारी। णेरइय-तिरिय-मणुआ, देवा इदि णामसंजुदा पयडी। (पंचा.५५)

णाय पुं [न्याय] 1. न्याय, नीति। -**सत्थ** पुं [शास्त्र] न्यायशास्त्र, प्रमाणशास्त्र, नीतिशास्त्र। (शी.१६) 2. वि [ज्ञात] जाना हुआ। (बो.६०, भा.४५) 3.न [ज्ञातृ] ज्ञातृ, वंश का नाम।

णायग वि [ज्ञायक] 1. ज्ञानी, जानकार, प्रबुद्ध। (भा.१२३) 2. पुं [नायक] स्वामी, मुखिया, प्रधान,नेता। (भा.१२३)

णारय वि [नारक] नारकी, नरक में उत्पन्न होने वाला, नरक सम्बन्धी। (पंचा ११७,निय.१५,भा.६७) -**भाव** पुं [भाव] नारकी भाव,नरक में उत्पन्न होने का भाव, नारकी पर्याय। (निय.७७) णाहं णारयभावो।

णारी स्त्री [नारी] नारी, स्त्री। (प्रव. चा. ज. वृ. २४)

णाली स्त्री [नालि] कालपरिमाणविशेष, घड़ी, बीस कला के बीतने का नाम। (पंचा.२५)

णास सक [नाशय्] नष्ट करना, नाश करना। णासइ (व. प्र. ए. भा.

५४) णासेदि (व.प्र.ए.स. १५८-१५९) णासए (व.प्र.ए.द.७) णासदि (व.प्र.ए.सू.३४)

णास पुं [नाश] नाश, ध्वंस, व्यय। भावस्स णत्थि णासो। (पंचा.१५)

णासण वि [नाशन] नाश करने वाला। (भा.१०७)

णाहग पुं [नाशक] स्वामी, प्रधान, शरण्य। (द्वा.२२)

णाहि पुं [नाभि] नाभि, केन्द्र। (सू.२४)

णि अ [नि] निश्चय,ही।मुणिवरवसहा णि इच्छंति। (बो.४३)

णिंद सक [निन्द्] निन्दा करना, दूषित ठहराना। केई णिंदंति सुंदरं मग्गं। (निय.१८५)

णिंद वि [निन्द्य] निन्दनीय, निन्दा योग्य। (प्रव. चा.४१)

णिंदा स्त्री [निन्दा] घृणा, जुगुप्सा। (स.३०६) णिंदाए (स.ए.मो.७२)

णिंदिय वि [निन्दित] निन्दित, बुरा, निन्दनीय। (प्रव. चा. ४७)

णिकाय पुं [णिकाय] समूह, वर्ग, जाति। एदे जीवणिकाया। (पंचा.११२)

णिक्कंख वि [निष्कांक्ष] आकांक्षा रहित, चाह रहित। (स.२३०)

णिक्कंखिय वि [निष्कांक्षित] न चाहने वाला, अभिलाषा रहित। (चा.७)

णिक्कल वि [निष्कल] कला रहित, शरीर रहित। (निय.४३) जइधम्मं णिक्कलं वोच्छे। (चा.२७)

णिक्कलुस वि [निष्कलुष] निर्दोष, पवित्र, मलरहित। (बो.४९)

णिक्कसाय वि [निष्कषाय] कषाय रहित। (निय.१०५)
णिक्काम [निष्काम] अभिलाषा रहित, इच्छारहित, वासनारहित, विषयासक्ति से रहित। (निय. ४४)
णिक्कोह वि [निष्क्रोध] क्रोध रहित, क्षमाशील, क्षमागुणवाला। (निय.४४)
णिक्खेव पुं [निक्षेप] निक्षेप,न्यास।नाम,स्थापना,द्रव्य और भाव के भेद से निक्षेप के चार भेद हैं। (चा.३७)
णिगोद/णिगोय पुं [निगोद] अनन्तजीवों का एक साधारण शरीर विशेष,निगोद पर्याय। (भा.२८) **-वास** न [वास] निगोदवास, निगोद स्थान। इस निगोद पर्याय में जीव ने अन्तर्मुहूर्त में छयासठ हजार तीन सौ छत्तीस बार जन्म-मरण प्राप्त किया है। (भा.२८)
णिग्गंथ पुं [निर्ग्रन्थ] संयत, मुनि,तपस्वी। (प्रव. चा.६९, निय. ४४, बो.५८) जो पांच महाव्रतों से युक्त तीन गुप्तियों से सहित संयमी है, वह निर्ग्रन्थ है तथा वही मोक्षमार्गस्वरूप है। पंचमहव्वय जुत्तो,तिहिं गुत्तिहिं जो य संजदो होई।णिग्गंथमोखमग्गो,सो होदि हु वंदणिज्जो य। (सू.२०) बोधपाहुड में निर्ग्रन्थ शब्द को और अधिक स्पष्ट किया गया है-जो निर्दोष चारित्र का आचरण करता है जीवादिपदार्थों को ठीक-ठीक जानता है और शुद्ध सम्यक्त्वस्वरूप आत्मा को देखता है, वह निर्ग्रन्थ है। (बो.१०)
णिग्गद वि [निर्गत] निःसृत, बाहर निकला हुआ। राया हु णिग्गदो त्ति य। (स.४७)
णिग्गह पुं [निग्रह] निरोध, वश में, अधीन।**-मण** पुं न [मनस्] मन

का निग्रह। णिग्गहमणा परस्स। (स.३८२)

णिग्गहण वि [निग्रहण] निग्रह, दमन, नियन्त्रित। (निय.११४)

णिग्गहिद वि [निगृहीत] रोका गया, निग्रह किया गया, पराभूत, तिरस्कृत। इंदियकसायसण्णा णिग्गहिदा जेहिं सुट्ठुमग्गम्मि। (पंचा.१४१)

णिग्गुण वि [निर्गुण] गुणहीन, गुणरहित। (भा.७१)

णिच्च न [नित्य] 1. नित्य, सदैव, हमेशा, निरंतर। (स.३२३, पंचा.७) णिच्चं कुवंताणं। (स.३२३) 2. वि [नित्य] नित्य शाश्वत, अविनश्वर। णिच्चो णाणवकासो। (पंचा८०) **-काल** पुं [काल] निरन्तर, हमेशा। भत्तीराएण णिच्चकालम्मि। (भा.१०५)

णिच्चय पुं [निश्चय] निश्चयनय, नय विशेष, द्रव्यार्थिकनय। जाणंति णिच्चएण। (स.३२४) **-णय** पुं [नय] निश्चयनय। णिच्चयणएण भणिदो। (पंचा.१६१)

णिच्चयण्हू वि [निश्चयज्ञ] निश्चयस्वरूप को जानने वाले, निश्चय के ज्ञाता। णिच्छंति णिच्च यण्हू। (पंचा.४५)

णिच्चसा अ [नित्यशः] निरन्तर, सदैव, हमेशा। (निय.१२९-१३३)

णिच्चिद वि [निश्चित] निश्चित, निर्णीत, असंदिग्ध। (पंचा.१६२)

णिच्चेल वि [निश्चेल] वस्त्ररहित, निर्ग्रन्थ। णिच्चेलपाणिपत्तं। (सू.१०)

णिच्छ अक [निश्च] मानना, निश्चयकरना, विचारना। (पंचा.४५)

णिच्छअ/णिच्छय पुं [निश्चय] नयविशेष, यथार्थ निर्णय का सूचक पक्ष। (स.२१०, प्रव.९७, निय.२९) **-अट्ठ** वि [अर्थ] निश्चय का विषय, निश्चय का प्रयोजन, निश्चय का विचार। मोत्तूण णिच्छयट्ठं। (स.१५६) **-गद** वि [गत] निश्चय को प्राप्त हुआ, निर्णय को प्राप्त हुआ। (स.३) **-णय** पुं [नय] निश्चयनय। णिच्छयणयस्स एवं। (स.८३) णिच्छयदो (पं.ए.निय.५५, स.२३९) **-दण्हू** वि [तज्ञ] निश्चय को जानने वाले, निश्चय को समझने वाले। (स.६०) **-वाइ** वि [वादिन्] निश्चयवादी, निश्चय का कथन करने वाले। (स.४३) **-विदु** वि [विद्] निश्चय को जानने वाला, निश्चय का ज्ञाता, पण्डित। (स.३३, ९७) भण्णदि सो णिच्छयविदूहिं।

णिच्छिद वि [निश्चित] निर्णीत, निश्चित किया हुआ। (स.४८, प्रव. चा.४) भणंति जे णिच्छिदा साहू। (स.३१)

णिच्छित्ता वि [निश्चितत्व] निश्चितता। णिच्छित्ता आगमदो। (प्रव.चा.३२)

णिज्ज अक [निर्+या] निकलना, ले जाना, चले जाना। (स.२०९) णिज्जदु (वि./आ. प्र. ए. स.२०९) कम्मेहि य मिच्छत्तं, णिज्जइ णिंज्जइ असंजमं चेव। (स.३३३)

णिज्जण न [निर्जन] एकान्तस्थान, मनुष्य से रहित क्षेत्र। **-देस** पुं [देश] निर्जन प्रदेश, एकान्त स्थान। णिज्जणदेसेहि णिच्च अत्थेइ।

(बो.५५)

णिज्जर वि [निर्जर] कर्मक्षय,कर्मपरमाणुओं का आत्मा से पृथक् करना। (पंचा.१०८, स.१३) -**णिमित्त** न [निमित्त] निर्जरा के कारण। (स.१९३) -**हेदु** पुं [हेतु]क्षय का कारण। (पंचा.१५२) ज्ञान एवं दर्शन से युक्त, अन्य द्रव्यों के संयोग से रहित, ध्यान स्वभाव सहित साधु के निर्जरा का कारण होता है। (पंचा.१५२)

णिज्जर सक [निर्+जृ] क्षय करना, नाश करना। णिज्जरमाणो (व.कृ.पंचा.१५३)

णिज्जरण न [निर्जरण] नाश, क्षय। कम्माणं णिज्जरणं। (पंचा.१४४) बंधे हुए कर्मप्रदेशों का गलना, एक देश क्षय होना निर्जरा है। (द्वा. ६६) बंधपदेसग्गलणं णिज्जरणं। निर्जरा दो प्रकार की है-सविपाक (अपना उदयकाल आने पर कर्मों का स्वयं पककर झड़ जाना) और अविपाक निर्जरा (तप आदि के द्वारा की जाने वाली)।

णिज्जावय वि [निर्यापक] गुरु के उपदेश को अङ्गीकार करने वाला, संयम के भङ्ग होने पर गुरु के द्वारा दिया गया प्रायश्चित्त स्वीकार करने वाला, सल्लेखना ग्रहण करने वाला। (प्रव.चा.१०)

णिज्जिय वि [निर्जित] जीता हुआ, पराभूत। (भा.१५५)

णिज्जुत्ति स्त्री [निर्युक्ति] व्याख्या, विवरण। (निय.१४२)

णिट्ठव सक [नि+स्थापय्] पूर्ण करना, नष्ट करना। (भा.१४८)

णिट्ठिद वि [निष्ठित] भरा हुआ, पूर्ण किया हुआ। (प्रव. ज्ञे. ५३) लोगो अट्ठेहिं णिट्ठिदो णिच्चो।

णिट्ठुर वि [निष्ठुर] कठिन, कठोर, परुष। (भा.१०७)

णिण्णेह वि [निःस्नेह] स्नेह रहित, राग रहित। (बो.४९)

णित्थार सक [निर्+तारय्] पार उतारना, तारना। (प्रव. चा.६०) णित्थारयंति लोगं। (प्रव. चा.६०)

णित्थारग वि [निस्तारक] तारने वाला, पार उतारने वाला। पुरिसा णित्थारगा होंति। (प्रव.चा.५८)

णिद्दंड वि [निर्दण्ड] दण्डरहित, अयोग, मन-वचन-काय की प्रवृत्ति से रहित।(निय.४३)

णिद्दंद वि [निर्द्वन्द्व] कलह रहित, द्वैतपने से रहित। (निय.४३,मो.८४)

णिद्दलण न [निर्दलन] चूर करना, विदारण, मर्दन। (निय.७३)

णिद्दा स्त्री [निद्रा] नींद,अठारह दोषों में से एक,निद्रा। (बो.४६, निय.६,१७९)

णिद्दिट्ठ वि [निर्दिष्ट] कथित, प्रतिपादित, निरूपित, दिखलाया गया। (पंचा.५०, स.४३, प्रव.७, निय.६४, भा.१४७, द.११)

णिद्दोस वि [निर्दोष] दोष रहित, शुद्ध। (निय.४३, बो.४८)

णिद्ध वि [स्निग्ध] स्निग्ध युक्त, चिकना, राग सहित। णिद्धो वा लुक्खो वा। (प्रव. ज्ञे.७१, ७३) **-त्तण** वि [त्व] स्नेहपना। णिद्धत्तणं (द्वि. ए. प्रव. ज्ञे. ७२) णिद्धत्तणेण (तृ. ए. प्रव. ज्ञे.७४)

णिप्पण्ण वि [निष्पन्न] निर्मापित, बना हुआ, सिद्ध किया गया। (पंचा.५, ७६)

णिप्पवास वि [निष्प्रवास] प्रवास, दूर रहना। धम्मम्मि णिप्पवासो। (भा.७१)

णिप्फल वि [निष्फल] फल रहित, निरर्थक। (भा.७१, प्रव.ज्ञे.२४)

णिबद्ध वि [निबद्ध] प्रवृत्त, लीन। चरदि णिबद्धो णिच्चं। (प्रव.चा.१४) उवधिम्मि वा णिबद्धे। (प्रव.चा.१५)

णिब्भय वि [निर्भय] भय रहित, निडर। (निय.४३, स.२२८, बो.४९)

णिमज्ज अक [नि+मस्ज्] नहाना, मार्जन करना, डूब जाना। (द्वा.५८) जम्मसमुद्दे णिमज्जदे सिप्पं। णिमज्जदे (व.प्र.ए.)

णिमित्त न [निमित्त] कारण,हेतु,साधन। तिलतुसमत्तणिमित्त। (बो.५४)

णिमिस पुं [निमिष] नेत्र उन्मीलन, नेत्र संकोच। आंख की पलक के खुलने का समय या असंख्यात समय के बीतने प्रमाण काल को निमिष कहते हैं। (पंचा.२५)

णिम्मद वि [निर्मद] मदरहित, अहङ्कार रहित। (निय.४४)

णिम्मम वि [निर्मम] ममता रहित। (पंचा १६९, निय.४३, बो.४८) **-त्त /त्ति** वि [त्व] ममतारहित। (निय.९९) ममत्तिं परिवज्जामि णिम्ममत्तिमुवट्ठिदो। (प्रव.ज्ञे.१०८)

णिम्मय वि [निर्मय] ममता रहित। (भा.१०७)

णिम्मल वि [निर्मल] मल रहित, विशुद्ध, पवित्र। (चा.४१, भा.६०, निय.४८, बो.२६) **-सहाव** पुं [स्वभाव] निर्मल स्वभाव

पवित्रभाव,विशुद्धपरिणाम। (मो.४५, निय.१४६)

णिम्मह पुं [निर्मथ] दुर्दम्य, विनाश। (भा.९३)

णिम्माण वि [निर्मान] मान रहित, मार्दव युक्त। (निय.४४, बो.४८)

णिम्मिविय वि [निर्मापित] निर्मित, रचित, बनाया हुआ। (बो.१२)

णिम्मूढ वि [निर्मूढ] अज्ञानता रहित, ज्ञानयुक्त। (निय.४३)

णिम्मोह वि [निर्मोह] मोह रहित, आसक्ति रहित। (निय.७५, प्रव.९०, चा.१६, बो.१)

णिय वि [निज] स्वकीय, आत्मीय। **-अप्प** पुं [आत्मन्] निजात्मा। (मो.६३) **-कज्ज** न [कार्य] अपना प्रयोजन, अपना कार्य। णियकज्जं साहए णिच्चं।(निय.१५५) **-गुण** पुं न [गुण] निजगुण आत्मा के गुण। [नि+वृत्] दूर रखना, पीछे हटाना, छुड़ाना। (स.३८३, ३८४)

णियत्त न [निवृत्त] निवृत्ति, त्याग, दूर, अलग। (सू.२७) इच्छा जा हु णियत्ता, ताह णियत्ताइं सव्वदुक्खाइं।

णियत्ति स्त्री [निवृत्ति] त्याग। (निय.६७) अलीयादिणियत्तिवयणं वा।

णियद वि [नियत] नियमबद्ध, नियमानुसारी, निश्चित। (पंचा.४) अत्थित्तम्हि य णियदा। (पंचा.१००)

णियदय वि [नियतय] नियत, निश्चित। (प्रव.४४)

णियदिणा वि [नियतिन] नियमपूर्वक। उदयगदा कम्मंसा

जिणवरवसहेहिं णियदिणा भणिया। (प्रव.४३)

णियट्ठ वि [निकृष्ट] नीच, अधम। (लिं.२०)

णियम पुं [नियम] प्रतिज्ञा, व्रत। (पंचा.१५०, स.३४, प्रव.चा.५६ मो.१४) **-सार** पुं [सार] नियमसार, **आत्मा का सार, व्रतों का** सार। (निय.१)

णियल पुं [निगड] बेड़ी, साकल, श्रृंखला। **सोवण्णियम्हि णियलं।** (स.१४६)

णिरंजण वि [निरञ्जन] निर्लेप, अञ्जन रहित, मल रहित। (स.९०, भा.१६२)

णिरंतर वि [निरन्तर] लगातार, हमेशा, सदा। (भा.९०)

णिरअ/णिरय वि [निरत] 1.तत्पर, उद्यत। (लिं.१६) 2.पुं [नरक] नरक, नारकीजीव।

णिरत्थअ/णिरत्थय वि [निरर्थक] व्यर्थ, बेकार। (स.२६६, शी.१५,भा.८९) णिरत्थया सा हु दे मिच्छा। (स.२६६)

णिरद वि [निरत] तल्लीन। (प्रव. ज्ञे.२)

णिरवयव वि [निरवयव] अवयव रहित, पूर्णता, सम्पूर्ण। (निय.१४२)

णिरवसेस वि [निरवशेष] सम्पूर्ण, समस्त। **धम्माइं करेई** णिरवसेसाइं। (सू.१५)

णिरवेक्ख वि [निरपेक्ष] अपेक्षारहित, लालसा रहित। **(निय. ६०,** प्रवं. चा.२०,मो.१२) जो देहे णिरवेक्खो। **(मो.१२)**

णिस्सल्ल वि [निःशल्य] पीड़ा रहित, दुःख रहित। **(निय.८७)**

णिरहंकार वि [निरहंकार] घमण्ड रहित, मृदुता, अहंकार का अभाव। (बो.४८)

णिराउह वि [निरायुध] शस्त्रहीन, शान्तचित्त। (बो.५०)

णिरायार वि [निराकार] आकृति रहित, निर्दोष। (सू.१९) परिगहरहिओ णिरायारो। (चा.२१)

णिरालंब वि [निरालम्ब] आश्रय रहित। (निय.४३)

णिरावेक्ख वि [निरपेक्ष] अपेक्षा रहित, निःस्पृह, इच्छारहित। पांच महाव्रतों से युक्त, पञ्चइन्द्रियों को वश में करने वाला निरपेक्ष, निःस्पृह होता है। (बो.४३, ४७) व्रत एवं सम्यक्त्व से विशुद्ध पञ्चेन्द्रियसंयत इस लोक तथा परलोक सम्बंधी भोग-परिभोग से निःस्पृह होता है। (बो.२५) वयसम्मत्तविसुद्धे, पंचेदियसंजदे णिरावेक्खे। (बो.२५)

णिरास वि [निराश] आशा रहित, तृष्णा रहित, उदासीन। (बो.४६) -**भाव** पुं [भाव] निराशभाव। (बो.४९)

णिरुंभ सक [नि+रुध्] निरोध करना, रोकना। णिरंभित्ता (सं. कृ. प्रव.ज्ञे.१०४)

णिरुच्च सक [निर्+वद्] कहना, बोलना। (द्वा.३९)

णिरुवम वि [निरुपम] उपमा रहित, असाधारण, अनुपमेय। (बो.१२,२८)

णिरुवलेव वि [निरुपलेप] लेप रहित, बन्ध रज से रहित। (प्रव.चा.१८) कमलं व जले णिरुवलेवो।

णिरुवभोज्ज वि [निरुपभोग्य] भोग्य से रहित, आसक्ति रहित,

वासना रहित। (स.१७४, १७५)

णिरोध/णिरोह पुं [निरोध] रुकावट, रोकना, बाधा। (पंचा.१५०, स.१९२, भा.१०)

णिरोहण न [निरोधन] रुकावट। (भा.२५)

णिलअ/णिलय पुं [निलय] घर, स्थान, मकान। (बो.५०, भा.३३)

णिल्लोह वि [निर्लोभ] लोभरहित, शुचितायुक्त, पवित्र। (बो.४९)

णिवदिद वि [निपतित] नीचे गिरता हुआ, दृष्टिगत, गोचर हुआ। अत्थं अक्खणिवदिदं। (प्रव.४०)

णिवत्त [नि+वृत्] छोड़ना, लौटना, हटना। (स.७४, निय.५९) णिवत्तए/णिवत्तदे (व.प्र.ए.)

णिवास पुं [निवास] स्थान, रहना, जगह, निवास। (बो.५०) परकियणिलयणिवासा।

णिवित्ति स्त्री [निवृत्ति], प्रत्यावर्तन, प्रवृत्ति का अभाव। (द्वा.७५)

णिव्वत्त वि [निर्वृत्त] निष्पन्न, रचित, अस्तित्वगुण को प्राप्त, मोक्ष अवस्था को प्राप्त। (स.६६, प्रव.१०) णत्थि किरिया सहावणिव्वत्ता। (प्रव. ज्ञे.२४)

णिव्वा अक [निर्+वा] मुक्त होना। (प्रव. चा.३७)

णिव्वाण न [निर्वाण] मुक्ति, मोक्ष। (स.६४, निय.२, प्रव.६, पंचा.१७०) **-पुर** न [पुर] मुक्तिधाम, मोक्षनगर। (पंचा.७०) **-संपत्ति** स्त्री [सम्पत्ति] मुक्ति की प्राप्ति, मुक्तिरूपी वैभव। (प्रव.५) **-सुह** न [सुख] निर्वाणसुख, मोक्षसुख। (प्रव.११)

णिव्वाद वि [निर्वात] मुक्त, सिद्ध। (पंचा.१०९) णिव्वादा

चेदणप्पगा दुविहा। (पंचा.१०९)

णिव्विअप्प वि [निर्विकल्प] संदेह रहित, संशय रहित। (निय.१२१)

णिव्विदिगिंच्छ/णिव्विगिच्छ वि [निर्विचिकित्सित] आठ अङ्गों में एक, निर्विचिकित्सित, घृणा रहित। जो जीव वस्तु के सभी धर्मों मे ग्लानि नहीं करता, उसे वास्तव में निर्विचिकित्सित अङ्ग वाला कहा जाता है। (स.२३१)

णिव्वियार वि [निर्विकार] विकार रहित, विशुद्ध। (बो.४९)

णिव्विस वि [निर्विष] विष रहित, विषहीन। (भा.१३७) ण पण्णया णिव्विसा हुंति। (स.३१७)

णिव्वुदि स्त्री [निर्वृत्ति] मोक्ष, निर्वाण, मुक्ति। (पंचा.१६९, स.२०४, निय.१३६) **-कम्म** पुं [काम] मोक्ष का अभिलाषी। (पंचा.१६९) **-मग्ग** पुं [मार्ग] मुक्तिपथ। णिव्वुदिमग्गो (निय.१४१) **-सुह** न [सुख] मोक्षसुख। णिव्वुदिसुहमावण्णा। (स.१४०)

णिव्वेद/णिव्वेय पुं [निर्वेद] वैराग्य, मुक्ति की इच्छा, मोक्ष की ओर प्रवृत्ति। णिव्वेयसमावण्णो, णाणी कम्मप्फलं वियाणेइ। (स.३१८) **-परम्परा** स्त्री [परम्परा] वैराग्य की परिपाटी। देवगुरूणं भत्ता, णिव्वेयपरंपरा विचिंतंता। (मो.८२)

णिसा स्त्री [निशा] रात्रि, रात। **-यर** पुं [कर] 1.चन्द्र, शशि। जिणमयगयणे णिसायरमुणिंदो। (भा.१५९) 2. पुं [चर] राक्षस चोर, तस्कर।

णिसेज्जा स्त्री [निषद्या] आसीन होना, बैठना, समवसरण में आसीन होना। (प्रव.४४)

णिस्संक वि [निःशङ्क] शङ्का रहित। (स.२२९)

णिस्संकिय वि [निःशङ्कित] शङ्कारहित, सम्यक्त्व का एक गुण। (चा.७)

णिस्संग वि [निःसङ्ग] 1. सङ्गरहित, बाह्य एवं आभ्यन्तर दोनों प्रकार के परिग्रह या सङ्गति से रहित। मोक्षाभिलाषी निष्परिग्रह और ममत्व रहित होकर परमात्मस्वरूप में लीन होता है। (पंचा.१६९, बो.४८) 2. कषायादि से रहित।तं णिस्संगं साहु। (स.ज.वृ.१२५)

णिस्संसय वि [निःसंशय] निःसंदेह, संशयरहित। (स.३२६)

णिस्सल्ल वि [निःशल्य] शल्यरहित, जन्ममरण से रहित। (निय.४४)

णिस्सेस वि [निःशेष] समस्त, सम्पूर्ण। **-दोसरहिअ** वि [दोषरहित] समस्त दोषों से रहित, सिद्ध,मुक्त। (निय.७)

णिहण सक [नि+हन्] मारना, घात करना। नष्ट करना। (प्रव.८८) णिहणदि (व.प्र.ए.प्रव.८८)।

णिहद वि [निहत] घात करने वाला, मारने वाला। (प्रव.९२) **-घणघादिकम्म** पुं न [घनघातिकर्म] घातियां कर्मों को क्षय करने वाला। (प्रव. ज्ञे. १०५) **-मोह** पुं [मोह] मोह का नाश करने वाला। (पंचा.१०४)

णिहार पुं [निहार] निर्गम, शौच, उच्चार। आहारणिहारवज्जियं।

(बो.३६)

णिहि वि [निधि] भण्डार,खजाना। तह णाणी णाणणिहिं। (निय.१५७)

णिहिल वि [निखिल] सम्पूर्ण, समस्त। (भा.१२०)

णीर न [नीर] जल, पानी। (भा.१९)

णीरय वि [नीरजस्] रज से रहित, कर्मफल से रहित सिद्ध, शुद्ध मुक्त, एगो सिज्झदि णीरयो। (निय.१०१)

णीराग वि [नीराग] राग रहित, वीतराग। (निय.४३,४४)

णीरालंब वि [निरालम्ब] आलम्बन रहित। (स.२१४)

णु अ [नु] किन्तु। (स.१२३) कहं णु परिणामयदि कोहो।

णुय वि [नय] नमस्कृत, नमस्कार करने वाला। (भा.४५)

णे सक [नी] जाना, प्राप्त होना। णेदुं (हे. कृ.स.२२१) णेमि (व.उ.ए.स.७३)

णेअ/णेय वि [ज्ञेय] जानने योग्य। (पंचा.७८, प्रव.ज्ञे.३८, निय.४८) **-अंतगद** वि [अन्तगत] जानने योग्य पदार्थों के अन्त को प्राप्त। (प्रव.ज्ञे.१०५) **-भूद** वि [भूत] ज्ञेयभूत, जानने योग्य होते हुए। (प्रव.१५)

णेय वि [अनेक] अनेक प्रकार, कई। (स.८४) करेदि णेयविहं।

णेरइय/णेरयिय वि [नैरयिक] नारकी, नरक सम्बन्धी, नरक में उत्पन्न। (पंचा.५५, स.२६८, प्रव.१२)

णेव अ [नैव] निषेध सूचक अव्यय, नहीं। (स.५२, प्रव.२८) णेव य अणुभायठाणाणि। (स.५२)

णेह पुं [स्नेह] 1. प्रेम, अनुराग। (स.२४२) णेहे सव्वम्हि अवणिए संते। 2. चिकनाई, तैल। (स.२३७) णेहभत्तो दु रेणुबहुलम्मि।

णो अ [नो] 1. नहीं, निषेध। (पंचा.५२, स.५१) 2. वि [नव] नौ, संख्या विशेष।

ण्हा अक [स्ना] नहाना। ण्हाऊण (सं. कृ. बो. २५)

ण्हाण न [स्नान] नहान, स्नान। (शी.३८, बो.२५)

त

त स [तत्] वह। तं (प्र.ए.) जं जाणइ तं णाणं। (स.१४) तं (द्वि.ए.सू.१६) ते (प्र.ब.प्रव.३१) तेण (तृ.ए.पंचा.१५७) सो तेण परिचत्तो। तेहिं (तृ.ब.पंचा.१६१) तस्स (च./ष.ए.स.१२६, प्रव.१७) ताण/ताणं (च./ष.ब.भा.१२८) तेसिं/तेसिं (च./ष.ब.पंचा.४५, निय.१३५, सू.२४,२५) तम्हा (पं.ए.पंचा.१६९) तासु (स.ए.निय.५९) वांछाभावं णिवत्तए तासु। (निय.५९)

तइय वि [तृतीय] तीन, संख्या विशेष। (द.१८, चा.२६)

तइलुक्कि न [त्रैलोक्य] तीन लोक। णिप्पण्णं जेहिं तइलुक्कं। (पंचा.५) ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक अधोलोक, ये तीन लोक हैं।

तइया अ [तदा] तो, तब, उसी समय। तइया सुक्कत्तणं पजहे। (स.२२२) तइया अप्पेण दंसणं भिण्णं। (निय.१६३)

तं अ [तत्] इसलिए, इस कारण। तं पविसदि कम्मरयं। (प्रव. ज्ञे. ९५) तं णमंसित्ता।(प्रव. चा.७)

तक्क पुं [तर्क] विचार। किं किंचण त्ति तक्कं। (प्रव.चा.२४)

तक्काल क्रि वि [तत्काल] उसी समय। तक्कालं तम्मयत्ति पण्णत्तं। (प्रव.८)

तक्कालिय वि [तात्कालिक] उसी समय सम्बन्धी, वर्तमान, भूत एवं भविष्यत् संबंधी। जं तक्कालियमिदरं। (प्रव.४७)

तच्च न [तत्त्व] सार, तत्त्व परमार्थ, यथार्थस्वरूप। केवलिगुणे थुणदि, जो सो तच्चं केवलिं थुणदि। (स.२९) **-ग्गहण** न [ग्रहण] तत्त्वग्रहण। **-तण्हु** वि [तज्ञ] वस्तु स्वरूप को जानने वाला। (पंचा.४७, प्रव. ज्ञे.१०५) **-रुइ** स्त्री [रुचि] तत्त्वरुचि। तच्चरुई सम्मत्तं। (मो.३८)

तण न [तृण] घास, तृण। (बो.४६)

तणू स्त्री [तनु] शरीर, काया। **-उसग्ग** पुं [उत्सर्ग] शरीर त्याग, कायोत्सर्ग। निरन्तर आत्मा में लीन हो, शरीर सम्बंधी क्रियाओं से रहित होकर, वचन और मन के विकल्पों को रोकना कायोत्सर्ग है।(निय.१२१) **तणू+उसग्ग** में प्राकृत व्याकरण की दृष्टि से स्वर से आगे स्वर होने पर शब्द के स्वर अर्थात् प्रारम्भ के शब्द के स्वर का लोप हो जाता है। (हे. लुक् १/१०) **-उत्सर्ग** का **उस्सग्ग** प्राकृत रूप व्याकरण की दृष्टि से बनना चाहिए, परन्तु छन्द भङ्ग न हो, इसलिए ऐसा प्रयोग हुआ।

तण्हा स्त्री [तृष्णा] प्यास, पिपासा, बावीस परीषहों में एक भेद। तण्हाए (तृ.ए.प्रव.चा.५२) तण्हाहिं (तृ.ब.प्रव.७५)

तत्तो अ [ततः] उससे, उस कारण से। तत्तो अमिओ अलोओ खं। (पंचा.३)

तत्थ अ [तत्र] वहां, उसमें। सिद्धा चिट्ठंति किध तत्थ। (पंचा.९२)

तदा अ [तदा] तब, उस समय। अप्परिणामी तदा होदि। (स.१२१)

तदिय वि [तृतीय] तीसरा। (भा.११४)

तदो अ [ततः] तब, तो, चूंकि। तदो दिवारत्ती। (पंचा.२५)

तध/तधा अ [तथा] तथा, और। तध सोक्खं सयमादा। (प्रव.६७) सिद्धो वि तधा णाणं। (प्रव.६८)

तम्मअ/तम्मय वि [तन्मय] उसी रूप, उसी प्रकार, तत्पर। (स.३४९-३५२, प्रव.८) जम्हा ण तम्मओ तेण। (स.९९) **-त्त** वि [त्व] उसी पर्यायरूप। (प्रव. ज्ञे.२२) तम्मयत्तादो (पं.ए.) पञ्चमी एकवचन में **दो** प्रत्यय होता है और **दो** प्रत्यय होने पर पूर्व को दीर्घ हो जाता है।

तम्हा अ [तस्मात्] इसलिए, इसकारण। (स.२५७, २५८) तम्हा दु मारिदो दे। (स.२५७) तम्हा गुणपज्जया। (प्रव. ज्ञे.१२)

तय न [त्रय] तीन। (चा.२८) **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] तीन गुप्तियां। मन, वचन, और काय को रोकना गुप्तियां हैं।

तर सक [तृ] पार होना, तैरना। (पंचा.१७२) भवियो भवसायरं तरदि।

तरण न [तरण] तिरना, पार होना। **-हेदु** न [हेतु] पार होने का कारण। संसारतरणहेदू, धम्मोत्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं। (भा.८५)

तरु पुं [तरु] वृक्ष, पेड़। (भा.२१) **-गण** [गण] वृक्षसमूह। (भा.८२, लिं.१६) वज्जं जह तरुगणाण गोसीरं। **-रुहण** न

[रोहण] वृक्ष पर आरोहण, वृक्ष पर चढ़ना। (भा.२६) **-हिट्ठ** स्त्री [अधस्] वृक्ष के नीचे। (बो.४१)

तरुण वि [तरुण] युवक, जवान, तरुण। (स.७९)

तरुणी स्त्री [तरुणी] युवती, जवानस्त्री। (स.१७४)

तल पुं न [तल] तमालवृक्ष, ताड़ का पेड़। (स.२३८)

तव पुं न [तपस्] तप, तपस्या, तपश्चर्या। (पंचा.१७०, स.१५२, प्रव.१४, निय.५५, द.२८) विषय और कषाय के विनिग्रह को करके ध्यान एवं स्वाध्याय द्वारा आत्मा का चिंतन किया जाता है, वह तप है। विसयकसायविणिग्गहभावं, काऊण झाणसज्झाए। जो भावइ अप्पाणं, तस्स तवं होदि णियमेण।। (द्वा.७७) तप से सभी स्वर्ग प्राप्त होते हैं। सग्गं तवेण सव्वो वि । (मो.२३) तप के बाह्य और अभ्यन्तर ये भेद किये गये हैं। इनके भी छह-छह भेद होते हैं। **-गुणजुत्त** वि [गुणयुक्त] तपगुण से युक्त। (शी.८) **-चरण/यरण** न [चरण] तपश्चरण,तपश्चर्या। (निय.५५,११८) तपश्चरण से अनन्तानन्त भवों के द्वारा उपार्जित शुभ-अशुभ कर्मसमूह नष्ट हो जाते हैं। (निय.११८) **-सामण्ण** पुं [श्रामण्य] तपस्वी-श्रमण। वंदमि तवसामण्णा। (द.२८) तवेहिं (तृ. ब. स. १४४) तवसा (तृ.ए.प्रव.चा.२८) तवंहि (स.ए.पंचा.१६०)

तवोकम्म पुं न [तपःकर्म] तपःकर्म, छह आवश्यक कर्मों में एक भेद। (पंचा.१७२) जो कुणदि तवोकम्मं।

तवोधण पुं न [तपोधन] तपरूपी धन। जिणवयणगहिदसारा, विसयविरत्ता तवोधणा धीरा। (शी.३८)

तवोधिग वि [तपोधिक] तपश्चरण में अधिक। समिदकसायो तवोधिगो चावि। (प्रव.चा.६८)

तस पुं [त्रस] द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय एवं पंचेन्द्रिय जीव। (पंचा.३९)

तस्संसग्ग वि [तत्संसर्ग] उसकी संगति। (स.१४९)

तस्सम वि [तत्सम] समान, सादृश्य। तस्सम समओ तदो परो पुव्वो। (प्रव.ज्ञे.४७)

तह/तहवि/तहा अ [तथा] उसी रूप, और,तथा,उसी प्रकार, यद्यपि, तो भी। (स.१८, २२१, २६४, निय.६८, प्रव.४, द.१०) तह कम्माणं वियाणाहि। (पंचा.६६) तह वि य सच्चे दत्ते। (स.३६४) सव्वे भावा तहा होंति। (स.१३१)

ता अ [तत्] उससे,उस कारण से,तब,उस समय। (स.१४०, २६७) या कम्मोदयहेदूहिं। (स.१३८) ता किं करोसि तुमं। (स.२६७)

ताम अ [तावत्] तब तक, वाक्यालङ्कार।

तारय पुं [तारक] तारे, नक्षत्र। जह तारयाण चंदो। (भा.१४३)

तारा स्त्री [तारा] नक्षत्र, तारा। **-आवलि** स्त्री [आवलि] ताराओं की पङ्क्ति,ताराओं का समूह। तारावलिपरियरिओ। (भा.१५९) **-यण** वि [गण] तारागण, ताराओं के समूह। जह तारायणसहियं। (भा.१४५)

तारिय/तारिसअ/तारिसय वि,[तादृशक] वैसे ही, उसी प्रकार, उस तरह का। जीवो वि तारिसओ। (पंचा.६२) जारिसया तारिसया।

(पंचा.११३)

ताली स्त्री [ताली] ताड़ का वृक्ष, वृक्ष विशेष। (स.२३८,२४३)

तावं/तावं अ [तावत्] तब तक, उतने समय तक। (स.१९, २८५, निय.३६, भा.१३१, लिं.४) कुव्वइ आद तावं। (स.२८५)

तावदि वि [तावत्] उतना। (प्रव.७०) भूदो तावदि कालं।

तावदिअ वि [तावत्] उनमें, उतना। तावदिओ जीवाणं। (पंचा.१९)

तावुद अ [तावत्] तब तक। अण्णाणी तावुद। (स.६९)

त्ति अ [इति] इस प्रकार, ऐसा। दुक्खिदसुहिदे करेमि सत्ते त्ति। (स.२५३)

त्ति त्रि [त्रि] तीन, संख्या विशेष। (पंचा.१११) **-गुत्त** वि [गुप्त] तीन गुप्तिवाला। (प्रव.चा.४०, निय. १२५) **-गुणिद** वि [गुणित] तीन गुणा, तीन से गुणित। (प्रव. ज्ञे.७४) **-जगवंद** वि [जगवंद] तीनों लोकों में पूजित। सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, वीतरागी, अरहन्त तीनों लोकों में पूजित होते हैं। तिजगवंदा अरहंता। (चा.१) **-पयार** पुं [प्रकार] तीन प्रकार। तिपियारो सो अप्पा। (मो.४) **-वग्ग** पुं [वर्ग] तीन वर्ग,तीन समूह धर्म,अर्थ और काम। **-वियप्प** पुं [विकल्प] तीन विकल्प, तीन प्रकार। अप्पाणं तिवियप्पं। (निय.१२) **-विहसुद्धि** स्त्री [विधशुद्धि] तीन प्रकार की शुद्धि। मन, वचन और काय की शुद्धि। (भा.१३५) परंपरा तिविहसुद्धीए। (भा.१३५)

तिण्हा स्त्री [तृष्णा] प्यास, पिपासा, इच्छा। (निय.१७९, भा.२३)

तित्ति स्त्री [तृप्ति] तृप्ति, इच्छापूर्ति। (भा.२२)

तित्तिय वि [त्रि-त्रि] तीन-तीन का समूह।

तित्थ पुं न [तीर्थ] 1. तीर्थ, तीर्थप्रवर्तक, सर्वज्ञवचन। (प्रव.१, बो.२५) निर्मल, साम्यधर्म, सम्यक्त्व,संयम, तप और ज्ञान को जिन शासन में तीर्थ कहा गया है। (बो.२६) **-कर/यर** पुं न [कर] तीर्थङ्कर, सर्वज्ञ। (भा.७९) तीर्थङ्कर नामकर्म के उदय से जिसे समवसरणादि विभूति प्राप्त हो वह तीर्थङ्कर है। 2. न [तीर्थ] तट, घाट, नाव।

तिदिय वि [तृतीय] तीसरा। (निय.५८) **-वद** पुं न [व्रत] तृतीयव्रत, तीसराव्रत, अचौर्यव्रत। जो ग्राम, नगर एवं वन में परकीय वस्तु को देखकर उसके ग्रहण के भाव को छोड़ता है, उसी के तीसरा अचौर्यव्रत होता है। (निय.५८) गामे वा णयरे वारण्णे वा, पेच्छिऊण परमत्थं। जो मुचदि गहणभावं, तदियवदं होदि तस्सेव।। (निय.५८)

तिधा वि [त्रिधा] तीन प्रकार का। (प्रव.३६)

तिमिर न [तिमिर] अन्धकार, अंधेरा। (प्रव. ६७) **-हर** वि [हर] अज्ञान को हरण करने वाला! तिमिरहरा जइ दिट्ठी। (प्रव.६७)

तिय न [त्रिक] तीन का समुदाय। तियेह साहूण मोक्खमग्गम्मि। (स.२३५) सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इत्यादि जैसे कोई भी तीन का समूह। **-रण** न [करण] तीन करण। मन-वचन और काय ये तीन करण हैं। तियरणसुद्धो अप्पं। (भा.११४) **-लोय** पुं [लोक] तीन लोक। ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक

और अधोलोक ये तीन लोक हैं। (भा.३३) तियलोयपमाणिओ सव्वो।

तिरिक्ख/तिरिय पुं [तिर्यञ्च्] पशु-पक्षी आदि,तिर्यञ्च योनि। (पंचा.१६, भा.८)

तिरिच्छ पुं [तिर्यञ्च्] पशु-पक्षी। तेण णरा तिरिच्छा। (प्रव.ज.वृ.९२)

तिरिय वि [तिर्यक्] वक्र, कुटिल, तिरछा, तिर्यक्। (स.३३४)

तिलतुसमित्त वि [तिलतुषमात्र] किंचित् भी,कुछ भी। (सू.१८)

तिव्व वि [दे] तीव्र, कठिन। (स.२८८, भा.१२)

तिसा स्त्री [तृषा] प्यास, पिपासा। (भा.९३)

तिसट्ठि वि [त्रिषष्ठि] त्रेसठ, संख्याविशेष। (भा.१४१)

तिसिद वि [तृषित] प्यासा, प्यासवाला। (पंचा.१३७) तिसिदं बुभुक्खिदं वा।(प्रव.चा.ज.वृ.२७)

तिहुअण/तिहुयण/तिहुवण न [त्रिभुवन] तीन लोक। (पंचा.१, प्रव.४८, चा.४१, भा.२३) **-चूडामणि** पुं स्त्री [चूड़ामणि] तीनों लोकों में सिरमौर, तीनों लोकों में श्रेष्ठ। तिहुवणचूडामणी सिद्धा। (चा.४१,भा.९३) **-भवणपदीव** पुं [भवनप्रदीप] तीनों लोकों के घर (स्थान) के दीपक (प्रकाशस्तम्भ)। **-मज्झ** न [मध्य] तीनों लोकों के बीच। (भा.२१) **-सलिल** न [सलिल] तीन लोक का जल। तिहुयणसलिलं सयलं पीयं। (भा.२३) **-सार** पुं न [सार] त्रिलोक श्रेष्ठ, तीन लोक में उत्तम। (भा.७८) पावइ तिहुवणसारं।

तीद पुं [अतीत] अतीत, भूतकाल। (निय.३१)

तु अ [तु] किन्तु,तो,उतना,और,ऐसा,कि,तथा,अथवा,या फिर ही पाद पूर्तिक अव्यय। (पंचा. २६, ८६, स.९, ३२, निय.३१) अणण्णभूदं तु सत्तादो। (पंचा.९) सामाइयं तु तिविहं । (निय.१०३)

तुम्ह स [युष्मद्] युष्मद्, तुम। युष्मद् शब्द को तुम्ह आदेश हो जाता है। तुम्हं एयं मुणंतस्स। (स.३४१) तुम्हं (च./ष.ए.) तुमं (प्र.ए.स.३७४, भा.४१, मो.३५) तुहं (च/ष.ए.स.२५२,२५५,२५६) तुमे (प्र.ए.भा.२३,२४) पीयं तिण्हाए पीडिएण तुमे।**तुमे** यह रूप वैसे द्वितीया एकवचन में बनता है, परन्तु यहां प्रथमा एकवचन में भी इसका प्रयोग हुआ है।(हे.तं तुं तुमं तुवं तुह तुमे तुए अमा।३/९२)तुज्झ (च./ष.ए.स.१२१) तुह (स.ए.भा.१९) दे. (च./ष.ए.स.२५९) ते (च./ष.ए.भा.६,६९) ते (तृ.ए. स. २४८, २४९, २५२, २५४) तए (तृ.ए.स.२५१)

तुरिय वि [तुर्य] चतुर्थ,चौथा।तुरियं अबंभविरई। (चा.३०) **-वद**- पुं न [व्रत] चतुर्थव्रत,चौथा नियम,ब्रम्हचर्यव्रत।जो स्त्रियों के रूप को देखकर उनमें वाञ्छाभाव नहीं रखता एवं मैथुन संज्ञा के परिणाम से रहित होकर परिणमन करता है, उसी को ब्रह्मचर्यव्रत होता है। (निय.५९)

तुस पुं [तुष] धान्य का छिलका, भूसी। (शी.२४) **-धम्मंत** वि [धमत्] तुष को उड़ा देने वाला,सूप। तुसधम्मंतबलेण। **-मास** पुं

[माष] छिलका सहित उड़द दाल। तुममासं घोसंतो। (भा.५३)

तूस अक [तुष्] संतुष्ट होना, खुश होना, प्रसन्न होना। (स.३७३) तूसदि (व.प्र.ए.स.३७३)

ते त्रि [त्रि] तीन। **-इंदिय** न [इन्द्रिय] त्रीन्द्रिय, तीन इन्द्रिय। (पंचा.११५) **-काल** पुं [काल] तीन काल। भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान। तेकालणिच्चविसमं। (प्रव.५१) **-कालिक** वि [कालिक] तीन काल संबंधी। (प्रव.४८) ते चेव अत्थिकाया, तेकालियाभावपरिणदा णिच्चा। (पंचा.६) **-याला** स्त्री न [चत्वारिंशत्] तेतालीस। (भा.३६) **-रस/रह** स्त्री न [दश] तेरह, त्रयोदश। (स.११०, बो.३१) तेरसकिरियाउ भावतिविहेण। (भा.८०) **-लोक्क** पुं [लोक्य] तीन लोक। (पंचा.७६) यहाँ पर लोक शब्द का लोक्क नहीं बना, अपितु जनप्रचलित लोक को लोक्य, जो बोलने में आता है, वही है।

तेउ पुं [तेजस्] आग, अग्नि, तेज,अग्निकाय विशेष। (प्रव.ज्ञे.७५)

तेज पुं [तेजस्] तेज, ताप, प्रकाश। सयमेव जधादिच्चो, तेजो उण्हो य देवदा णभसि। (प्रव.६८)

तेजयिअ वि [तेजयिक] तैजस शरीर विशेष। शरीर के भेदों में तैजस भी एक भेद है। (प्रव.ज्ञे.७९)

तेल न [तैल] तेल।मूंगफली, विनोला, सोयाबीन या तिल से निकाला गया तरल पदार्थ। (निय.२२)

तो अ [तदा] तब,तो,फिर भी, क्योंकि। (स.१७, २२४, भा.२२, द.२६) तो सत्तो वत्तुं जे। (स.२५)

तोय न [तोय] जल, पानी। (शी.२८)

त्ति अ [इति] इस प्रकार, ऐसा। (पंचा.५७, स.१७०, प्रव.७)

थ

थण पुं [स्तन] स्तन, कुच, पयोधर। (भा.१८) **-अंतर** वि [अन्तर] स्तनों के मध्य। (सू.२४, प्रव. चा.ज.वृ.२४) **-च्छीर** न [क्षीर] स्तन दुग्ध। पीयो सि थणच्छीरं। (भा.१८)

थल न [स्थल] भूमि, जमीन। (भा.२१) **-चर** वि [चर] थलचर, भूमिपर चलने वाला। (पंचा.११७)

थावर पुं [स्थावर] एकेन्द्रिय प्राणी, पृथिवी, जल,अग्नि, वायु और वनस्पति। (प्रव.ज्ञे.९०,द.३५) आचार्य कुन्दकुन्द ने चलनात्मक विवक्षा को आधार कर अग्नि और वायु को त्रस भी कहा है। (पंचा.१११) दर्शन पाहुड में एक हजार आठलक्षणों और चौतीस अतिशयों सहित जिनेन्द्र (अरहन्त) जब तक बिहार करते हैं, तब तक उन्हें स्थावर प्रतिमा कहा है। (द.३५) **-काय** पुं [काय] स्थावर काय, एकेन्द्रिय जीव, स्थावर जीव। ये पांच हैं-पृथिवी, जल,तेज, वायु और वनस्पति। थावरकाया तसा हि कज्जजुदं। (पंचा.३९)-**तणु** स्त्री [तनु] स्थावर शरीर। (पंचा.१११)

थिर वि [स्थिर] स्थिर, निश्चल, दृढ़। (स.२०३, बो.२२) **-भाव** पुं [भाव] स्थिर भाव,दृढ़भाव। (निय.८५,८६) जिणमग्गे जो दु कुणदि थिरभावं।

थी स्त्री [स्त्री] महिला, नारी, स्त्री। (निय.४५,६७)

थुण सक [स्तु] स्तुति करना, पूजना, गुणगान करना। केवलिगुणे

थुणदि जो, सो तच्चं केवलिं थुणदि। (स.२९) थुणदि (व.प्र.ए.) थुणित्तु (सं.कृ.स.२८) थुणिज्जइ (व. कृ. प्र. ए.मो.१०३) थोस्सामि (भवि. उ.ए.ती.भ.१)

थुद वि [स्तुत] पूजित, प्रशंसित, जिसका गुणगान किया गया हो। केवलिगुणा थुदा होंति। (स.३०)

थुव्व सक [स्तु] स्तुति करना, अर्चना करना। थुव्वंते (व.कृ.स.ए.स.३०) थुव्वंतेहिं (व.कृ.तृ.मो.१०३)

थूल वि [स्थूल] मोटा, तगड़ा। (चा.२३,२४, निय.२१)अइथूल-थूल-थूलं। (निय.२१) पर्वत, पत्थर,लकड़ी आदि अतिस्थूल है। घी, तेल, जल आदि स्थूल हैं। धूप, प्रकाश आदि स्थूलसूक्ष्म हैं।शब्द और गन्ध आदि सूक्ष्मस्थूल हैं।इन्द्रिय अग्राह्य स्कन्ध सूक्ष्म हैं तथा परमाणु अतिसूक्ष्म है। इस तरह पुद्गल के छह भेद किये गये हैं।(निय.२२)

थेय वि [स्तेय] चोरी, अपहरण। थेयाई अवराहे कुव्वदि। (स.३०१)

थोव वि [स्तोक] अल्प, थोड़ा, स्तोक। थोवो वि महाफलो होइ। (शी.६)

द

दंडअ पुं [दण्डक] दण्डक नामविशेष। **-णयर** न [नगर] दण्डक नगर। (भा.४९) दंडअणयरं सयलं, डहिओ अब्भंतरेण दोसेण। (भा.४९)

दंत वि [दान्त] वश में किया हुआ, दमन करने वाला।

(नियं.१०५) णिक्कसायस्स दंतस्स, सूरस्स ववसायिणो। (नियं.१०५)

दंति पुं [दन्तिन्] हस्ति,हाथी।(निय.७३)पंचिंदियदंतिप्पणि-दृलणा।

दंस सक [दर्शय्] दिखलाना, बतलाना। दंसेइ मोक्खमग्गं। (बो.१३)

दंसण पुं न [दर्शन] 1. तत्त्व श्रद्धा, तत्त्वावलोकन, तत्त्वरुचि। 2. देखना, पहिचाना, पदार्थ का सामान्यावलोक। 3. जिनलिङ्ग, जिनमुद्रा। 4. रत्नत्रय।आचार्य कुन्दकुन्द ने दंसण शब्द का प्रयोग अपने सभी ग्रन्थों में किया है, किन्तु दर्शनपाहुड और बोधपाहुड में यह विशेष पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त हुआ है- जो सम्यक्त्वरूप, संयमरूप, उत्तमधर्मरूप, निर्ग्रन्थरूप एवं ज्ञानमय मोक्षमार्ग को दिखलाता है, वह दर्शन है। दंसेइ मोक्खमग्गं, सम्मत्तं संजमं सुधम्मं च। णिग्गंथं णाणमयं, जिणमग्गे दंसणं भणियं।(बो.१३)जो अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग---दोनों प्रकार के परिग्रह को छोड़,मन-वचन-काय से संयम में स्थित हो,ज्ञान से एवं कृत-कारित-अनुमोदना से शुद्ध रहता है तथा खड़े होकर भोजन करता है वह दर्शन है। दुविहंपि गंथचायं,तीसुवि जोगेसु संजमं ठादि। णाणम्मि करणसुद्धे,उब्भसणे दंसणं होई।। (द.१४) दर्शनपाहुड में ऐसा दर्शन ही धर्म का मूल,प्रधान कहा गया है।दंसणमूलो धम्मो। (द.२) जिस प्रकार वृक्ष,जड़ से शाखा आदि परिवार से युक्त कई गुणा स्कन्ध

उत्पन्न होता है, उसीप्रकार मोक्षमार्ग की वृद्धि दर्शन से होती है। (द.११) दर्शन से रहित की वंदना नहीं करना चाहिए। दंसणहीणो ण वंदिव्वो। (द.२) -**उवओग** पुं [उपयोग] दर्शनोपयोग, पदार्थ का सामान्यावलोकन,निर्विकल्प ज्ञान।इसके दो भेद किये गये हैं। स्वभाव दर्शनोपयोग और विभावदर्शनोपयोग। जो इन्द्रियादि साधनों तथा पर पदार्थों की सहायता से निरपेक्ष मात्र दर्शन है, वह स्वभाव दर्शन है। (निय.१४) और चक्षुर्दर्शन,अचक्षुर्दर्शन तथा अवधिदर्शन विभावदर्शन हैं।(निय.१५)-**धर** पुं [धर] दर्शन को धारण करने वाला,सम्यग्दृष्टि।(द.१२)-**भट्ट** वि [भ्रष्ट] दर्शन से भ्रष्ट, दर्शन से च्युत।(द.३)दंसणभट्टा भट्टा।यहां दर्शन का अर्थ सम्यग्दर्शन न कर ऊपर कहे विशेष पारिभाषिक शब्द के रूप में ग्रहण करना युक्ति संगत प्रतीत होता है। -**भूद** वि [भूत] दर्शनरूप। (प्रव.ज्ञे.१००) -**मूल** पुं न [मूल]दर्शन का प्रधान, दर्शन का मुख्य,दर्शन का आधार। (द.२)-**मग्ग** पुं [मार्ग]दर्शनमार्ग। (द.१) -**मुक्क** वि [मुक्त] दर्शन से मुक्त, दर्शन से रहित। दंसणमुक्को य होइ चलसवओ। (भा.४२) -**मुह** न [मुख] दर्शन सहित।(प्रव.चा.१४)-**मोह** पुं [मोह] दर्शनमोह,मोहनीय कर्म का अवान्तर भेद। (निय.५३) सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति में अन्तरङ्गबाधक कारण दर्शनमोह है। -**रयण** पुं न [रत्न] दर्शन रूपी रत्न।(द.२१,भा.१४६)-**विसुद्ध** वि[विशुद्ध] दर्शन से विशुद्ध, षोडशकारण भावनाओं में प्रथम भावना। (भा.१४

-**विहूण** वि [विहीन] दर्शन से रहित।(शी.५) -**सुद्ध** वि[शुद्ध] दर्शन से शुद्ध, निर्मल दर्शन वाला।(शी.१२) -**सुद्धि** वि [शुद्धि] दर्शन की शुद्धि, निर्दोष दर्शन, दर्शनविशुद्धि, सोलह कारण भावनाओं में प्रथम। दंसणसुद्धी य णाणसुद्धीय। (शी.२०) -**हीण** विं [हीन] दर्शन हीन, दर्शन से रहित। दंसणहीणो ण वंदिव्वो। (द.२) जिस प्रकार स्वच्छ आकाश मण्डल में ताराओं के समूह सहित चन्द्रमा का बिम्ब सुशोभित होता है, उसी प्रकार तप और व्रत से पवित्र दर्शन मय विशुद्ध जिनाकृति शोभित होती है। (भा.१४५) दर्शन गुणरूपी रत्नों में श्रेष्ठ तथा मोक्ष की पहली सीढ़ी है। (द.२१)

दट्ठ वि [द्रृष्ट] देखता हुआ, देखा हुआ। (भा.१५)

दट्ठ सक [दृश] देखना, अवलोकन करना। दट्ठं (हे.कृ.द.२४) दट्ठूण (सं.कृ.पंचा.१३०, नियं.५९, द.२५)

दड्ढ वि [दग्ध] जला हुआ। (भा.१२५)

दढ वि [दृढ] मजबूत, कठोर। -**करणणिमित्त** न [करणनिमित्त] मजबूत करने में कारण। (निय.८२) -**संजम** पुं [संजम] दृढ़संयम। (बो.१८)

दत्त वि [दत्त] 1. दिया हुआ। (प्रव.चा.५७) 2. न [दत्त] अचौर्य (स.२६४)

दप्प पुं [दर्प] अहङ्कार, अभिमान, घमण्ड, गर्व। (निय.७३, भा.१०२)

दम पुं [दम] दमन, निग्रह, इन्द्रियजय। (शी.१९) -**जुत्त** वि

[युक्त] दमनयुक्त, इन्द्रियनिग्रह से युक्त। (बो.५१)

दया स्त्री [दया] करुणा, दया, अनुकम्पा। (बो.२४, भा.१३२) कुरु दयपरिहरमुणिवर। यहां **दय** शब्द द्वितीया एकवचन में है। **-विसुद्ध** वि [विशुद्ध] दया से विशुद्ध, दया से निर्मल। धम्मो दया विसुद्धो। (बो.२४)

दव सक [द्रव] प्राप्त होना। (पंचा.९) दवियदि (व.प्र.ए.)

दविण पुं न [द्रविण] धन, पैसा, वैभव, सम्पत्ति। (प्रव.ज्ञे.१०१) देहा वा दविणा वा।

दविय न [द्रव्य] द्रव्य। जो भाव वस्तु के अपने-अपने गुण-पर्यायरूप स्वभाव को प्राप्त होता है तथा एक रूप में ही व्याप्त होता है, वह द्रव्य है। (पंचा.९) द्रव्य के तीन लक्षण दिये गये हैं-दव्वं सल्लक्खणियं (सत्लक्षण)। उप्पादव्वयधुवत्तसंजुत्तं (उत्पाद, व्यय और ध्रौव्ययुक्त)। गुणपज्जायसयं (गुण और पर्यायस्वरूप)। (पंचा.१०) समयसार में कहा है-जैसे सोना अपने कंगन आदि पर्याय से अभिन्न/एक रूप है वैसे ही द्रव्य अपने गुणों से तथा पर्यायों से अभिन्न है। (स. ३०८) **-भाव** पुं [भाव] द्रव्यभाव। (पंचा.६)

दव्व न [द्रव्य] द्रव्य। (पंचा.८५, स.१०८, प्रव.३६, निय.२६, बो.२७, भा.३३, चा.१८) **-उवभोग** पुं [उपभोग] द्रव्य कर्म के उपभोग। (स.१९६) **-कालसंभूद** वि [कालसंभूत] द्रव्यकाल से उत्पन्न। (पंचा.१००) **-जादि** स्त्री [जाति] द्रव्यसमूह। (प्रव.३७) **-ट्ठिअ** वि [आर्थिक] द्रव्यार्थिकनय विशेष।

(प्रव.ज्ञे.२२) -**णिग्गंथ** वि [निर्ग्रन्थ] बाह्य परिग्रह का त्यागी। (भा.७२) -**त्त** वि [त्व] द्रव्यत्व, द्रव्यपना। (प्रव.८९) -**त्थिअ** वि [आर्थिक] द्रव्यार्थिक, नयविशेष। (निय.१९) -**भाव** पुं [भाव] द्रव्य भाव, द्रव्य स्वभाव, द्रव्य की प्रकृति। (स.२०३) -**मअ** वि [मय] द्रव्यात्मक, द्रव्यमय, द्रव्यस्वरूप। (प्रव.ज्ञे.१) -**मित्त** न [मात्र] द्रव्यमात्र, द्रव्यकर्म की सम्पूर्णता। (भा.४८) ण हु लिंगी होइ दव्वमित्तेण। -**लिंग** न [लिङ्ग] द्रव्यलिङ्ग, बाह्य चिह्न। (भा.४८) -**लिंगि** वि [लिङ्गिन्] द्रव्यलिङ्गी, बाह्यवेष धारण करने वाला मुनि। (भा.१३)-**विजुत्त** वि [वियुक्त] द्रव्य से रहित।(पंचा.१२)-**सण्णा** स्त्री [संज्ञा] द्रव्यसंज्ञा, द्रव्यनाम। (पंचा.१०२)-**सवण** पुं [श्रमण]द्रव्यश्रमण,द्रव्यमुनि, बाह्यवेषधारी मुनि।(भा.३३,१२१)द्रव्य के छह भेद हैं-जीव, पुद्गल,धर्म,अधर्म,आकाश और काल।इन छह द्रव्यों के आधार पर ही विश्व की रचना संभव है। छह द्रव्यों के समूह का नाम विश्व है। विस्तार के लिए पंचास्तिकाय देखे।

दरि स्त्री [दरि] गुफा, कन्दरा, घाटी।(भा.२१)

दरिसण न [दर्शन] मत, विचारधारा। (स.३५३)

दरीसण न [दर्शन] मत,दर्शन।(स.४६)ववहारस्स दरीसण-मुवएसो।

दस त्रि [दशन्] दश, संख्या विशेष। (पंचा.७२, भा.३९, बो.३७) दस पाणा। (बो.३७) **ट्ठाणग** वि [स्थानक] दश प्रकार दशभेद। (पंचा.७२) पृथ्वी,जल,तेज,वायु,प्रत्येक वनस्पति, साधारण

वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रय और पञ्चेन्द्रिय ये दश स्थान हैं। **-पुव्वि** क्रि.वि.[पूर्वम्] दशपूर्व। दसपुव्वीओ वि किं गदो णरयं। (शी.३०) **वियप्प** पुं [विकल्प] दश प्रकार,दशभेद। (भा.१०५) विज्जवच्चं दसवियप्पं। **-विह** वि [विध] दश प्रकार का।अबभं दसविहं पमोत्तूण। (भा.९८)

दह त्रि [दश] दश संख्या विशेष। (बो०३४) **-प्राण** पुं [पाण] दश प्राण। पाँच इन्द्रिय, तीन बल, आयु और श्वासोच्छवास।

दा सक [दर्शय्] दिखलाना, दर्शन कराना। (स.५) जदि दाएज्ज पमाणं। दाए (वि./आ.प्र.ए.) दाएज्ज (वि./आ.उ.ए.)

दाण पुं न [दान] दान, त्याग। (प्रव.६९,द्वा.३१) **-रद** वि [रत] दान में तत्पर, दान में संलग्न। (प्रव.चा.६९)

दारा स्त्री [दारा] स्त्री,औरत। (मो.१०)

दारिद्द न [दारिद्र] निर्धनता, दीनता। (बो.४७)

दारुण वि [दारुण] विषम, भयंकर, भीषण। (भा.९)

दि सक [दा] देना। (पंचा.६७,स.२५२,२५५) दिंति (व.प्र.ए.द. ९) दिंता (व.कृ.पंचा.७) दिंतु (वि./आ.प्र.ब.भा.१६२)

दिक्खा स्त्री [दीक्षा] प्रव्रज्या, दीक्षा,संन्यास। (बो.१५,१७,२५, भा.११०) जं देइ दिक्खसिक्खा। (बो.१५)

दिट्ठ वि [दृष्ट] देखा हुआ,अवलोकित। (द.३०)

दिट्ठा सं.कृ. [दृष्ट्वा] देखकर। (प्रव.चा.५२,६१)

दिट्ठि स्त्री [दृष्टि] 1.नजर, दृष्टि। लोगालोगेसु वित्थडा दिट्ठी। (प्रव.६१,६७)2.सम्यग्दृष्टि, सम्यग्दर्शन। दिट्ठी अप्पप्पासया चेव

(निय.१६१)

दिढ वि [दृढ] मजबूत, स्थिर। (मो.४९,७०)

दिण पुं न [दिन] दिवस। **-यर** पुं [कर] सूर्य। (निय.१६०) दिणयरपयासतावं।

दिण्ण वि [दत्त] दिया हुआ। (सू.१७) दिण्णां परेण भत्त। (निय.६३)

दिय पुं [द्विज] दन्त, दांत। (भा.४०) दियसंगट्ठियमसणं।

दियह पुं न [दिवस] दिन, दिवस। (मो.२१)

दिव न [दिव्] स्वर्ग, देवलोक। (भा.६५) पहीणदेवो दिवो जाओ।

दिवा अ [दिवा] दिन,दिवस। (प्रव.ज्ञे.२९,निय.६१) **-रत्ति** [रात्रि] दिनरात। तीस मुहूर्त के बीतने का नाम। (पंचा.२५)

दिविज पुं [दिविज] देव, देवता। (द्वा.४२)

दिव्व अक/सक [दिव्] क्रीड़ा करना। जंत्तेण दिव्वमाणो। (लिं.१०)

दिव्व वि [दिव्य] स्वर्ग सम्बन्धी, स्वर्गिक। (भा.७४)

दिसि स्त्री [दिश्] दिशा।पूर्व, उत्तर, पश्चिम और दक्षिण। (चा.२५)

दिस्स सक [दृश्] देखना, अवलोकन करना। (मो.२९) दिस्सदे (व.प्र.ए.)

दीव पुं [दीप] 1. प्रदीप, दीपक, दिआ। (प्रव.६७, भा.१२२) 2.पुं [द्वीप] द्वीप, जिसके चारों ओर पानी भरा हो ऐसा भूभाग। (द्वा.४०) **-अंबुरासि** वि [अम्बुराशि] द्वीप का जल समूह, द्वीप समुद्र। (द्वा.४०)

दीवायण पुं [द्वीपायन] द्वीपायन नामक मुनि। (भा.५०)

दीस सक [दृश्] देखा जाना, अवलोकित किया जाना। (स.३११, ३२२) दीसइ/दीसए (कर्म.व.प्र.ए.) कर्मणि प्रयोग में दृश् का **दीस** आदेश हो जाता है।

दीह वि [दीर्घ] लम्बा,अधिक,विस्तार। (भा.९९) **-काल** पुं [काल] दीर्घसमय, अधिकसमय। (भा.९५) **-संसार** पुं [संसार], दीर्घसंसार, जन्मजन्मांतर। (भा.९९) जो जीव, यह मेरा पुत्र है, यह मेरी स्त्री है, यह मेरा धन-धान्य है, ऐसी तीव्र आकांक्षा करता है, वह दीर्घ संसार में परिभ्रमण करता है। (द्व.२४-३८)

दु अ [तु] और, तथा, किन्तु,परन्तु, लेकिन, ऐसा, तो, इसलिए, कि, फिर भी । (पंचा.८९, स.२५३,२१०,भा.१८, मो.४) कालो दु पडुच्चभवो। (पंचा.२६) सो तेण दु अण्णाणी। (मो.५६)

दु अ [दुर्] खराब, बुरा, दुष्ट, अशुभ। (प्रव.ज्ञे.६६,निय.१०३, बो.३६,मो.१६)

दुइय वि [द्वितीय] द्वितीय, दूसरा। (सू.२१)

दुक्ख पुं न [दुःख] पीड़ा, क्षोभ, व्यथा। (पंचा.१२२, स.७४, प्रव.२०, निय.१७८) जीव के साथ बंधे हुए आस्रव अनित्य, अशरण और दुःख। (स.७४) आस्रवों की अशुचिता, और विपरीतता ही दुःख का कारण है।(स.७२)**-क्खय** वि [क्षय] दुःखक्षय, दुख का नाश, दुःख रहित।(चा.२०) **-परिमोक्ख** पुं [परिमोक्ष] दुःखों से पूर्ण मुक्ति, दुःखों से अत्यन्त छुटकारा। (पंचा.१०३, प्रव .चा.१) **-फल** पुं न [फल] दुःखफल दुःख का

परिणाम,दुःख का प्रयोजन।दुक्खा दुक्खाफलाणि य।(स.७४) **-मोक्ख** पुं [मोक्ष] दुःख से मुक्ति। (पंचा.१६५) **-रहिय** वि [रहित] दुःख से रहित, दुःख से परे। (बो.३६) **-संतत्त** वि [संतप्त] दुःख से संतप्त,दुःख से पीड़ित । (प्रव.७५) आमरणं दुक्खसंतत्ता। **-सहिस्स** वि [सहस्र] हजारों दुःख। (प्रव.१२) दुक्खसहिस्सेहिं सदा।दुक्खा (प्र.ब.स.७४) दुक्खाइं (द्वि.ब.भा.११) दुक्खेण (तृ.ए.भा.१९) दुक्खस्स (च./ष.ए.स.७२) दुक्खादो (पं.ए.पंचा.१२२)

दुक्ख सक [दुःखय्] दुःख होना, दर्द होना। दुक्खाविज्जइ तहेव कम्मेहिं। (स.३३३) दुक्खाविज्जइ (प्रे.व.प्र.ए.)

दुक्खिद वि [दुःखित] दुःखयुक्त, दुःखी, पीड़ित, व्यथित। (स.२५३-२५९) दुक्खिदसुहिदा हवंति जदि जीवे। (स.२५४)

दुग न [द्विक] दो, युग्म, युगल। (प्रव.ज्ञे.४९)

दुगइ स्त्री [दुर्गति] खोटी पर्याय, अशुभ पर्याय। (मो.१६)

दुगंछा/दुगुंछा स्त्री [जुगुप्सा] घृणा, निंदा। जो दुगंछा भयं वेद। (निय.१३२) णत्थि दुगुंछा य दोसो य। (बो.३६)

दुगुण पुं न [द्विगुण] दुगुना, स्निग्धता के दो अंशों को धारण करने वाला। (प्रव.ज्ञे.७४)

दुग्ग पुं न [दुर्ग] किला, गढ़,कोट। (द्वा.९)

दुग्गंध पुं [दुर्गन्ध] दुर्गन्ध, खराब गन्ध, बदबू। (भा.४२)

दुच्चरित्त न [दुश्चरित्र] दुराचरण, दुष्ट प्रवर्तन, खराब आचरण। (निय.१०३)

दुच्चित्त न [दुश्चित्त] अशुभमन, आर्तरौद्र ध्यानरूप मन। (प्रव.ज्ञे.६६)

दुज्जण पुं [दुर्जन] दुष्ट, खल। (भा.१०७)

दुज्जय वि [दुर्जय] कठिनता से जीता जाने वाला, दुर्जेय। (भा.१५५)

दुट्ठ वि [द्विष्ट] द्वेष युक्त, कुत्सित, दूषित, दुष्ट। (प्रव.ज्ञे.६६)

दुद्ध न [दुग्ध] दूध,क्षीर। (स.३१७) **-ज्झसिय** वि [अध्युषित] दूध में डुबाया हुआ। (प्रव.३०) दुद्धज्झसियं जहा सभासाए।

दुद्धी स्त्री [दुर्+धी] दुष्ट बुद्धि, दुर्बुद्धि। (भा.१३८)

दुपदेस वि [द्विप्रदेश] दो प्रदेश वाला, दो अवयव वाला। जो परमाणु द्वितीयादि प्रदेशों से रहित, एक प्रदेश मात्र है, स्वयं शब्द से रहित स्निग्ध और रूक्ष गुण धारक द्विप्रदेशादिपने का अनुभव करता है। (प्रव.ज्ञे.७१)

दुप्पउत्त वि [दुष्प्रयुक्त] दुरुपयोग वाला, असत् क्रियाओं में आसक्ति रखने वाला,असत् क्रियाओं में लीन। (पंचा.१४०)

दुब्भाव पुं [दुर्भाव] असत्भाव, खोटे परिणाम। (द्वा.८०)

दुम पुं [द्रुम]वृक्ष,पेड़।(द.१०)जह मूलम्मि विणट्ठे,दुमस्स परिवार णत्थि परिवड्ढी।

दुम्मअ वि [दुर्मत] मिथ्यामत, आगम या आप्त से विपरीत मान्यता। दुम्मएहिं दोसेहिं। (भा.१३८)

दुम्मेह वि [दुर्मेधस्] दुर्बुद्धि, दुर्मति, मिथ्यामति वाला। (स.४३) परमप्पाणं वदंति दुम्मेहा।

दुराधिग/दुराधिय वि [द्वि+अधिक] दो से अधिक, दो अधिक। (प्रव.ज्ञे.७३) समदो दुराधिगा जदि बज्झंति हि आदि परिहीणा।

दुल्लह वि [दुर्लभ] कठिनाई से प्राप्त होने वाला, दुःख से प्राप्त होने वाला। (द.१२) बोही पुण दुल्लहा तेसिं।

दुविध वि [द्विविध] दो प्रकार का। (पंचा.४७)

दुवियप्प पुं [द्विविकल्प] दो भेद, दो प्रकार। (निय.१४,१६,२०, पंचा.७१)

दुविह वि [द्विविध] दो प्रकार का, दो रूप वाला। (पंचा.४०, स.८७, द.१४) उवओगो खलु दुविहो। (पंचा.४०) **-धम्म** पुं न [धर्म] दो प्रकार का धर्म दो प्रकार का स्वभाव। (भा.१४३) **-पयार** पुं [प्रकार] दो प्रकार। दुविहपयारं बंधइ। (भा.११८) **-पि** अ [अपि] दोनों ही। दुविहं पि गंथचायं। (द.१४) **-सुत्त** न [सूत्र] दो प्रकार के सूत्र, दो प्रकार के श्रुत, दो प्रकार के आगम। अर्थ और शब्द की अपेक्षा **सूत्र**, आगम या श्रुत दो प्रकार का है। (सू.३)

दुस्स सक [द्विष्] द्वेष करना। (प्रव.चा.४३) दुस्सदि (व.प्र.ए.)

दुस्सुदि स्त्री [दुःश्रुति] मिथ्याश्रुति, मिथ्याशास्त्र का श्रवण, आप्त कथित अर्थयुक्त शास्त्र को न सुनना। (प्रव.ज्ञे.६६)

दुस्सील वि [दुश्शील] दुःशील, शील से रहित। (द.१६,१७)

दुह पुं न [दुःख] कष्ट, पीड़ा,क्लेश। (भा.१४,१२६,मो ६२) दुहाइं (द्वि.ब.भा.१२६) दुहे जादे विणस्सदि। (मो.६२)

दुह सक [दुःखय्] दुःखी करना, पीड़ित करना। (स.२५७,२५८)

तम्हा दु मारिदो दे दुहाविदो।

दुहि वि [दुःखिन्] दुःखी, पीड़ित। (स.३५५)

दुहिद वि [दुःखित] दुःखी, पीड़ित। (पंचा.१३७, स.३८९, प्रव.७५)

दूर न [दूर] अनिकट, असमीप। **-तर** वि [तर]अत्यन्त दूर, बहुत दूर। दूरतरं णिव्वाणं। (पंचा.१७०)

दूस सक [दूषय्] दोष लगाना, दूषित करना। (लिं.१७) महिलावग्गं परं च दूसेदि। दूसेदि (व.प्र.ए.)

दूसिय वि [दूषित] दूषणयुक्त, कलङ्कयुक्त। (भा.१०१)

दे सक [दा] देना, प्रदान करना। (स.२२५, बो.१५) देऊ (वि./आ.प्र.ए.भा.१५१) देऊ मम उत्तमं बोहिं। देदुं (हे.कृ.प्रव. ज्ञे.४८) देदि (व.प्र.ए.पंचा.६३, स.२२४) देंति (व.प्र.ब.पंचा. ११०)

देव पुं न [दिव], अमर, सुर। (पंचा.११८,स.२६८,प्रव.६,मो.१, भा.१३) 2.देवपर्याय,देवगति। (पंचा.१८,१९)

देवद न [दैवत] देव, देवता। (प्रव.६९,७४) देवदजदिगुरुपूजासु

देवदा स्त्री [दिवता] देवता, देव। तेजो उण्हो य देवदा णभसि। (प्रव.६८)

देस पुं [देश] 1.देश, जनपद। (प्रव.चा.४३) 2.प्रदेश, स्थान, क्षेत्र। (निय.३६) अणंतयं हवे देसा।

देसय वि [देशक] उपदेशक, प्ररुपक। (निय.७४) जिणकहियपयत्थदेसया सूरा।

देशविरद वि [देशविरत] श्रावक, उपासक, पञ्चमगुणस्थानवर्ती। देशविरत श्रावक के ग्यारह भेद हैं- दर्शन, व्रत, सामायिक, प्रोषध, सचित्तत्याग, रात्रिभुक्तित्याग, ब्रह्मचर्य, आरम्भत्याग, परिग्रहत्याग, अनुमतित्याग और उद्दिष्टत्याग। (चा.२२)

देसिद वि [दर्शित] बताए गए, दिखलाए गये। (स.३०९) जे परिणामा दु देसिदा सुत्ते।

देसिय वि [देशित] उपदिष्ट, उपदेशित, कथित, प्रतिपादित। सव्वं बुद्धेहि देसियं धम्मं। (लिं.२२)

देह पुं न [दिह] शरीर, काय। (पंचा.१२९,स.२६,प्रव.७१, मो.१२) **-अंतरसंकम** वि [अन्तरसंक्रम] अन्यपर्याय का सम्बन्ध। (प्रव.ज्ञे.७८) **-उब्भव** वि [उद्भव] शरीर से उत्पन्न। (प्रव.७८) **-उड** पुं न [पुट] शरीर रूपी पात्र। चिंतेहि देहउडं। (भा.४२) **-उडी** स्त्री [कुटि] शरीररूपी कुटिया। (भा.१३१) रोयग्गी जा ण डहइ देहउडिं। **-गद** वि [गत] शरीरगत, शरीर को प्राप्त। (प्रव.२०) **-गुण** पुं न [गुण]शरीर गुण, शरीर के गुण। देहगुणे थुव्वंते। (स.३०) **-णिम्मम** वि [निर्मम] शरीर के प्रति ममत्व न होना , शरीर के प्रति अनुराग न होना, देह प्रेम न होना। देहणिम्ममा अरिहा। (स.४०९) **-त्थ** वि [स्थ] शरीरस्थ, शरीर में रहता हुआ। देहत्थं किं पि तं मुणह। (मो.१०३) तह देही देहत्थो। **-दविण** न [द्रविण] शरीर और धन। (प्रव.ज्ञे.९८) **-पधाण** वि [प्रधान] शरीर की मुख्यता, जिसमें शरीर की प्रधानता है। (प्रव.ज्ञे.५८) देहपधाणेसु विसयेसु। **-प्पवियारमस्सिद** वि

[प्रवीचारमाश्रित] शरीर के परिवर्तन को प्राप्त, एक के बाद एक शरीर को प्राप्त। (पंचा.१२०) देहप्पविचारमस्सिदा भणिदा। **-मत्त** न [मात्र] शरीर मात्र, शरीर प्रमाण, स्वदेह प्रमाण। (पंचा.२७) **-विहूण** वि [विहीन] शरीर रहित। देहविहूणा सिद्धा। (पंचा.१२०)

देहि पुं [देहिन्] आत्मा, जीव। (पंचा.१७,३३,प्रव.६६) तह देहि देहत्थो। (पंचा.३३)

दो त्रि [द्वि] दो, संख्या विशेष। (पंचा.८१, स.१८७) दो किरियावादिणो होइ। (स.८६) दोण्णि (द्वि.ब.स.६५) दोण्हं (च./ष.ब.स.८१, पंचा.१२) **-वि** अ [अपि]दोनों ही (पंचा.८७, १३७,१३९) दो वि य मया विभत्ता। (पंचा.८७)

दोस पुं [दोष] 1.दोष, दूषण, दुर्गुण। पुग्गलदव्वस्स जे इमे दोसा। (स.२८६) 2.पुं [द्वेष] द्वेष, कलह। रायम्हि य दोसम्हि य। (स.२८१) **-आवास** पुं [आवास] दोषों का घर। (भा.७१) दोसावासो य इच्छुफुल्लसमो। **-कम्म** पुं न [कर्मन्] दोषकर्म, राग द्वेष, मोहकर्म। (बो.२९) हंतूण दोसकम्मे। **-विरहिय** वि [विरहित] दोषों से रहित,पूर्वापर दोष से रहित।पुव्वापरदोस-विरिहियं सुद्धं। (निय.८)

दोहग्ग न [दौर्भाग्य] दुष्ट भाग्य, मन्दभाग्य, दुर्भाग्य। (शी.२३)

ध

धण न [धन] सम्पत्ति, धन, वैभव। (पंचा.४७, बो.४५, द्वा.३१) धणधण्णवत्थदाणं।

धणुह पुं न [धनुष्] धनुष, चाप। (बो.२२)

धण्ण न [धान्य] 1. धान, अनाज। (बो.४५, द्वा.३१) 2. वि [धन्य] भाग्यशाली, भाग्यवान्, प्रशंसनीय। ते धण्णा ताण णमो। (भा.१२८)

धम्म पुं न [धर्म] 1.धर्म, शुभाचरण, शुभप्रवृत्ति। आत्मा की निर्मल परिणति का नाम धर्म है। धर्म समता है, जो राग, द्वेष और मोह से रहित है। (प्रव. ६,७) धर्मरूप परिणत आत्मा धर्म है। धम्मपरिणदो आदा धम्मो। (प्रव.८) दर्शनपाहुड में दर्शन धर्म का मूल कहा गया है। (द.२) बोधपाहुड में **धम्मो दयाविसुद्धो** कहा गया है। इसका अभिप्राय यह है कि, प्राणीमात्र के प्रति समभाव, प्राणीमात्र को आत्मवत् समझना, करुणाधर्म है। (बो.२४) मोक्षपाहुड में प्रवचनसार की तरह चारित्र को धर्म कहा गया है, वह धर्म आत्मा का समभाव है और यह समभाव जीव का अभिन्न परिणाम है। (मो.५०) **-उवदेस** पुं [उपदेश] धर्म उपदेश, सिद्धान्तबोध, आत्मज्ञान। (प्रव.४४)**-उवदेसि** वि [उपदेशिक] धर्मोपदेशिक। (चा.भ.१) **-कहा** स्त्री [कथा] धर्मकथा। (श्रु.भ.अं.) **-ज्झाण** न [ध्यान] धर्मध्यान। (निय.१२३, मो.७६) **-णिम्ममत्त** वि [निर्ममत्व] धर्म से निर्ममत्व। (स.३७) **-परिणद** वि [परिणत] धर्म परिणत। (प्रव.८) **-संग** पुं न [सङ्ग] धर्मसम्बन्ध। (स.ज.वृ.१२५) **-संपत्ति** स्त्री [सम्पत्ति] धर्मरूपी सम्पत्ति, धर्मवैभव। **-सील** न [शील] धर्मशील, धार्मिक।(द.९)2.पुं न [धर्म] एक अरूपीपदार्थ, जो जीव एवं

पुद्गल को गति करते हुए में सहायक है। रस, वर्ण, गन्ध, शब्द एवं स्पर्शरहित, समस्त लोक में व्याप्त,अखण्डप्रदेशी, परस्पर व्यवधान रहित, विस्तृत और असंख्यातप्रदेशी है। स्वयं गति क्रिया से युक्त जीव एवं पुद्गलों को गति करने में जो सहकारी होता है, किन्तु स्वयं निष्क्रिय ही है। जिस प्रकार लोक में जल मछलियों के गमन करने में अनुग्रह करता है उसी तरह धर्मद्रव्य जीव और पुद्गल द्रव्य के गमन में अनुग्रह करता है। (पंचा.८४, ८५) **-अत्थिकाय** पुं [अस्तिकाय] धर्मास्तिकाय। (पंचा.८३, प्रव.ज्ञे २६, निय.१८३) **-च्छि** पुं [अस्ति] धर्मास्तिकाय। (स.ज.वृ.२११) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] धर्मद्रव्य। (प्रव.ज्ञे.४१) 3.पुं [धर्म] धर्मनाथ, पंद्रहवें तीर्थङ्कर का नाम। (ती.भ.४)

धम्मिग वि [धार्मिक] धर्मतत्पर, धर्मपरायण धर्मवत्सल। (प्रव.चा.५९) समभावो धम्मिगेसु सव्वेसु।

धर सक [धृ] धारण करना। धरइ (व.प्र.ए.निय.११६) धरहि (वि./आ.म.ए.भा.८०) धरवि (अप.सं.कृ.मो.४४) तिहि तिण्णि धरवि णिच्चं। धरेह (वि./आ.म.ए.भा.१४६, द.२१) धरु (वि./आ.म.ए.निय.१४०) धरिदुं (हे.कृ.पंचा.१६८, निय.१०६, द्वा.८०) धरिदुं जस्स ण सक्कं। (पंचा.१६८)

धर वि [धर] धारण करने वाला। (भा.१४४)

धरा स्त्री [धरा] पृथिवी, भूमि। (निय.२१)

धरिय वि [धरित] धारण किए हुए, पकड़े हुए। (पं.भ.१)

धवल वि [धवल] सफेद, श्वेत, सित। गोखीरसंखधवलं। (बो.३७)

धाउ पुं [धातु] धातु। पृथ्वी,जल, तेज, और वायु ये चार धातु/महाभूत हैं।धाउचउक्कस्स पुणो। (निय.२५)

धादा वि [ध्याता] ध्यान करने वाला। मोहजन्य कलुषता से रहित, पञ्चेन्द्रिय विषयों से विरत, मन को स्थिर कर निज स्वभाव में सम्यक् प्रकार से स्थित व्यक्ति ध्याता कहलाता है। (प्रव.ज्ञे.१०४) जो खविदमोहकलुसो, विसयविरत्तो मणो णिरुंभित्ता। समवट्ठिदो सहावे, सो अप्पाणं हवइ धादा।।

धादु पुं [धातु] देखो धाउ। (पंचा.७८, द्वा.३५)

धार सक [धारय्] धारण करना, रखना। (स.१५३, प्रव.ज्ञे.५८, लिं.१४) धारदि (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.५८) (व.प्र.ए.स.१५२) धारंता (व.कृ.स.१५३) धारंतो (व.कृ.लिं.१५)

धारण न [धारण] ग्रहण, अवलम्बन, प्रयोग। (स.३०६, भा.२६)

धारणा स्त्री [धारणा] धारणा,मति ज्ञान का एक भेद। (आ.भ.९)

धाव सक [धाव्] दौड़ना। उप्पडदि पडदि धावदि। (लिं.१५)

धीर वि [धीर] धीर, धैर्यवान्, सहिष्णु, ज्ञानी। (पंचा.७०, निय.७३, भा.२४, चा.२०) ते धीर-वीरपुरिसा, खमदमखग्गेण विप्फुरंतेण। (भा.१५५)

धुद वि [धुत] त्यक्त, परित्यक्त, त्याज्य। (नि.भ.२) **-किलेस** पुं [क्लेश] दुःख रहित, बाधा रहित। (नि.भ.२)

धुव वि [ध्रुव] निश्चल, स्थिर, नित्य, शाश्वत्, स्थायी। (प्रव.२४, मो.६०,बो.१२)ध्रुवमचलमणोवमं पत्ते।(स.१)**-त्त** वि [त्व]

ध्रुवत्व, नित्यपना। (प्रव.ज्ञे.४)

धूव पुं [धूप] धूप, सुगन्धित पदार्थ, देवपूजा के योग्य सुगन्धित पदार्थ। (नि.भ.अं.,नं.भ.अं.)

धोद वि [धौत] धो देने वाला, नष्ट करने वाला। (प्रव.१)

धोव्व वि [ध्रुव] नित्य, शाश्वत्। (प्रव.८)

प

पइट्ठा स्त्री [प्रतिष्ठा] धारणा, स्थापना, प्रतिष्ठा मान,गरिमा, एक समिति का नाम । (निय.६५)

पइण्ण न [प्रकीर्ण] प्रकीर्णक, आगम ग्रन्थ। (श्रु.भ.अं.)

पईव पुं [प्रदीप] दीपक, दिया। (भा.१२२)

पउम न [पद्म] कमल, अरविन्द। (पंचा.३३) **-रायरयण** पुं न [रागरत्न] पद्मरागमणि। (पंचा.३३) **-प्पह** पुं [प्रभ] पद्मप्रभ, छटवें तीर्थङ्कर का नाम। (ती.भ.३)

पउर वि [प्रचुर] बहुत, अधिक, प्रचुर। (मो.९५)

पएस पुं [प्रदेश] प्रदेश, स्थान। (भा.३६, ४७)

पंच त्रि [पञ्चन्] पांच, संख्या विशेष। **-आचार** पुं [आचार] पंचाचार। दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तप आचार और वीर्याचार।(निय.७३)**-इंदिय/एंदिय** न [इन्द्रिय] पांच इन्द्रियां। स्पर्शन,रस,घ्राण,चक्षु और कर्ण। (बो.४३,२५,निय.७३, भा.२९) **-चेल** न [चेल] पांच वस्त्र, पांच प्रकार के वस्त्र। जे

पंचचेलसत्ता। (मो.७९) कोशा, सूती, ऊनी, सन या जूट से निर्मित तथा चमड़े से बने। **-त्थी** अ [अस्ति] पञ्चास्ति, पंचास्तिकाय। (द.१९) **-पयार** वि [प्रकार] पांच भेद। (भा.१०४) **परमेट्ठी** वि [परमेष्ठिन्] परमेष्ठी, अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु। (पं.भ.७) **-महव्वयजुत्त** वि [महाव्रतयुक्त] पांच महाव्रतों से युक्त। **(सू.२०, बो.४३)** **-महव्वयधारि** वि [महाव्रतधारिन्] पांच महाव्रत को धारण करने वाला, मुनि। (बो.५) **-महव्वयसुद्ध** वि [महाव्रतशुद्ध] पांच महाव्रतों से शुद्ध। (बो.७) **-वय** पुं न [व्रत] पांचव्रत। (चा.२८) **विंसकिरिया** स्त्री [विंशत्क्रिया] पच्चीस क्रियायें। (चा.२८) **-विह** वि [विध] पांच प्रकार। (भा.८१, बो.३०) **-समिदि** स्त्री [समिति] पांच समितियां। (चा.२८) ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण और प्रतिष्ठापन। (चा.३७)

पंचम वि [पञ्चम] पांचवा। **-य** वि [क] पञ्चमक, पांचवा। (चा.३०) **-वद** पुं न [व्रत] पांचवाव्रत, परिग्रहत्यागव्रत। निरपेक्ष भावना पूर्वक मान-सम्मान की इच्छा न रखते हुए समस्त परिग्रहों का त्याग करना परिग्रहत्यागमहाव्रत है। (निय.६०)

पंचाणण पुं [पञ्चानन] सिंह, शेर। (पं.भ.४)

पंचिंदिय/पंचेंदिय वि [पञ्चेन्द्रिय] पांच इन्द्रियों से युक्त जीव, जाति नाम कर्म का एक भेद। **-संवर** पुं [संवर] पंचेन्द्रिय सम्बंधी कर्म निरोध। (चा.२९) **-संवरण** न [संवरण] पञ्चेन्द्रिय निरोध।

(चा.२८) -**संजद** वि [संयत] पंचेन्द्रिय विजयी, पांच इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने वाला। (बो.२५) -**संवुड** वि [संवृत] पांच इन्द्रियों को रोकने वाला। (प्रव.चा.४०)

पंडु पुं [पाण्डु] पाण्डु, पाण्डव। -**सुअ** पुं [सुत] पाण्डुसुत, पाण्डवपुत्र–युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन। (नि.भ.७)

पंथ पुं [पन्थन्] मार्ग, पथ, रास्ता। पंथे मुस्संतं। (स.५८)

पंथिय पुं [पन्थिक] पथिक, राहगीर। (भा.६)

पुंवेद पुं [पुंवेद] पुंलिङ्ग। (सि.भ.६)

पकुव्व सक [प्र+कृ] करना। उप्पादवए पकुव्वंति। (पंचा.१५, ४४)

पक्क वि [पक्व] पका हुआ, परिपक्व। (स.१६८) पक्के फलम्हि पडिए।

पक्ख पुं [पक्ष] 1. तर्कशास्त्र में प्रसिद्ध अनुमान प्रमाण का एक अवयव, नय पक्ष। (स.१४२) **अतिक्कंत** वि [अतिक्रान्त] पक्ष से अतिक्रान्त, पक्ष से दूरवर्ती। (स.१४२) पक्खातिक्कंतो पुण। 2. पंख। 3. पक्ष, पन्द्रह दिन का एक पक्ष होता है। (पंचा.२५)

-**खवण** न [क्षपण] पक्षोपवास, व्रत विशेष। (यो.भ.अं.)

पक्ख सक [प्र+वद्] कहना। (निय.५४)

पक्खीण वि [प्रक्षीण] अत्यन्त क्षीण, सर्वथा नष्ट, अतीन्द्रिय घातियां कर्मों से रहित। पक्खीणघादिकम्मो। (प्रव.१९)

पगद वि [प्रकृत] प्रस्तुत, अधिकृत, उत्तमवस्तु। (प्रव.चा.६१) दिट्ठा पगदं वत्थुं।

पगरण न [प्रकरण] अधिकार, प्रासंगिक, प्रासंगिक कार्य।

(स.१९७) परगणचेट्ठा कस्सवि।

पगासग वि [प्रकाशक] प्रकाश करने वाला, प्रकाशक। (पंचा.५१)

पचोदिद वि [प्रचोदित] प्रेरित,प्रेरणा को प्राप्त।पवयण-भत्तिप्पचोदिदेण मया। (पंचा.१७३)

पच्चक्ख न [प्रत्यक्ष] इन्द्रिय आदि की सहायता के बिना उत्पन्न होने वाला ज्ञान, विशद, निर्मल। (प्रव.२१, ३८, सू.४) मूर्त, अमूर्त, चेतन, अचेतन, स्व एवं पर द्रव्य को देखने वाला ज्ञान प्रत्यक्ष है, अतीन्द्रिय है। मुत्तममुत्तं दव्वं, चेदणमियरं सगं च सव्वं च। पेच्छंतस्स दु णाणं,पच्चक्खमणिंदियं होइ।।(निय.१६७)

पच्चक्खा सक [प्रत्या+ख्या] त्यागना, छोड़ना, निराकरण करना। (स.३४) पच्चक्खाई परे त्ति णादूणं। पच्चक्खाइ (व.प्र.ए.)

पच्चक्खाण न [प्रत्याख्यान] 1.प्रत्याख्यान, त्याग करने की प्रतिज्ञा। (स.३४,निय.१००,भा.५८)2.आगम ग्रन्थ, नवम पूर्व। (श्रु.भ.६)

पच्चय पुं [प्रत्यय] 1. प्रत्यय, कारण, प्रतीति, ज्ञान, बोध, निर्णय (स.११५)पच्चयणोकम्मकम्माणं।(स.११४) 2.व्याकरण प्रसिद्ध प्रकृति में लगने वाला शब्द विशेष।(स.११२) 3.बन्ध का कारण, हेतु,निमित्त। (स.१०९)

पच्चूस पुं [प्रत्यूष] प्रातःकाल, प्रभात। (नि.भ.अं.)

पच्छण्ण वि [प्रच्छन्न] गुप्त, अप्रकट, आच्छादित, ढंका हुआ। (प्रव.५४)

पच्छा अ [पश्चात्] पीछे, अनन्तर। (भा.७३)

पजंपिय वि [प्रजम्पित] कथित। (मो.३८)

पजह सक [प्र+हा] त्याग करना,छोड़ना। (प्रव. ज्ञे.२०) पजहे (वि./आ.प्र.ए.स.२२२) पजहिदूण (सं.कृ.स.२२३)

पज्जअ/पज्जय पुं [पर्यय] पर्यय, क्रम, परिपाटी। (पंचा.५, १६, स.३०८, प्रव.४१) देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च ये जीव की पर्यायें हैं। (पंचा.१६) **-ट्ठिअ** वि [आर्थिक] पर्यायार्थिक, नय विशेष। पर्यायार्थिकनय से वस्तु या द्रव्य अन्य-अन्य रूप होता है। (प्रव.ज्ञे.२२) **-त्त** वि [त्व] पर्यायत्व। (प्रव.८०) **-त्थ** वि [अर्थ] पर्यायार्थिक। (प्रव.ज्ञे.१९) **-मूढ** वि [मूढ] पर्यायमूढ, पर्याय में मुग्ध। **-विजुद** वि [वियुक्त] पर्याय रहित। (पंचा.१२) पज्जयविजुदं दव्वं।

पज्जत्त न [पर्याप्त] कर्म विशेष, नाम कर्म का एक भेद, जिसके उदय से जीव छहों पर्याप्तियों से युक्त होता है। (स.६७)

पज्जत्ति स्त्री [पर्याप्ति] पर्याप्ति, कर्मविशेष। (बो.३३,३६) आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छवास, भाषा और मन, ये छह पर्याप्तियां हैं।

पज्जल अक [प्र+ज्वल्] जलना, दग्ध होना। (भा.१२२)

पज्जाअ/पज्जाय पुं [पर्याय] पर्याय, परिणमन, पदार्थस्वभाव। (पंचा.११)देव की उत्पत्ति एवं मनुष्य का मरण होना, यही पर्याय-परिणमन है। (पंचा.१८) प्रवचनसार में इसी बात को इस तरह कहा गया है---उप्पादो य विणासो, विज्जदि सव्वस्स अत्थजादस्स। पज्जाएण दु केण वि, अत्थो खलु होदि सब्भूदो।

(प्रव.१८)

पज्जालण वि [प्रज्वालन] जलाने वाला, जलाने योग्य। (पं.भ.६)

पज्जुण्ण पुं [प्रद्युम्न] प्रद्युम्न,एक मुनि विशेष। (नि.भ.५)

पढमाणुओग पुं [प्रथमानुयोग] ग्रन्थ विशेष, प्रथमानुयोग। (श्रु.भ.४,श्रु.भ.अं.)

पड पुं [पट] वस्त्र, कपड़ा। (स.९८, १००) जीवो ण करेदि घडं, णेव पडं।

पड अक [पत्] पड़ना, गिरना। जे वि पडंति च तेसिं। (द.१३)

पडि अ [प्रति] 1. निषेध, उपसर्ग विशेष। पडिवज्जदु (प्रव.चा.५२) 2. निकटता, समीपता। पडिसरणं (स.३०६)

पडिअ वि [पतित] गिरा हुआ, च्युत।(भा.४९)पक्के फलम्हि पडिए। (स.१६८)

पडिकमण/पडिक्कमण न [प्रतिक्रमण] प्रमाद से किये हुए पाप का पश्चात्ताप, छह आवश्यकों में एक भेद, जैन मुनि एवं गृहस्थों द्वारा सुबह एवं शाम को किया जाने वाला धार्मिक अनुष्ठान। (निय.९४) जो उन्मार्ग को छोड़कर जिनमार्ग में स्थिर भाव करता है, उसे प्रतिक्रमण होता है। (निय.८६)

पडिक्कम अक [प्रति+क्रम्] पीछे की ओर चलना, प्रतिक्रमण करना, पापों का पश्चात्ताप करना। (स.३८६) णिच्चं य पडिक्कमदि जो।

पडिच्छ सक [प्रति+इष्] ग्रहण करना, मानना, चाहना। (प्रव.६२) भव्वा वा तं पडिच्छंति। पडिच्छंति (व.प्र.ब.) पडिच्छ

(वि./आ.म.ए.प्रव.चा.३) पडिच्छ मं चेदि अणुगहिदो।

पडिच्छग वि [प्रत्येषक] वाञ्छक, चाहनेवाला, इच्छुक। (प्रव.चा.२७) तं पि तवो पडिच्छगो समणो।

पडिणिबद्ध वि [प्रतिनिबद्ध] रोकनेवाला, रुका हुआ। (स.१६२)

पडिदेस पुं [प्रतिदेश] प्रत्येक देश, प्रत्येक क्षेत्र। (भा.३५)

पडिपुण्ण वि [परिपूर्ण] परिपूर्ण, सम्पूर्ण। (प्रव.चा.१४)

पडिबद्ध वि [प्रतिबद्ध] व्याप्त, नियत, बंधा हुआ। (स.२८८)

पडिमट्ठायी स्त्री [प्रतिमास्थायी] प्रतिमा योगों में स्थित। (यो.भ.११)

पडिमा स्त्री [प्रतिमा] मूर्ति, प्रतिमा, प्रतिबिम्ब, आकार। (बो.३, द.३५) दर्शन और ज्ञान से पवित्र चारित्रवाले, निष्परिग्रह, वीतराग मुनियों का अपना तथा दूसरों का चलता-फिरता शरीर, जिनमार्ग में प्रतिमा कहा गया है। (बो.९) बोधपाहुड में प्रतिमा के निम्न भेद किये हैं-जंगमप्रतिमा, स्थावर प्रतिमा, जिनबिम्ब, अर्हन्मुद्रा, जिनमुद्रा। (बो.१०-१९)

पडिवज्ज सक [प्रति+पद्] स्वीकार करना, अङ्गीकार करना, प्राप्त करना। पडिवज्जदि तं किवया। (पंचा.१३७) पडिवज्जदि (व.प्र.ए.) पडिवज्जदु (वि./आ.प्र.ए.प्रव.चा.१,५२)

पडिवण्ण वि [प्रतिपन्न] स्वीकृत, अङ्गीकृत, प्राप्त। (प्रव.ज्ञे.९८) पडिवण्णो होदि उम्मग्गं।

पडिवत्ति स्त्री [प्रतिपत्ति] प्रवृत्ति, प्राप्ति, जानकारी। (प्रव.चा.४७)

पडिसरण न [प्रतिसरण] प्रतिसरण, उल्टा चलना। (स.३०६, स.ज.वृ.३०७)

पडिसिद्ध वि [प्रतिषिद्ध] निषिद्ध, निवारित। (स.२७२)

पडिहार पुं [प्रतिहार] 1. प्रतिहार, पर्दा। (स.३०६) 2. दरवाजा, फाटक।

पाडिहार पुं [प्रातिहार/प्रतिहार्य] 1. दरबान, द्वारपाल। 2. प्रातिहार्य, अष्ट प्रातिहार्य। (बो.३१)

पडुच्च अ [प्रतीत्य] आश्रय करके, अवलम्बन करके, अपेक्षा करके। (पंचा.२६, स.२६५, प्रव.५०) कम्मं पडुच्च कत्ता। (स.३११)

पढ सक [पठ्] पढ़ना,अभ्यास करना।(स.४१५)जो समयपाहुडमिणं पढिदूणं अत्थ तच्चदो णाउं। पढइ (व.प्र.ए.मो.१०६)

पढम वि [प्रथमा] पहला, आद्य। (भा-११४, चा.८) पढमं सम्मतचरणचारित्तं (चा ८)

पढिअ/पढिद वि [पठित] पढ़ा गया,कहा गया,कथित, प्रतिपादित। (पंचा.५७, भा.५२)

पण त्रि [पञ्चन्] पांच, संख्या विशेष। ववगदपणवण्णरसो। (पंचा.२४)

पणट्ठ वि [प्रनष्ट] नष्ट हुआ। (बो.५२, भा.१२८, प्रव. ज्ञे.११)

पणद वि [प्रणत] नमस्कार करता हुआ।(प्रव.चा.३)समणेहि तं पि पणदो।

पणम सक [प्र+नम्] नमन करना, नमस्कार, प्रणाम करना।

पणमामि वड्ढमाणं। (प्रव.१) पणमिय (सं. कृ.पंचा.२, प्रव.चा.१)

पणिवद सक [प्रणि+पत्] नमन करना, वन्दन करना। (प्रव.चा.६३) पणिवदणीया हि समणेहिं। **पणिवदणीया** में अणीय प्रत्यय का प्रयोग हुआ है।

पण्णत्त वि [प्रज्ञप्त] कथित, उपदिष्ट, निरूपित। (पंचा.१२१, स.२४८, प्रव.८) कालो णियमेण पण्णत्तो। (पंचा.२३)

पण्णय पुं [पन्नग] सर्प, सांप। (स.३१७) ण पण्णया णिव्विसा हुंति।

पण्णसवण न [प्रज्ञश्रवण] प्रज्ञाश्रवण, एक ऋद्धि विशेष। (यो.भ.२०)

पण्हवायरण न [प्रश्नव्याकरण] प्रश्नव्याकरण, ग्यारहवाँ अङ्ग आगम। (श्रु.भ.३)

पण्णा स्त्री [प्रज्ञा] बुद्धि, ज्ञान, मति। (स.२९४) पण्णाए सो घिप्पए अप्पा। पण्णाए (तृ.ए.स.२९७) पण्णाइ (तृ.ए.स.२९६)

पतंग पुं [पतङ्ग] पतङ्ग, चार इन्द्रिय जीव की संज्ञा। (पंचा.११६)

पत्त वि [प्राप्त] 1. प्राप्त हुआ। (स.१, ६४) 2. न [पात्र] पात्र, भाजन। (सू.२१) 3. न [पत्र] पत्ती, पत्ता। (भा.१०३)

पत्त सक [प्रति+इ] प्रतीति करना, विश्वास करना। (स.२७५) पत्तेदि (व.प्र.ए.)

पत्तेग न [प्रति+एक] प्रत्येक, हर एक। (प्रव.३)

पत्तेगं/पत्तेयं अ [प्रत्येकम्] एक-एक करके, एक बार में एक,

अलग-अलग। समगं पत्तेगमेव पत्तेयं। (प्रव.३)

पत्थर पुं [प्रस्तर] पाषाण, पत्थर। (भा.९५)

पद पुं न [पद] 1. शब्द समूह, वाक्य। तं होदि एक्कमेव पदं। (स.२०४) 2. स्थान, आस्पद, उपाधि।

पदत्थ पुं [पदार्थ] वस्तु, तत्त्व, पदार्थ। (प्रव.१४) सुविदिदपयत्थसुत्तो। पदार्थ के नौ भेद हैं-जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बन्ध और मोक्ष। (पंचा.१०८)

पदाणुसारी स्त्री [पदानुसारी] पदानुसारी, एक ऋद्धि विशेष। (यो.भ.१८)

पदुस्स सक [प्र+द्विष्] द्वेष करना, बैर करना। (प्रव.ज्ञे.८२) पदुस्सेदि (व.प्र.ए.)

पदेस पुं [प्रदेश] 1. जिसका विभाग न हो सके ऐसा अवयव। (स.२९०) 2. परिमाण विशेष, निरंश। (प्रव.ज्ञे.४३) 3. आधे का आधा। खंधपदेसा य होंति परमाणू। (पंचा.७४) **-त्त** वि [त्व] प्रदेशत्व, प्रदेशपना। (प्रव.ज्ञे.१४) **-बंध** पुं [बन्ध] प्रदेश बन्ध, बन्ध का एक भेद। (पंचा.७३) **-मेत्त** न [मात्र] प्रदेशमात्र। पदेसमेत्तस्स दव्वजादस्स। (प्रव.ज्ञे.४६)

पदोस पुं [प्रद्वेष] प्रद्वेष, द्वेषभाव, प्रकृष्ट द्वेष। (प्रव.चा.६५) पदोसदो (पं.ए.)

पद्धंस पुं [प्रध्वन्स] ध्वंस, नाश। (प्रव.ज्ञे.५०)

पप्प सक [प्र+आप्] प्राप्त करना। (प्रव.चा.७५) पप्पोदि सुहमणंतं। (पंचा.२९) पप्पा (सं.कृ.प्रव.६५, ८३)

पप्प वि [प्राप्त] मिला हुआ, पाया हुआ,प्राप्त। (शी.२५)

पप्फोडिय वि [प्रस्फोटित] गिराया हुआ, उड़ाया हुआ, निर्झाटित। (शी.३९) प्पफोडिय कम्मरया।

पबल वि [प्रबल] बलिष्ट, प्रचण्ड, शक्तिशाली। (भा.१५५)

पब्भट्ठ वि [प्रभ्रष्ट] परिभ्रष्ट, अत्यन्तच्युत। (प्रव.चा.६७)

पब्भस्स अक [प्र+भ्रश्] अलग होना, छूटना,टूटना। (पंचा.१५५)

पभास सक [प्र+भास्] प्रकाशित करना, चमकना। पभासदि (पंचा.३३)

पभुत्त सक [प्र+भुंज्] भोग करना, ग्रहण करना। पभुत्तूण (सं.कृ.भा.१०२)

पभेद पुं न [प्रभेद] प्रकार, विधान, भेद। (प्रव.ज्ञे.६०)

पमत्त वि [पमत्त] प्रमादी, प्रमादयुक्त। (स.६, प्रव.चा.९)

पमदा स्त्री [प्रमदा] नारी, महिला। पमदापमादबहुलो त्ति णिद्दिट्ठो। (प्रव.चा.ज.वृ.२४)

पमाण न [प्रमाण] 1.यथार्थज्ञान, जिससे वस्तुतत्त्व की सत्य जानकारी हो।(निय.३१,स.५,भा.३३) जदि दाएज्ज पमाणं। 2. सीमा, मर्यादा, प्रमाण। णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं। (प्रव.२३)

पमाद पुं [प्रमाद] आलस्य, प्रमाद, आस्रवों के कारणों में एक भेद। (पंचा.१३९)

पमुत्त/पमोत्त सक [प्र+मुञ्च्] छोड़ना, त्याग करना। (भा.९४) संजमघादं पमुत्तूण। अब्बंभं दसविहं पमोत्तूण। (भा.९८) पमुत्तूण/पमोत्तूण (सं.कृ.)

पय पुं न [पद] स्थान, अधिकार, पदवी। (स.२०५)
पयट्ट वि [प्रवृत्त] संयुक्त, लगा हुआ, तल्लीन, तत्पर। (चा.१६) पयट्ट सुतवे संजमे भावे।
पयड सक [प्र+कटय्] प्रकट करना, व्यक्त करना। (भा.७३) पयडदि (व.प्र.ए.) पयडमि (व.उ.ए.भा.११९) पयडहि (वि./आ.म.ए.भा.९८)
पयड वि [प्रकट] व्यक्त, खुला हुआ, स्पष्ट। (शी.३९) - **त्थ** वि [अर्थ] प्रकटार्थ, स्पष्ट प्रयोजन। (भा.१६)
पयडि स्त्री [प्रकृति] 1. स्वभाव, शील। ण मुयइ पयडि अभव्वो। (भा.१३७) 2. कर्मप्रकृत्ति। (पंचा.५५, स.३१२,३१३) देवा इदि णामसंजुदा पयडी। 3. पुद्गल प्रकृति। पयडीहिं पुग्गलमइहिं। (स.६६) 4. बन्ध का एक भेद, कर्मभेद। (निय.९८, पंचा.७३) **यट्ठ** वि [अर्थ] प्रकृति के निमित्त। (स.३१३) -**सहावट्ठिअ** वि [स्वभावस्थित] प्रकृति के स्वभाव में ठहरा हुआ। (स.३१६) पयडीए (च./ष.ए.स.३१६) पयडीओ (प्र.ब.स.६५)
पयत वि [प्रयत] प्रयत्नशील, सतत् प्रयत्न करने वाला। (निय.६४) -**परिणाम** पुं [परिणाम] प्रयत्न, प्रमाद रहित (निय.६४)
पयत्त पुं [प्रयत्न] चेष्टा, उद्यम, उद्योग। (स.१७, भा.८७, मो.९, सू.१६)
पयत्थ पुं न [पदार्थ] अर्थ, पदार्थ, वस्तु। (निय.७४,भा.९७,द.१५) णव य पयत्थाइं (भा.९७) पयत्थाइं (द्वि. ब.) -**देसय** वि [देशक]

पदार्थो का उपदेश करने वाले। (नियः७४) **-भंग** पुं [भङ्ग] पदार्थ भेद। तेसिं पयत्थभंगा। (पंचा.१०५)

पयद वि [प्रयत] प्रयत्नशील, उद्यमी। पयदो मूलगुणेसु। (प्रव.चा.१४) पयदम्हि समारद्धे। (प्रव.चा.११)

पयलिय वि [प्रगलित] नष्ट हुआ, क्षय हुआ, गला हुआ। (भा.७८) पयलियमाणकसाओ।

पयास सक [प्र+काशय्] चमकना, प्रकाशित करना। (भा.१४९) लोयालोयं पयासेदि। पयासेदि (व.प्र.ए.)

पयासत्त वि [प्रकाशत्व] प्रकाशमान, प्रकाशत्व, प्रकाशशील। (ती.भ.८)

पर वि [पर] 1. भिन्न, अन्य, इतर, दूसरा।(पंचा.१३९, स.९९, प्रव.८७, चा.४३) 2.उत्कृष्ट, उत्तम, प्रधान। (प्रव.ज्ञे.१०२) 3. तत्पर, उद्यत। (भा.१०५) **-किय** वि [कृत] परकृत, दूसरे के द्वारा किया गया। (बो.५०) **-चरिय** न [चरित] पराचरण, अन्यरूप आचरण। (पंचा.१५६) **-णिंदा** स्त्री [निंदा] दूसरे की निंदा। (निय.६२, लिं.१४) **-तति** स्त्री [तति] अन्य समूह। (निय.१५७) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] अन्य द्रव्य। (पंचा.१५९, स.२०, प्रव.५७,निय.१६२)**-दो** वि [तस्] अन्य से। (निय.१८३) **-पयास/प्पयास** पुं [प्रकाश] पर प्रकाश, परदीप्ति। (निय.१६१) **-प्पवादि** पुं [प्रवादिन्] अन्य दार्शनिक। (स.३९) **-भाव** पुं [भाव] परभाव,अन्य परिणाम,अन्य स्वभाव। (निय.९७, स.३५) **-भिंतर** वि [अभ्यन्तर] दूसरे के भीतर, भीतरी भाग। (मो.४)

-**लोअ** पुं [लोक] परलोक। (मो.२३) परलोयसुहंकरो। (सू.१४) -**वड्ढि** स्त्री [वृद्धि] परवृद्धि, दूसरे की वृद्धि। (द.१०) -**विग्गह** पुं न [विग्रह] परशरीर। (मो.९) —**विभवजुद** वि [विभवयुक्त] अन्य वैभव से युक्त, उत्कृष्ट वैभव से युक्त। (निय.७) -**वस** वि [वश] दूसरे के अधीन। (भा.३८) -**समय** पुं [समय] अन्य समय, अन्यमत, मिथ्याविचार। (स.२, प्रव.ज्ञे.६) -**समयिग** पुं [सामयिक] पर समय में अनुरक्त। (प्रव.ज्ञे.२) -**सहाव** पुं [स्वभाव] पर स्वभाव, अन्यरूपभाव, अन्य परिणाम। (निय.५०)

परंपर/परंपरय पुं न [परम्पर] परम्परा, अविच्छिन्न धारा। (भा.१२७, द.३३)

परंपरा स्त्री[परम्परा]अविच्छिन्न धारा।(भा.१३५)परंपराभाव-रहिएण। (भा.३४)

परंमुह वि [पराङ्मुख] विमुख, विपरीत। (भा.११७)

परम वि [परम] उत्कृष्ट, सर्वोत्तम। (प्रव.६२, निय.४, सू.१०) -**गुणसहिअ** वि [गुणसहित] परमगुणों से सहित। (निय.७१) -**जिण** पुं [जिन] परम जिन, परमात्मा। (मो.६) -**जिणिंद** पुं [जिनेन्द्र]परमजिनेन्द्र।(निय.१०९)-**जिणवरिंद** पुं [जिनवरेन्द्र] जिनश्रेष्ठ, प्रधानगणधर। (सू.१०)-**जोइ** पुं [योगिन्] परमयोगी, वीतरागी। (मो.२) -**ट्ठ** वि [अर्थ] परमार्थ, आत्मस्वरूप, आत्मज्ञानस्वरूप। (स.१५१, १५४, निय.३२) परमट्ठवियाणया विंति(स.ज.वृ.१२५)-**ट्ठबाहिर** वि [अर्थबाह्य] परमार्थ से बाह्य , परमार्थ से रहित।(स.१५३)**णाणग** वि [ज्ञायक] परम ज्ञायक,

श्रेष्ठ ज्ञाता। (नि.भ.४) -**णिव्वाण** न [निर्वाण] परमनिर्वाण, परमुक्ति,परमशक्ति।(निय.४)-**त्थवि** [अर्थ] परमार्थ। (निय.५८,सू.५७,स.८,भा.२,बो.२२)-**प्य** पुं [पद] परमपद, मोक्षपद।(मो.२)**प्पा** पुं [आत्मन्] परमात्मा। (निय.७, भा.१५०) -**प्पअ/प्पय** वि [आत्मक] परमात्मा। (मो.२४,४८) -**प्पाण** पुं[आत्मन्] परमात्मा।(मो.२)-**भत्ति** स्त्री [भक्ति] उत्कृष्ट सेवा,उत्तम विनय।(भा.१५२,निय.१३५)-**भाग** पुं [भाग] सर्वोत्तम स्थान,दूसरा स्थान।(मो.९)-**भाव** पुं [भाव] उत्कृष्ट भाव,उत्तम भाव।(स.१२,निय.१४६)-**सद्धा** स्त्री [श्रद्धा] परमश्रद्धा,उत्तमश्रद्धान।(चा.४२)-**समाहि** पुं स्त्री [समाधि] उत्तम समाधि,श्रेष्ठ समताभाव। (निय.१२२,१२३)

परमाणु पुं [परमाणु] 1. सर्वसूक्ष्म, अणु, समस्त स्कन्धों का अन्तिम भेद। जो नित्य, शब्द रहित, एक अविभागी, मूर्त स्कन्ध से उत्पन्न होता है। जो पृथिवी, जल, वायु, तेज, और वायु का समान कारण है, परिणमनशील है। (पंचा.७७,७८) सव्वेसिं खधाणं, जो अंतो तं वियाण परमाणू। परमाणु एक प्रदेशी है अपदेसो परमाणू। (प्रव.ज्ञे.४५) यद्यपि परमाणु एक प्रदेशी है, फिर भी वह स्निग्ध और रूक्ष गुणों के कारण एक दूसरे परमाणुओं के साथ मिलकर स्कन्ध बन जाता है। (प्रव.ज्ञे.७१) 2.अल्प, लघु, अणु। (स.३८) -**पमाण** पुं [प्रमाण] परमाणु प्रमाण। (प्रव.चा.३९)**मित्त** न [मात्र] परमाणु मात्र, थोड़ा भी। (स.३८) अण्णं परमाणुमित्तं पि। -**मित्तय** वि[मात्रक]परमाणुमात्र,लेशमात्र,कुछ

भी।(स.२०१) परमाणुमित्तयं पि हु।-**संगसंघाद** वि [सङ्गसङ्घात] परमाणुओं का समूह। (पंचा.७९)

परमेट्ठि पुं [परमेष्ठिन्] परमेष्ठी, जो परमपद में स्थित हैं। अर्हन्त, सिद्ध आचार्य, उपाध्याय और साधु। (चा.१, भा.१५०, मो.६ प्रव.४ निय.७१-७५)

पराइ पुं [परकीय] पर, अन्य।

परायत्त वि [परायत्त] पराधीन, दूसरे के अधीन, परतन्त्र। (पंचा.२५)

परावेक्ख वि [परापेक्ष] दूसरे की अपेक्षा रखने वाला। (प्रव.चा.६)

परिकम्म पुं न [परिकर्म] क्रिया, गुण विशेष (प्रव.चा.२८)

परिकहिद/परिकहिय वि [परिकथित] प्ररूपित, आख्यात, विशेष व्याख्यान। (स.९७) जिणवरेहिं परिकहियं । (स.१६१)

परिकित्तिद वि [परिकीर्त्तित] वर्णित। (द्वा.४७)

परिगह/परिग्गह पुं [परिग्रह] आसक्ति, ममत्व, मूर्छा, संग्रह। अप्पाणमप्पणो परिगहं। (स.२०७) मज्झं परिग्गहो जइ। (स.२०८)

परिचत्त वि [परित्यक्त] परित्यक्त, छोड़ा हुआ, अलग किया गया। (निय.१४६, बो.२४)

परिचाग पुं [परित्याग] छोड़ना।(निय.९३)

परिचिद वि [परिचित] ज्ञात, जाना हुआ, परखा हुआ। (स.४) सुदपरिचिदाणुभूदा।

परिच्चय सक [परि+त्यज्] परित्याग करना, छोड़ना,अलग

करना। (स.१८४) कणयसहावं ण तं परिच्चयइ।

परिट्ठिअ/परिट्ठिय वि [परिस्थित] सम्पूर्ण रूप से स्थित। (भा.९५, १६३)

परिणइ स्त्री [परिणति] परिणाम, स्थिति, स्वभाव। (प्रव.ज्ञे.७७)

परिणद/परिणय वि [परिणत] परिणमन करने वाला, परिणमन करता हुआ, एक रूप से दूसरे रूप को प्राप्त होता हुआ। (पंचा.८४, स.२२३, ३७४, प्रव.११) दोसेण व परिणदस्स जीवस्स। (प्रव.८४)

परिणम/परिणाम सक [परि+नम्] परिणमन करना, प्राप्त होना। (प्रव.ज्ञे. २६, स.११६) परिणममाणा (व.कृ.) ण सयं परिणमइ रायमाईहिं। परिणमदे (व.प्र.ए.स.९१) परिणमंतो (व.कृ.स.२८२) परिणमंति (व.प्र.ब.स.८०) णवि परिणमदि (स.७७) परिणामयादि (स.१२३) परिणामए (स.१०२)

परिणम न [परिणम] परिणाम। तं सोक्खं परिणमं च सो चेव। (प्रव.६०)

परिणमिद वि [परिणमित] परिणमन कराये जाते हुए। (प्रव.ज्ञे.७७)

परिणाम पुं [परिणाम] 1. स्वभाव। (पंचा.१२८, स.१०१, १३८) कम्मस्स य परिणामो। (स.१४०) **-गुण** पुं **न** [गुण] परिणामस्वभाव। (पंचा.७८) **-भव** वि [भव] परिणाम से उत्पन्न। (पंचा.१००) 2.परिणमन। (प्रव.७, १०, ३६) णत्थि विणा परिणामं। **-संबद्ध** वि [सम्बद्ध] परिणमन से बंधे हुए। (प्रव.३६)

परिणिव्वाणभत्ति स्त्री [परिनिर्वाणभक्ति] परिनिर्वाणभक्ति, मुक्ति भक्ति। (नि.भ.अं.)

परिपड अक [परि+पत्] गिरना, झड़ना। (द्वा.३१)

परिफुड अक [परि+स्फुट्] चलना। (स.ज.वृ.१७०)

परिभम सक [परि+भ्रम्] घूमना, चक्कर काटना, पर्यटन करना, भटकना। (द्वा.२४)

परिभाव सक [परि+भावय्] पर्यालोचन करना, उन्नतकरना, विचार करना। परिभाविऊण (सं.कृ.मो.९६)

परिमंडिअ वि [परिमंडित] सुशोभित। (भा.१०८)

परिमाण न [परिमाण] नाप, माप, प्रमाण। (भा.३६)

परियंत पुं [पर्यन्त] अन्त, सीमा, प्रान्त। (प्रव.ज्ञे. ४०)

परियट्टण न [परिवर्तन] आवर्त, आवृत्ति, परिणमन। (पंचा.६,२३) परियट्टणसंभूदो।

परियत्थण वि [प्रार्थित] प्रार्थना करने वाला। (सि.भ.११)

परियम्म पुं न [परिकर्म] संस्कार, सहायक साधन, दृष्टिवाद आगम का एक भेद। (मो.६१,श्रु.भ.४)

परियरिअ वि [परिकरित] सहित, युक्त। (भा.१२३)

परिवज्ज सक [परिवर्जय्] परिहार करना, परित्याग करना, छोड़ना। (प्रव.ज्ञे. १०८, भा.५७) परिवज्जामि (व.उ.ए.भा.५७,निय.९९)

परिवट्टण न [परिवर्तन] आवर्तन, आवृत्ति। (निय.३३)

परिवार पुं [परिवार] कुटुम्ब, घर के लोग। (द.१०)

परिस न [स्पर्श] स्पर्श, छूना। (चा.३६)

परिसह/परीसह पुं [परिषह] उपसर्ग, बाधा, व्यवधान। (भा.९४) परिसहेहिंतो (पं.ब.भा.९५)

परिहर सक [परि+हृ] त्याग करना, छोड़ना। परिहरंति (व.प्र.ब.) परिहरदि (व.प्र.ए.मो.३६) परिहरत्तु (सं.कृ.निय.१२१) परिहर/परिहरि (वि./आ.म.ए.भा.१३२,चा.१६)

परिहार पुं [परिहार] त्याग, विरक्त। (निय.६६, चा.२४, मो.४२) **-विसुद्धि** वि [विशुद्धि] परिहारविशुद्धि, चारित्र का एक भेद (चा.भ.३)

परिहीण [परिहीन] कम, हीन, रहित, निम्न। (निय.१४९, शी.१८) सव्वे वि परिहीणा। (शी.१८)

परीक्ख सक [परि+ईक्ष्] परीक्षा करना। परीक्खऊण (सं.कृ.निय.१५५)

परूव सक [प्र+रूपय्] निरूपण करना, कथन करना, कहना। (पंचा.१२, स.३९) परूवंति (व.प्र.ब.पंचा.१२१, १५७) परूविंति (व.प्र.ब. पंचा.१२, स.३९) परूवेंति (व.प्र.ब.निय.२४, प्रव.३९)

परूवण न [प्ररूपण] निरूपण, कथन। (निय.४)

परूविद वि [प्ररूपित] प्रतिपादित, कथित, निरूपित। (पंचा.५१,प्रव.ज्ञे.९६)

परोक्ख न [परोक्ष] 1. अप्रत्यक्ष, इन्द्रियादि साधनों के द्वारा होने वाले ज्ञान को परोक्ष कहा जाता है। (निय.१६८) **-भूद** वि [भूत]

परोक्षभूत, जो जीव इन्द्रियगोचर पदार्थ को ईहा, अवाय, धारणादि पूर्वक जानते हैं, वे पदार्थ उनके लिए परोक्षभूत हैं। (प्रव.४०) तेसिं परोक्खभूदं। 2. अतीत, सामने न होना। **-दूसण** न [दूषण] परोक्षदूषण। (लिं.१४)

परोध पुं [परोध] परोपरोधकरण, अचौर्य व्रत की भावना। (चा.३४, निय.६५)

परोवेक्खा स्त्री [परापेक्षा] दूसरे की अपेक्षा, दूसरे की परवाह, पराधीन। (मो.९१)

पलपिह वि [प्रलयित] अतीतपर्याय, युगान्त लोप को प्राप्त। (प्रव.३९)

पलविद वि [प्रलवित] प्रलापित, कथित, प्रतिपादित। (द्वा.९०)

पलग्ग पुं न [दे] फाटक, दरवाजा, द्वार।

पलियंक न [पल्यङ्क] पल्याङ्कासन। (सि.भ.५)

पवक्ख सक [प्र+वच्] बोलना, कहना। (निय.७६) पडिक्कमणादी पवक्खामि। (निय.८२) पवक्खामि (भवि.उ.ए.)

पवट्ट अक [प्र+वृत्] प्रवृत्ति करना, प्रवाहित होना। (मो.६६,द.७) ववहारेण विदुसा पवट्टंति। (स.१५६)

पवड्ढ अक [प्र+वृध्] बढ़ना, वृद्धि को प्राप्त होना। (पंचा.११३) पवड्ढंता (व.कृ.)

पवण पुं [पवन] हवा, वायु। (भा.२१) **-पह** [पथिन्] वायुमार्ग, आकाशमार्ग। (भा.१५९) पुण्णिमइंदुव्व पवणपहे। **-सहिद** वि [सहित] हवा सहित। (शी.३४)

पवयण न [प्रवचन] जिनसिद्धान्त, जिनागम। (पंचा. १६६, नियं.१८४, भा.९१) जिणभत्ती पवयणे जीवो। (भा.१४४) **-अभिजुत्त** वि [अभियुक्त] प्रवचन में प्रवीण,परमागम में कुशल। (प्रव.चा.४६) **-भत्ति** स्त्री [भक्ति] प्रवचनभक्ति, परमागम की विनय, सोलह कारण भावनाओं में एक भेद। (पंचा.१७३) **-सार** पुं न [सार] प्रवचनसार,परमागमसार,सिद्धान्त रहस्य, द्वादशाङ्ग वाणी का रहस्य। (पंचा.१०३,प्रव.चा.७५) जो पुरुष गृहस्थ या मुनिचर्या से युक्त होता हुआ सर्वज्ञ के इस शासन को समझता है, वह अल्पकाल में प्रवचनसार को/परमागम के रहस्य को प्राप्त हो जाता है। (प्रव.७५)

पवर वि [प्रवर] श्रेष्ठ, उत्तम। (भा.८२) **-वर** वि [वर] श्रेष्ठतम। (श्रु.भ.४)

पवाद पुं [प्रवाद] मत,अभिव्यक्ति,परम्परा। (श्रु.भ.५)

पविट्ठ वि [प्रविष्ट] घुसा हुआ, प्रवेशित, समाहित। (प्रव.२९)

पविभत्त वि [प्रविभक्त] अत्यन्त भिन्न, पृथक्-पृथक्, विभाग युक्त। (प्रव.ज्ञे.१४)

पविस सक [प्र+विश्] प्रवेश करना, घुसना। (पंचा.७, प्रव.ज्ञे. ८६) पविसदि (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.९५)पविसंति (व.प्र.ब.प्रव.ज्ञे.८६) पविसंता (व.कृ.पंचा.७)

पविहत्त वि [प्रविभक्त] भेद युक्त , विभाजित । (पंचा.८०) पविहत्ता कालखंधाणं।

पवेस सक [प्र+वेशय्] प्रवेश कराना,घुसाना। (स.१४५) कह तं

होदि सुसीलं जं संसारं पवेसेदि।

पव्वइद वि [प्रव्रजित] दीक्षित। (प्रव.चा.६७)

पव्वज्ज सक [प्र+ब्रज्] दीक्षा लेना, संन्यास लेना। (चा.१६) पव्वज्जा (वि./आ.म.ए.)

पव्वज्जा स्त्री [प्रव्रज्या]दीक्षा लेना,संन्यास लेना। (सू.२४,स.४०४) तासिं कह होइ पव्वज्जा। **-दायग** वि [दायक] दीक्षऽ देने वाला, दीक्षित करने वाला, दीक्षा गुरु। (प्रव.चा.१०) गुरु त्ति पव्वज्जदायगो होदि। **-हीण** वि [हीन] प्रव्रज्या से रहित, दीक्षा से हीन। (लिं.१८) पव्वज्जहीणगहिणं। सभी परिग्रहों को छोड़ना प्रव्रज्या है। पव्वज्जा सव्वसंगपरिचत्ता। (बो.२४)

पव्वद/पव्वय पुं न [पर्वत] गिरि, पहाड़, पर्वत। (निय.२२, भा.२६)

पव्वया स्त्री [प्रव्रज्या] दीक्षा। इत्थीसु ण पव्वया भणिया। (सू.२५)

पसंग पुं न [प्रसङ्ग] संसर्ग, सम्बन्ध, सन्दर्भ, प्रकरण। (प्रव.८५,भा.२६) विसएसु य प्पसंगो। (प्रव.८५)

पसंत वि [प्रशान्त] प्रकृष्ट शान्त, समता युक्त, मोह-राग-द्वेष रहित। (प्रव.चा.७२)

पसंसा स्त्री [प्रशंसा] प्रशंसा, स्तुति, प्रशस्ति, गुणगान। (प्रव.चा.४१, बो.४६)समसुहदुक्खो पसंसणिंदसमो। (प्रव.चा.४१) पसंसाए (स.ए.मो.७२)

पसंसणीअ वि [प्रशंसनीय] प्रशंसा योग्य, स्तुतियोग्य। (भा.१०८)

पसज/पसज्ज अक [प्र+सज्] ठहरना, स्थित रहना, प्राप्त होना,

रुकना। (पंचा.४८, स ८५,११७) पसजदि अलोगहाणी। (पंचा.९४)

पसत्थ वि [प्रशस्त] शुभरूप, श्रेष्ठ,उत्तम। (पंचा.१३५, प्रव.चा.६०) **-भूद** वि [भूत] शुभ रूप वाला। (प्रव.चा.५४) एसा पसत्थभूदा। (प्रव.चा.५४) **-राग** पुं [राग] प्रशस्तराग, शुभराग। (पंचा.१३६) अरहन्त, सिद्ध और साधुओं में भक्ति होना, शुभराग रूप धर्म में प्रवृत्ति होना तथा गुरुओं के अनुकूल चलना प्रशस्तराग है। (पंचा.१३६)

पसमिय वि [प्रशमित] शमन करने वाला, नष्ट करने वाला। (पंचा.१०४) पसमियरागद्दोसो। (पंचा१०४)

पसर पुं [प्रसर] प्रवर्तन, विस्तार, फैलाव, आगे जाना, प्रगमन। (पंचा.८८) हवदि गदी सप्पसरो।

पसाध सक [प्र+साध्] 1.अलङ्कृत करना,उज्ज्वल करना, सुशोभित करना। (प्रव.चा.२१) कधमप्पाणं पसाधयदि। (प्रव.चा.२१) 2. वश में करना, सिद्ध करना। (प्रव.चा.२१)

पसाधग वि [प्रसाधक] साधक, सिद्ध करने वाला, पवित्र करने वाला। (पंचा.४९)वयणं एगत्तप्पसाधगं होदि।

पसारण न [प्रसारण] फैलाव, विस्तार। (निय.६८)

पसु पुं [पशु] पशु, जानवर। (बो.५६)

पस्स सक [दृश्] देखना, अवलोकन करना, दृष्टिगोचर होना। (पंचा.१२२, स.१५, प्रव.२९, निय.१०९ चा.१८) पस्सइ/पस्सदि (व.प्र.ए.स.३६२,` पंचा.११२) पस्सिदूण

(सं.कृ.स.५८) पस्सिदुं (हे.कृ.स.५९) पस्संतो (व.कृ.निय.१७ भा.१३०)

पहणायक वि [पथनायक] पथदर्शक, पथनायक, मार्ग दिखलाने वाले। (यो.भ.४)

पहदेसिय वि [पथदेशित] मार्गोपदेशक,पथप्रदर्शक। (पं.भ.४)

पहाण वि [प्रधान] मुख्य, प्रमुख, श्रेष्ठ, उत्तम। (प्रव.५,६) दंसणणाणप्पहाणादो। (प्रव.६)

पहावणा स्त्री [प्रभावना] प्रभावना, सम्यग्दर्शन का एक अङ्ग, सोलहकारण भावनाओं का एक भेद। (चा.७) जो विद्या रूपी रथ पर आरूढ होता हुआ, मनरुपी रथ के मार्ग में भ्रमण करता है वह जिन ज्ञान की प्रभावना करने वाला सम्यग्दृष्टि है। (स.२३६)

पहीण वि [प्रहीन] नीच, हीन। (भा.१३) पहीणदेवो दिवे जाओ।

पहु पुं[प्रभु] समर्थता युक्त, सम्पन्नता युक्त। (पंचा.२७)

पहुदि वि [प्रभृति] इत्यादि, बगैरह। (निय. ११४, १२४) अपमत्तपहुदिठाणं। (निय.१५८)

पा सक [पा] पीना, पान करना। (चा.४१, भा.९३) पाऊण भवियभावेण। (भा.१२४) पाऊण (सं.कृ.)

पाअ/पाय पुं न [पाप] 1.पाप अशुभ कर्म, बुराकर्म। (स.२२९, लिं.६)जो चत्तारि वि पाए। (स.२२९) पाए (द्वि.ब.) वच्चदि णारयं पाओ। (लिं.९) 2.पुं [पाद] चरण, पैर, पाँव। पाए पाडंति दंसणधराणं। (द.१२)

पाउगिअ वि [प्रायोगिक] प्रायोगिक, पर के निमित्त से उत्पन्न हुआ

(स.४०६) पाउगिओ विस्ससो वावि।

पाओग्ग वि [प्रायोग्य] योग्य, उचित, लायक, उपयुक्त, सक्षम। (प्रव.ज्ञे.७७) पाओग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो। (निय.२४)

पाठ पुं [पाठ] अध्ययन, वाचन, पठन, आवृत्ति। (स.२७४) पाठो ण करेदि गुणं।

पाड सक [पातय्] गिराना, डालना, फेंकना। (द.१२) पाए पाडंति दंसणधराणं।

पाडिहेर न [प्रातिहार्य]देवताकृत प्रतिहारकर्म,देवकृत पूजा विशेष, अष्ट प्रातिहार्य।

पाडुब्भव अक [प्रादुर्+भू] उत्पन्न होना। (प्रव.ज्ञे.११)

पाडुब्भाव पुं [प्रादुर्भाव] उत्पाद, उत्पत्ति। (प्रव.ज्ञे.१९)

पाण पुं न [प्राण], जीवन के आधारभूत तत्त्व,जीवन शक्ति। (पंचा.३०, प्रव.ज्ञे.५८, बो.३०) जीवों के प्राणों की संख्या क्रमशः- एकेन्द्रिय के चार (स्पर्शन, काय बल, आयु और श्वासोच्छवास), द्वीन्द्रिय के छह (स्पर्शन, रसना, काय बल, वचनबल,आयु और श्वासोच्छ्वास) त्रीन्द्रिय के सात, (स्पर्शन, रसना,घ्राण,वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास) चुतरिन्द्रिय के आठ(स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, वचनबल, कायबल, आयु, और श्वासोच्छवास), पञ्चेन्द्रिय असंज्ञी के नौ (स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास) तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय के दश (स्पर्शन, रसना,घ्राण,चक्षु,कर्ण,मनबल,वचनबल,कायबल,आयु,और

श्वासोच्छ्वास) (बो.३५)जीव प्राणों से युक्त होकर मोहादि परिणामों से कर्मों के फल भोगता है तथा अन्य नवीन कर्मों को बांधता है। (प्रव.ज्ञे.५६) **-णिबद्ध** वि [निबद्ध] प्राणों से युक्त, प्राणों से संबद्ध। (प्रव.ज्ञे.५६) **-बाध** पुं [बाध] प्राणों की बाधा, प्राणों का घात। (प्रव.ज्ञे.५६) पाणाबाधं जीवो।

पाण न [पान] पान, पीने की क्रिया। (स.२१३)

पाणि पुं [प्राणिन्] 1. प्राणी, जीव, आत्मा, चेतन। (भा.१३४) **-त्त** वि [त्व] प्राणों से युक्त, प्राणों वाला। (पंचा.३९) **-वह** पुं स्त्री [वध] जीव हत्या, जीवघात। (भा.१३४) 2. पुं [पाणि] हाथ, कर, भुजा। **-पत्त/प्पत्त** न [पात्र] हाथरूपी पात्र, कर-पात्र। (सू.७) पाणिपत्तं सचेलस्स। (सू.७)

पापुण्ण सक [प्र+आप्] प्राप्त होना। (पंचा.११९) पापुण्णंति य अण्णं। (पंचा.११९)

पायछित्त/पायच्छित्त पुं न [प्रायश्चित्त] पाप नाशक कर्म, परिशोध, पापनिष्कृति, दण्ड,तप का एक भेद। (निय.११३) व्रत, समिति, शील और संजम रूप परिणाम तथा इन्द्रिय निग्रह भाव प्रायश्चित्त है। (निय.११३) क्रोधादि स्वकीय भावों का क्षमादि भावना से निग्रह करना एवं निज गुणों का चिंतन करना प्रायश्चित्त है।(निय.११४)आत्मा का उत्कृष्ट बोध,ज्ञान,एवं चित्त जो मुनि नित्य धारण करता है,वह प्रायश्चित्त है। (निय.११६)अनेक कर्मो के क्षय का हेतु जो तपश्चरण है, वह प्रायश्चित्त है। (निय.११७)

पायड वि [प्रकट] व्यक्त, स्पष्ट। (भा.१४९)

पायरण वि [प्राकरण] कार्य करने का अधिकारी, कार्यकर्त्ता। (स.१९७)

पारमपार पुं न [पारमपार] जिसका अन्त नहीं,अनन्त। (पंचा.६९)

पाल सक [पालय्] पालन करना, रक्षण करना। (भा.१०४) पालहि/पालेहिं (वि./आ.म.ए.भा.१०४,लिं.११३)'

पाव सक [प्र+आप्] प्राप्त करना, ग्रहण करना। (पंचा.१५१, स.२८९,प्रव.११,निय.१३६,सू.१५,भा.११५) पावइ/पावदि (व.प्र.ए.मो.१०६, निय.१३६, पंचा.१५१) पावए (व.प्र.ए.मो.२३) पावंति (व.प्र.ब.पंचा.१३२, स.१५१)

पाव पुं न [पाप] अशुभकर्म, पाप। (पंचा.१४३, प्रव.७९, स.२६८, द.६) **-आरंभ** पुं [आरम्भ] पापकर्म। (प्रव.७९) पावारंभविमुक्का। (बो.४४) **-आसव** पुं [आस्रव] पापास्रव, पापकर्मों का प्रवेश द्वार। (पंचा.१४१) प्रमाद सहित क्रिया, चित्त की मलिनता, इन्द्रियविषयों में आसक्ति, दुःख देना, निन्दा करना, बुरा बोलना इत्यादि आचरण से पाप कर्मों का आस्रव होता है। (पंचा.१३९) **-प्पद** पुं न [प्रद] पाप के कारण, पापरूप कर्म के कारण, अशुभकर्मों के कारण। (पंचा.१४०) चार संज्ञा (आहार, भय, मैथुन, परिग्रह) तीन लेश्या (कृष्ण, नील, कापोत), इन्द्रियों की अधीनता, आर्त-रौद्र परिणाम एवं मोहकर्म के भाव पापप्रद हैं। (पंचा.१४०) **-मलिण** वि [मलिन] पाप से मैला। (भा.६९) **-मोहिदमदी** वि [मोहितमति] पाप से मुग्ध

बुद्धिवाला, पाप के वशीभूत, पापासक्तबुद्धि। (लिं.५) **-रहिद** वि [रहित] पाप रहित। (द.६) **-हर** वि [हर] पाप को हरण करने वाला। (मो.८४) **-हेतु** पुं [हितु] पाप के कारण। (निय.६७)

पास पुं [पार्श्व] पार्श्वनाथ, तेइसवें तीर्थङ्कर का नाम। (ती.भ.५)

पासंडि वि [पाखण्डिन्] पाखण्डी, ढोंगी, लोकप्रतिष्ठा के लिए धर्माचरण करने वाला। (स.४०८, ४१०, भा.१४१)

पासअ वि [दर्शक] देखने वाला, दृष्टा, दर्शक। (स.३१५)

पासत्थ वि [पार्श्वस्थ] छल-कपट करने वाला, अपने वेश के अनुकूल न चलने वाला, शिथिलाचारी। (भा.१४, लिं.२०)

पासुग वि [प्रासुक] परिशोधित, परिमार्जित, जन्तुरहित, हरितपने से रहित।(निय.६१,६३,६५)**-भूमि** स्त्री [भूमि] प्रासुक भूमि, प्रासुक क्षेत्र। (निय.६५) **-मग्ग** पुं [मार्ग] प्रासुक मार्ग, जो रास्ता चलना आरम्भ हो चुका हो। (निय.६१)

पाहुड न [प्राभृत] 1. अध्याय विशेष, प्रकरण विशेष। (चा.२, मो.१०६, लिं.१) 2. भेंट, उपहार।

पि अ [अपि] भी, निश्चय, ही। (स.१६९, प्रव.ज्ञे.११, निय.१३५) अट्ठविहं पि। (स.४५)

पिंड पुं [पिण्ड] 1. समूह, संघात, स्कन्ध रूप। (प्रव.ज्ञे.६९) पिंडो परमाणुदव्वाणं।(प्रव.ज्ञे.६९)2.आहार,भोजन।(सू.२२) भुंजइ पिंडं सुएयकालम्मि ।

पिंडी स्त्री [पिण्डी] गोलाकार वस्तु, ताड वृक्ष, बांस आदि। (स.२३८) ।

पिच्छ सक [दृश्/प्र+ईक्ष्] 1. देखना, अवलोकन करना। (पंचा.१६८,चा.३,बो.१७)पिच्छइ(व.प्र.ए.चा.३)पिच्छेइ (व.प्र.ए.बो.१०)पिच्छिऊण(सं.कृ.मो.९)पिच्छ(वि./आ.म.ए. स.३७६) 2. सक [पृच्छ्] पूछना। (प्रव. चा.२)

पिच्छिय न [दर्शन] दर्शन।(चा.३) णाणस्स पिच्छियस्स य।

पिज्जुत्त वि [प्ररूपित] कथित, निरूपित। णिव्वुदिमग्गो त्ति पिज्जुत्तो। (निय.१४१)

पित्त पुं न [पित्त] शरीर सम्बन्धी विकार, पित्त। (भा.३९, ४२)

पिदर पुं [पितृ] पिता, जनक। मादापिदरसहोदर। (द्वा.२१)

पिदि अ [पृथक्] अलग, पृथक्, भिन्न। (द्वा.३)

पिदु पुं [पितृ] पिता,जनक।मादुपिदुसजण। (द्वा.३)

पिपीलिय पुं [पिपीलक] कीट विशेष, चींटी। (पंचा.११५)

पिव सक [पा] पीना। (स.३१७) पिबंता (व.कृ.भा.१३७) पिवमाणो (व.कृ.स.१९६)

पिहिद/पिहिय वि [पिहित] आच्छादित, निरुद्ध, रोका गया, ढंका हुआ। (पंचा.१४१, निय.१२५)

पिहुल वि [पृथुल] विस्तीर्ण, विस्तृत, विशाल। (पंचा.८३)

पीअ वि [पीत] पिया गया, पान किया। (भा.१८)

पीड सक [पीडय्] पीड़ित करना, दुःखित करना। (लिं.११)

पीडा स्त्री [पीड़ा] वेदना, पीड़ा। (निय.१७८)

पीडिद वि [पीड़ित] पीड़ित, दुःखित। (भा.२३)

पुंज सक [पुञ्ज्] इकट्ठा करना। (भा.२०)

पुंस [पुंस्] पुरुष। (निय.४५)

पुंच्चली स्त्री [पुंश्चली] कुलटा, व्यभिचारिणी।(लिं.२१) **-घर** न [गृह] व्यभिचारिणी के घर। (लिं.२१)

पुग्गल पुं न [पुद्गल] मूर्त द्रव्य, रूपी पदार्थ, द्रव्य का एक भेद। जिसमें रूप, रस, गन्ध एवं वर्ण पाये जाते हैं वह पुद्गल है। (पंचा.७६, स.८०, प्रव.५६, निय.३२) **-कम्म** पुं न [कर्मन्] पुद्गलकर्म। मिथ्यात्व, अविरति, योग, अजीव और अज्ञान पुद्गल कर्म हैं।(स.८८) **-कम्मफल** पुं न [कर्मफल] पुद्गल कर्म फल। (स.७८) **-करण** न [करण] पुद्गल का निमित्त। (पंचा.९८) **-काय** पुं [काय] पुद्गल समूह, स्कन्ध। (पंचा.९८) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] पुद्गल द्रव्य। (पंचा.६६,स.३२९) **-दव्वीभूद** वि [द्रव्यीभूत] पुद्गलद्रव्यरूप, पुद्गलद्रव्यमय। (स.२४, २५) जदि सो पुग्गलदव्वीभूदो। **-भाव** पुं [भाव] पुद्गलभाव। (स.८६) **-मइ/मय** पुं [मय] पुद्गलमय, पुद्गलात्मक, पुद्गलरूप। (स.६६, २८७)

पुज्ज वि [पूज्य] पूजनीय। (बो.१६)

पुढवी स्त्री [पृथिवी] भूमि, धरती, पांच स्थावरों का एक भेद। (पंचा.११०, प्रव. ज्ञे.४०, लिं.१५)

पुट्ठ वि [स्पृष्ट] छुआ हुआ। (स.१४१, पंचा.८३)

पुट्ठिय वि [पुष्टित] पुष्टीकर, ताकतवर। (चा.३५)

पुण/पुणो अ [पुनः] फिर,और,इसके अनन्तर,चूंकि,इस तरह, जो कि,तथा,किन्तु।(पंचा.६०,स.१४२,प्रव.२,२०,६१) **-आगमण**

न [आगमन] फिर से आगमन। (निय.१७७) **-वि** अ [अपि] फिर भी। (स.११०)

पुण्ण पुं न [पुण्य] शुभकर्म,पुण्य। (पंचा.१०८,स.१३,प्रव.७७,

पुण्णिमा स्त्री [पूर्णिमा] पूर्णिमा, पूर्णचन्द्रमा वाली रात्रि। (भा.१५९)

पुत्त पुं [पुत्र] लड़का। (प्रव.चा.२)

पुधग वि [पृथक्] अलग, भिन्न-भिन्न। (पंचा.९६)

पुधत्त वि [पृथक्त्व] पृथक्पना, भिन्नता, तीन से अधिक और नौ से कम संख्या का संकेत विशेष। (पंचा.४७, प्रव. ज्ञे. १४)

पुप्फं न [पुष्प] फूल,पुष्प,कुसुम। (भा.१०३, १५७)

पुराइय वि [पुरातन] पुराना, पूर्व के, प्राचीन। (शी.४)

पुराण वि [पुराण] पुराना, प्राचीन। (निय.१५८)

पुरिस पुं [पुरुष] पुरुष, आदमी, मनुष्य। (स.३५, प्रव.चा.५९, निय.५३, निय.५३, सू.४) **-आयार** वि [आकार] पुरुषाकार, पुरुष की आकृति वाला। (मो.८४)

पुव्व वि [पूर्व] 1. पहले,पूर्व,आदि।(पंचा.३०, स.१७३) **-णिबद्ध** वि [निबद्ध] पूर्वनिबद्ध, पहले से बंधे। (स.१६६) 2. पुं न [पूर्व] काल विशेष। (स.२१, भा.३८) **-भव** पुं [भव] पिछलाभव। (भा.३८) ३. दिशावाची, चार दिशाओं में एक।

पूजा/पूया स्त्री [पूजा] पूजन,अर्चा।(प्रव.६९,भा.८३)

पूय न [पूय] पीब, दुर्गन्धितरक्त, रक्तविकार। (द्वा.४५, भा.४२)

पूर सक [पूरय्] पूर्ति करना, भरना, तृप्त करना, प्रसन्न करना।

(निय.१८४) पूरयंतु (वि./आ.प्र.ए.)

पेच्छ सक [प्र+ईक्ष्/दृश्] देखना,अवलोकन करना। (पंचा.१६३, प्रव.३२, निय.१६५) पेच्छदि/पेच्छइ (व.प्र.ए.निय.१६६, १६८) पेच्छित्ता (सं.कृ.प्रव.चा.३५) पेच्छिऊण (सं.कृ.निय.५८) पेच्छंत (व.कृ.)

पेसुण्ण न [पैशून्य] चुगली, दोगलापन। (निय.६२, भा.६९)

पोग्गल पुं न [पुद्गल] देखो पुग्गल। (पंचा.६५,स.२.प्रव.३४, निय.९) **-कम्म** पुं न [कर्मन्] पुद्गल कर्म। (पंचा.६१,निय.१८,स.१९५) **-काय** पुं न [काय] पुद्गल समूह। (पंचा.६४, निय.९, प्रव.ज्ञे.७८) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] पुद्गलद्रव्य। (पंचा.१२६, प्रव.ज्ञे.५५, निय.२०) **-मइ** पुं [मय] पुद्गलमय। (प्र.ज्ञे.७०) **-मेत्त** पुं [मात्र] पुद्गलमात्र। (पंचा.१३२)

पोत्थ पुं न [पुस्तक] किताब, पुस्तक, ग्रन्थ। पोत्थइकमंडलाइं। (निय.६४)

पोराणय वि [पौराणिक] पुरातन, प्राचीन काल सम्बन्धी। (शी.३४)

पोस सक [पोषय्]पालन करना। (लिं.२१)

पोसण न [पोषण] पालना, पुष्टि, समाधान, आश्रय। (प्रव.चा.४८)

पोसह पुं [प्रोषध] प्रोषध,अष्टमी और चतुर्दशी को किया जाने वाला व्रत विशेष,देश विरत श्रावक की एक प्रतिमा,शिक्षाव्रत

का एक भेद। (चा.२२, २६)

फ

फड्ड पुं न [स्पर्ध] अंश, भाग, हिस्सा। (स.५२) -**य** पुं न [क] स्पर्धक, अनुभाग का समूह।

फण पुं [फन]सांप का फणा।(भा.१४४)-**मणि** पुं स्त्री [मणि] फणामणि, फणा में स्थित मणि, नागमणि। (भा.१४४)

फणि पुं [फणिन्] सर्प,नाग।(भा.१४४)-**राअ** पुं [राजन्] नागेन्द्र, सर्पराज, शेषनाग। जह फणिराओ सोहइ। (भा.१४४)

फरिस पुं न [स्पर्श] स्पर्श, छूना।

फरुस वि [परुष] कर्कश, कठोर।

फल अक [फल] फलना,पल्लवित होना।(प्रव.चा.५७)फलदि कुदेवेसु मणुजेसु।(प्रव. चा.५७) फलदि (व.प्र.ए.)

फल पुं न [फल] 1. वृक्ष का फल। (स.१६८) पक्के फलम्हि पडिए। 2. कारण। (स.३१९,पंचा.१३३, मो.३४) जाणइ पुण कम्मफलं। 3. लाभ। (प्रव.४५) पुण्णफला अरहंता। 4. कार्य। (स.७४, निय.२) दुक्खा दुक्खफला।

फलिह पुं [स्फटिक] स्फटिक, मणिविशेष। (मो.५१) -**मणि** पुं स्त्री [मणि] स्फटिकमणि। (मो.५१) जह फलिहमणिविसुद्धो।

फास सक [स्पृश्]स्पर्श करना,छूना।(पंचा.१३४)मुत्तो फासदि मुत्तं।

फास पुं न [स्पर्श] स्पर्श,पुद्गल का एक गुण,एक इन्द्रिय का नाम। (पंचा.८१, स.६०, प्रव. ज्ञे.४०, निय.२७) जाणंति रसं फासं। (पंचा.११४, ११५)

फुडु वि [स्पष्ट] व्यक्त, स्पष्ट, विशद। (भा.१११) फुडु रइयं चरणपाहुडं चेव। (चा.४५)

फुर अक [स्फुर्] चमकना, प्रकाशित होना। (भा.१५५) खमदमखग्गेण विप्फुरंतेण। विप्फुरंतेण (व.कृ.तृ.ए.)

फुरिय वि [स्फुरित] स्फुरित, प्रकाशित, चमकदार। (मो.८)

फुल्ल न [फुल्ल] फूल, पुष्प। (बो.१४) जह फुल्लं गंधमयं।

फुल्लित वि [फुल्लित] फूली हुई। (भा.१५७)

फेफस न [फुप्फुस] फेंफड़ा। (भा.३९)

ब

बंध सक [बन्ध्] 1. बांधना, नियन्त्रण करना। (पंचा.१६६, स.२८१, निय.९८, भा.७९) बंधइ (व.प्र.ए.भा.७८) बंधदि (व.प्र.ए.स.१७४) बंधए (व.ए.स.२५९) बंधंते (व.प्र.ब.स.१७३) बंधमि (व.उ.ए.स.२६६)

बंध पुं [बन्ध] जीवकर्म संयोग, कर्म पुद्गलों का जीव प्रदेशों के साथ दूध-पानी की तरह मिलना। (पंचा.१३४, स.१३, बो.८, भा.११६) जब आत्मा अशुभ-शुभ परिणामों रूप परिणमन करता है तब वह अनेक प्रकार के पौद्गलिक कर्मों के साथ बंध को प्राप्त होता है। (पंचा.१४७) कर्मों का बन्ध भाव के निमित्त से होता है। (पंचा.१४८) बन्ध के चार भेद हैं-प्रकृतिबन्ध,

स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेश बन्ध। **-कत्तार** पुं [कर्तृ] बन्ध के कर्त्ता। (स.१०९) **-कहा** स्त्री [कथा] बन्धकथा। (स.४) कथा के भेदों में काम,भोग और बन्ध कथा,इन तीन कथाओं का वर्णन किया गया है।(स.३)**-कारण** न [कारण] बन्ध का कारण,बन्ध का निमित्त।(प्रव.७६,निय.१७३)जीवस्स य बंधकारणं होई।(निय.१७४)**-ग** वि [क] बन्धक, बांधने वाला। (स.१७६,प्रव.चा.१८)**-ठाण** न [स्थान] बन्धस्थान। (स.५३) **-समास** पुं [समास] बन्ध समास,बन्धसंकोच,बन्ध का संक्षेप। (स.२६२,प्रव.ज्ञे.८७)

बंधण न [बन्धन] कर्म बन्ध का कारण। (स.२९०, निय.६८) **-बद्ध** वि [बद्ध] बन्धनयुक्त।(स.२९१)**-य** वि [क] बन्धन करने वाला।(स.२८८)**-वस** वि [वश] बन्धनवश,बंधन के अधीन। (स.२८९)

बंधव पुं [बान्धव] भाई, भ्राता, मित्र। (भा.४३)

बंधु पुं [बन्धु] भाई, मित्र। (प्रव.चा.२, द.७, मो.७२) **-वग्ग** पुं [वर्ग] बन्धुसमूह। (प्रव.चा.२)

बंभ पुं.न [ब्रह्म] ब्रह्म, ब्रह्मचर्य। (स.२६४, चा.२२) **-चेर** न [चर्य] ब्रह्मचर्य, मैथुन विरति, व्रतों का एक भेद। (द.२८, शी.१९)

बज्झ सक [बन्ध्] बांधना, कसना, जकड़ना। (स.१७८, मो.१५, द.१७) णाणी तेण दु बज्झदि। (स.१७२)

बद्ध वि [बद्ध] बंधा हुआ, जकड़ा हुआ। (स.२३, १४१, १८०) जे

बद्धा पच्चया बहुवियप्पं। (स.१८०)

बल पुं [बल] 1. बलदेव, वासुदेव का बड़ा भाई। (द्वा.५) **-देव** पुं [दिव]बलदेव। 2. न [बल] पराक्रम, शक्ति। मन, वचन, और काय के भेद से बल के तीन भेद हैं। (भा.१५५, पंचा.३०) **-पाण** पुं न [प्राण] बलप्राण। (प्रव.ज्ञे.५४)

बलि वि [बलिन्] बलवान् बलिष्ठ, पराक्रमी। (पंचा.११७)

बहि अ [बहिस्] बाहर,बाह्य।(निय.३८,प्रव.चा.७३) **-तच्च** पुं न [तत्त्व] बाह्य तत्त्व। (निय.३८) **-त्थ** वि [स्थ] बाह्यरत, बहिर्मुख। (प्रव.चा.७३)

बहिर वि [बाह्य] बाहर का,बहिर्भूत।(मो.८,निय.१४९) **-त्थ** वि [स्थ] बाह्यरत।(मो.८)**प्प** पुं [आत्मन्] बहिरात्मा। समणो सो होदि बहिरप्पा।(निय.१४९)

बहु वि [बहु] बहुत, अनेक, प्रभूत, प्रचुर, अनल्प। (पंचा.५६, स.४३, निय.३४, सू.९,भा.१४१,लिं.५)**-गुण** पुं न [गुण] बहुत, गुण, अनेकगुण, नाना गुण। (द.११) **-पयत्त** पुं [प्रयत्न] बहुत प्रयत्न, अधिक उद्यम। (लिं.५) **-परियम्म** पुं न [परिकर्म] अनेक क्रियायें, बहुत से तपश्चरण सम्बन्धी कार्य। (सू.९) **-प्पदेसत्त** वि [प्रदेशत्व] बहुप्रदेशीपना। (निय.३४) **प्पयार** पुं [प्रकार] अनेक प्रकार, बहुभेद। (पंचा.११८) **-भाव** पुं [भाव] अनेक भाव। (स.२३) **-माण** पुं न [मान] बहुमान, अधिक अहङ्कार। (लिं.६) **-माणस** वि [मानस] अधिक मानसिक, अनेक प्रकार के मन संबंधी। (भा.१५) **-वार** पुं [बार] अनेकसमय,

अनेक बार। (भा.२७) **-वियप्प** पुं [विकल्प] अनेक विकल्प, बहुत विचार। (स.१८०) **-विह** [विध] बहुविध, नाना प्रकार। (स.३१८, सू.५, भा.१५, द.४) **-सत्त** पुं न [भाव] अनेक जीव। (द.२९) **-सत्थ** पुं न [शास्त्र] अनेक शास्त्र। (बो.१)

बहुअ/बहुग वि [बहुक] अनेक, बहुत। (पंचा.१२३, स.२८९, प्रव. ज्ञे. ४९, भा.३८)

बहुल वि [बहुत] प्रचुरता, अनेक, अधिकता। (स.२४२, भा.६९)

बहुस वि [बहुशः] अनेक बार, बहुत समय तक। (भा.४) गहिउज्झियाइं बहुसो। (भा.४)

बाण पुं [बाण] शर, बाण, तीर। (बो.२२)

बादर वि [बादर] स्थूल, मोटा, जो दूसरों को बाधा दे एवं स्वयं बाधित हो, नाम कर्म का एक भेद। (स.६७, प्रव.ज्ञे.७५)

बारस वि [द्वादश] बारह, संख्या विशेष। (भा.८०) **-अंग** स्त्री न [अङ्ग] बारह अङ्ग। (बो.६१) **-विह** वि [विध] बारह प्रकार का। (भा.८०)

बाल पुं [बाल] 1. बाल, केश। (स.१७) बालग्गकोडिमत्तं। (सू.१७) **-अग्ग** न [अग्र] बालाग्र, बाल के अग्रभाग। 2. बालक, शिशु। (प्रव.चा.३०) **-त्तण** वि [त्व] बाल्यकाल, बालपना। (भा.४१) 3. अज्ञानी, अल्पज्ञ। **-तव** पुं न [तपस्] बाल तप। (स.१५२) **-वद** पुं न [व्रत] बालव्रत, अज्ञानी के व्रत। (स.१५२) **-सहाव** पुं [स्वभाव] अज्ञानी का स्वभाव। (लिं.२१) **-सुद** न [श्रुत] अज्ञानी का श्रुत, अल्पश्रुत। (मो.१००)

बाला स्त्री [बाला] बाला, कुमारी, लड़की। (स.१७४)

बाहा स्त्री [बाधा] विरोध, पीड़ा, व्यवधान, कष्ट। (निय.१७८)

बाहिर वि [बाह्य] बाहर, बाह्य। (निय.१०२, भा.११३, मो.४) **-कम्म** पुं न [कर्मन्] बाह्यकर्म। (मो.९८) **-गंथ** पुं [ग्रन्थ] बाह्य परिग्रह, धन-धान्यादि परिग्रह। (भा.३) **-चाअ/चाग** पुं [त्याग] बाह्य-त्याग। (भा.३) **-लिंग** न [लिङ्ग] बाह्यलिङ्ग, बाह्यवेश। (भा.१११) **-वय** पुं न [व्रत] बाह्यव्रत, बाह्यनियम। (भा.९०) **-संग** पुं न [सङ्ग] बाह्यसम्बन्ध, बाह्यपरिग्रह। (भा.७०) **संगचा** पुं [सङ्गत्याग] बाह्य परिग्रह का त्याग। (भा.८९)

बाहु पुं [बाहु] भुजा, ऋषभदेव के पुत्र बाहुबलि। (भा.४९) **-बलि** पुं [बलि] शक्तिशाली, बाहुबली। (भा.४४)

बीचि पुं स्त्री [वीचि] तरङ्ग, लहर। (द्वा.५६)

बीभच्छ वि [वीभत्स] घृणाजनक, घृणित, कुत्सित। (द्वा.४४)

बीय न [बीज] बीज, अङ्कुरहोने योग्य। (भा.१०३)

बीया स्त्री [द्वितीया] दूसरा। (द.१८)

बुज्झ सक [बुध्] जानना, समझना, ज्ञान करना। (स.३६, ३७, ३८१)

बुड्ढ वि [वृद्ध] वृद्ध, अधिक उम्र वाला, बूढ़ा। (निय.७९, प्रव.चा.३०)

बुद्ध वि [बुद्ध] तत्त्वज्ञाता, पण्डित, एक दार्शनिक का नाम। (भा.१५०)

बुद्धि स्त्री [बुद्धि] मति, मेधा, प्रज्ञा। (पंचा.१७०, स.१९)

बुध/बुह वि [बुध] ज्ञानी, ज्ञाता, पण्डित। (स.२०७, शी.२, पंचा.१३८)

बुभुक्खिद वि [बुभुक्षित] क्षुधातुर, भूखा। (पंचा.१३७)

बूड अक [दे] डूबना, अस्त होना। (द्वा.५७)

बेइंदिय वि [द्वीन्द्रिय] दो इन्द्रिय, जीवविशेष, ज[illegible] [illegible]कर्म का एक भेद। (पंचा.११४)

बेढिय वि [वेष्टित] घिरा हुआ, ढंका हुआ। (भा.११९)

बोध/बोह सक [बोधय्] समझाना, ज्ञान कराना। (निय.१४२, स.१०९)

बोह पुं [बोध] ज्ञान, समझ, जानकारी। (निय. १०६)

बोहि स्त्री [बोधि] रत्नत्रय, आत्मज्ञान। (द.५, भा.६८, द्वा.२)
-लाह पुं [लाभ] रत्नत्रय की प्राप्ति, आत्मज्ञान की प्राप्ति। (द.५)

भ

भंग पुं [भङ्ग] खण्डन, व्यय, नाश। (पंचा.८, प्रव.१७, भा.२६) भंगविहीणो य भवो। (प्रव.१७)

भंज सक [भञ्ज्] विनाश करना, भङ्ग करना। (भा.९०)

भगव पुं [भगवन्] भगवान्। (प्रव.३२, निय.१५९)

भग्ग वि [भग्न] खण्डित, भ्रष्ट, टूटा हुआ। (द.९) **-त्तण** वि [त्व] भ्रष्टता, खण्डितपना। भग्गा भग्गत्तणं। दिंति। (द.९)

भज सक [भज्] भोगना, ग्रहण करना, प्राप्त करना, भाग करना। (प्रव.७२)

भट्ट वि [भ्रष्ट] च्युत, गिरा हुआ, स्खलित। जे दंसणेसु भट्टा। (द.८)

भण सक [भण्] कहना, बोलना। (स.२३, भा.१५४) भणइ/भणदि (व.प्र.ए.स.२७३, ३२५) भणंति (प्र.ब.प्रव.३३) भणसि (व.म.ए.स.२४) भणामि (व.उ.ए.भा.१५४) भण (वि./आ.म.ए.३७)भणिज्ज (भवि.प्र.ए.स.२७०, ३००) यह रूप भविष्यकाल के तीनों पुरुषों के दोनों वचनों में एक-सा बनता है।

भणिअ/भणिद/भणिय वि [भणित] कथित, कहा गया, प्रतिपादित। (पंचा.१२०, स.१७६, प्रव.चा.४०, निय.९, बो.२, शी.४०, मो.१७)

भण्ण सक [भण्] कहना, बोलना। (पंचा.४७, स.६६, मो.५) भण्णदि/भण्णदे (व.प्र.ए.स.३३,६६) भण्णए (व.प्र.ए.मो.५) भण्णंति/भण्णंते (व.प्र.ब.पंचा.४७)

भत्त पुं न [भक्त] 1. भोजन, आहार। (निय.६३, प्रव.चा.१४, मो.५२) **-कहा** स्त्री [कथा] आहार कथा, भोजनसम्बन्धी कथा। (निय.६७) **-पाण** न [पान] भोजन-पान। (भा.१०२) 2. वि [भक्त] भक्ति करने वाला। (प्रव.चा.६०)

भत्ति स्त्री [भक्ति] विनय, एकाग्र-चिंतन, सेवाभाव। (पंचा.१३६, प्रव.चा.४६) **-जुत्त** वि [युक्त] भक्तियुक्त, विनयसम्पन्न। सो जोगभत्तिजुत्तो। (निय.१३८) **-राअ** पुं [राग] भक्ति में लीन। (भा.१०५) **-संजुत्त** वि [संयुक्त] भक्ति में रत। (भा.१३९)

भद्द [भद्र] सरल, साधु, सज्जन। (शी.२५) **-बाहु** पुं [बाहु]

भद्रबाहु, एक मुनि का नाम। (बो.६१)

भम सक [भ्रम्] घूमना, परिभ्रमण करना, चक्कर लगाना। (स.२३६,प्रव.१२,भा.६८,सू.२१,शी.३६)भमइ/भमदि/भमेइ (व.प्र.ए.प्रव.१२, स.३०१, सू.२१) भमंति (व.प्र.ब.द.४) भमिदव्व (वि.कृ.शी.२६) भमाडिज्जइ (प्रे.व.प्र.ए.स.३३४)

भमर पुं [भ्रमर] भौंरा, मधुकर। (पंचा.११६)

भमिअ वि [भ्रमित] घूमता हुआ, परिभ्रमण करता हुआ, भ्रमण शील(भा.३०,१०३)

भय न [भय] डर, त्रास, भीति। (निय.१३२, भा.२५, द.१३)

भयव/भयवअ पुं [भगवन्] भगवान्। (स.२८, बो.६१)

भयवंत पुं [भगवन्त्] भगवान्। (भा.१५६)

भर सक [भृ] भरना, पालना। (भा.४२)

भरह पुं [भरत] भरत क्षेत्र, आदिनाथ के प्रथम पुत्र का नाम। (मो.७६)

भरिय वि [भरित] भरा हुआ, रक्षित, पोषित। (भा.४२)

भव अक [भू] होना। (प्रव.१२, स.३८४, भा.२९) भवदि (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.१४) भविस्सदि (भवि.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.२०) भविस्सं (भवि.उ.ए.स.३८४) भवंतो (व.कृ.२९) भवीय (सं.कृ.प्रव.ज्ञे.५९)

भव पुं [भव] 1. संसार, जगत्। (स.६१, नियं.४७) **-कोडि** स्त्री [कोटि]करोड़ों भव। (सू.८) **-गहण** न [ग्रहण] 1. संसार ग्रहण। 2. न [गहन] संसार रूपी वन। (मो.४७) **-ण्णव** पुं [आर्णव]

संसार समुद्र, संसारसागर। (भा.९८) **-णासण** न [नाशन] संसार नाश। (सू.३) **-णिंदा** स्त्री [निंदा] संसार की निन्दा। (भा.१) **-महण** न[मथन]संसार का नाश।(भा.८२)**-रुक्ख** पुं [वृक्ष] ससाररूपी वृक्ष। (भा.१२१) **-सायर** पुं [सागर] संसारसागर। (पंचा.१७२, भा.२०) 2. उत्पत्ति, उत्पन्न। (प्रव.ज्ञे.८) ण भवो भंगविहीणो। 3. योनि, पर्याय। (मो.५३)

भविअ/भविय वि [भव्य] 1. मुक्तिगामी, मोक्ष जाने योग्य। (पंचा.१६३, भा.४५) **-जीव** पुं [जीव] भव्य-जीव। (भा.१४८) 2. वि [भक्ति] होता हुआ। (पंचा.१७२)

भव्व वि [भव्य] मुक्तिगामी। (पंचा.३७, निय.११२, प्रव.६२) **-जण** पुं [जन] भव्य जन। (बो.५९) **-जीव** पुं [जीव] भव्य जीव, निकट भविष्य में मुक्त होने वाला। (बो.२४,चा.१) **-पुरिस** पुं [पुरुष] भव्य पुरुष। (बो.५३)

भा सक [भावय्] चिंतन करना। (भा.१३, १४) भाऊण दुहं पत्तो। (भा.१४)

भागि वि [भागिन्] भागीदार, हिस्सेदार। (प्रव.चा.५९)

भायण पुं न [भाजन] पात्र,बर्तन। (भा.६५, ६९)

भार पुं [भार] बोझा, भार वाली वस्तु।

भाव सक [भावय्] गुणगान् करना, चिंतन करना, भावना करना। (निय.९१, भा.११५, मो.१०६) भावइ (व.प्र.ए.मो.१०६, भा.१६४) भावंति (व.प्र.ब.बो.५३) भावंतो (व.कृ.भा.६१) भावेह (वि/आ.म.ब.निय.१११) भावेज्ज (वि./आ.द्वा.८७)

भाविज्जहि (वि.आ./म.ए.भा.५५) भाविऊण (सं.कृ.भा.४३) भावि (वि./आ.म.ए.भा.९६)

भाव पुं [भाव] 1. अभिप्राय, आशय, मानसिक विकार। (पंचा.१४८, स.९१, प्रव.८३, भा.६०, चा.४५) **-कारण** न [कारण] भाव कारण, भाव का निमित्त। (पंचा.६०) **-ठाण** न [स्थान] भावस्थान। (निय.३९) **-णिमित्त** न [निमित्त] भाव का हेतु। (पंचा.१४८) **-तिविह** वि [त्रिविध] तीन प्रकार के भाव। (भा.८०) **-धम्म** पुं न [धर्मन्] भावधर्म। (लिं.२) **-पाहुड** न [प्राभृत] भाव पाहुड,एक ग्रन्थ का नाम,भावों का उपहार। (भा.१,१६४) **-मल** पुं न [मल] भावरुपी मल,अन्तरङ्ग मैल (भा.७०) **-रहिअ/रहिय** वि [रहित] भाव रहित, परिणाम रहित। (भा.४, १०) **-वज्जिअ** वि [वर्जित] भाव विरहित। (भा.७४) **-विणट्ठ** वि [विनष्ट] भाव रहित, भावों से हीन। (लिं. १९, २०) **-विमुत्त** वि [विमुक्त] भावों से मुक्त। (भा.४३) **-विरअ** वि [विरत] भावों से विरत। (भा.४७) **-बीअ** पुं न [बीज] भाव बीज। (भा.१४) **-विसुद्ध** वि [विशुद्ध] भाव विशुद्ध। (भा.३) **-विहूण** वि [विहीन] भाव विहीन। (भा.५) **-समण/सवण** पुं [श्रमण] भाव श्रमण, विशुद्ध आत्मा की ओर अग्रसर मुनि। पावंति भावसमणा। (भा.१००) **-सवणत्तण** वि [श्रमणत्व] भाव श्रमणपना।(भा.६७) **-सहिअ/सहिद/सहिय** वि [सहित] भाव सहित। (भा.१२७, निय.७४) **-सुद्ध** वि [शुद्ध] भावों से शुद्ध। (चा.४५, भा.६०)

-**सुद्धि** स्त्री [शुद्धि] भावों की शुद्धता, भावों की निर्दोषता। (भा.११८, निय.११२, चा.४५) भावो (प्र.ए.पंचा.५९) भावा (प्र.ब.बो.२७) भावं (द्वि.ए.स.१०२) भावे (द्वि.ब.बो.२७) भावेण (तृ.ए.भा.४८) भावेहि (तृ.ब.चा.१२) भावस्स (च./ष.ए.स.९१) भावाण/भावाणं (च./ष.ब.स.२८०) भावादो (पं.ए.स.१३०) भावाओ (पं.ए.स.१२८) भावम्मि (स.ए.पंचा.१३१)

भावणा स्त्री [भावना] अनुप्रेक्षा, चिंतन। (चा.१३, भा.१४)

भावि वि [भाविन्] भविष्य में होने वाला, भव्य। (निय.३२)

भाविअ/भाविद/भाविय वि [भावित] 1. सुशोभित, शोभायुक्त। (निय.९०, भा.१४५, मो.११) 2. विचारित, चिंतित। (भा.८१) **पुव्व** वि [पूर्व] चिंतनपूर्वक। (भा.८१) -**मइ** स्त्री [मति] चिंतन युक्त बुद्धि। (शी.३)

भास सक [भाष्] कहना, बोलना। भासदि (व.प्र.ए.स.२७) ववहारणयो भासदि।

भासा पुं [भाषा] बोली, वचन, वाणी, समिति का एक भेद। (बो.३३, निय.६२) -**समिदि** स्त्री [समिति] भाषा समिति। (निय.६२) -**सुत्त** न [सूत्र] भाषासूत्र, आगमिक वचन। (बो.६०)

भासिय वि [भाषित] कथित, प्रतिपादित। (स.३६०, मो.३० भा.९२)

भिंद सक [भिद्] भेदना, तोड़ना, खण्ड-खण्ड करना। (स.२३८)

भिक्ख न [भैक्ष्य] भिक्षा, आहार। (प्रव.२७, २९)

भिक्खु पुं स्त्री [भिक्षु] मुनि, साधु। (पंचा.१४२, सू.२१, भा.८१)

भिच्च पुं [भृत्य] नौकर, सेवक। (द्वा.३,९)

भिज्ज सक [भिद्] भेदाना,तोड़ना। (स.२०९, भा.९५)

भिण्ण वि [भिन्न] खण्डित, विदारित। (पंचा.३५, निय.१११, भा.६३) **-देह** पुं न [देह] खण्डित शरीर, शरीर रहित। (पंचा.३५, भा.६३)

भीम वि [भीम] भयंकर, भीषण। (बो.४१, भा.९८) **-वण** न [वन] घनघोर जंगल, भयानक वन। (बो.४१)

भीरु वि [भीरु] डरपोक, भीत, डरा हुआ। (निय.६)

भीसण वि [भीषण] भयंकर, भयानक। (भा.८)

भुंज सक [भुज्] भोग करना, अनुभव करना। (पंचा.६३, स.१९५, सू.१७) भुंजदि/भुंजेइ (व.प्र.ए.पंचा.१२२,सू.२२) भुंजंति (व.प्र.ब. पंचा. ६७, स.३३०) भुंजंतस्स (व.कृ.ष.ए.स.२२०)

भुक्खिद वि [भुक्षित] क्षुधा से पीड़ित, भूखा। (प्रव.चा.ज.वृ.२७)

भुत्त वि [भुक्त] खाया हुआ, भक्षित। (भा.९, ४०)

भुय पुं स्त्री [भुज्] भुजा, हाथ, बाहु। (बो.५०)

भुवण न [भुवन] लोक, संसार। **-यल** न [तल] लोक का भाग, लोक की सतह। (मो.२१)

भू स्त्री [भू] पृथिवी, धरती, भूमि। (निय.२२)

भूद वि [भूत] 1. उत्पन्न हुआ, बना हुआ। (पंचा.६०, स.२४, प्रव.१५) 2. पुं [भूत]जीव, प्राणी। 3. सत्य,यथार्थ। **-त्थ** वि

[अर्थ] सत्य पदार्थ, सत्यार्थ। (स.११,१३,२२) 4. भूत चतुष्टय। (शी.२६)

भूमि स्त्री [भूमि] पृथिवी, धरती। (बो.५५)

भेत्ता वि [भेत्ता] भेद करने वाला। (पंचा.८०)

भेद/भेय पुं न [भेद] प्रकार,भेद।(प्रव.ज्ञे.३७,स.११०) **-ब्भास** पुं [अभ्यास] नाना प्रकार का ज्ञान,भेद विज्ञान की शिक्षा। (निय.८२)

भोइ वि [भोक्ता] भोगने वाला। (भा.१४७)

भोग पुं न [भोग] विषय सुख,इन्द्रिय सुख।(स.२२४, निय.१६) **उपभोग** पुं न [उपभोग] भोगोपभोग, शिक्षाव्रतों में एक व्रत। **उपभोगपरिमा** स्त्री [उपभोगपरिमा] वस्तु का परिमाण, सीमा। (चा.२५)

-णिमित्त न [निमित्त] भोग का कारण (स.२७५) **-भूमि** स्त्री [भूमि] भोग-भूमि, स्थान विशेष का नाम। (निय.१६)

भोत्ता वि [भोक्ता] भोगने वाला। (पंचा.२७, निय.१८)

भोयण न [भोजन] भोजन , आहार।(लिं.११)

म

मअ वि [मृत] मरा हुआ, चैतन्यशून्य। (भा.३३)

मइ स्त्री [मति] 1. बुद्धि, मेधा, ज्ञान। (स.२७१,बो.२२) एसा दु जा मई दे। (स.१५९) 2.मन,हृदय। (मो.४९)

मइलिय वि [मलिनित] मलिन हुआ। सिविणे वि ण मइलियं जेहिं।

(मो.८९) **मइलिय** में शब्द विपर्यय हो गया है।

मउण न [मौन] चुपचाप, एकाग्र। (मो.९७)

मंगल वि [मङ्गल] सुखकारी,शुभ,कल्याणकारी। (भा.१२३)

मंत पुं न [मन्त्र] जाप, जपने योग्य अक्षरपद्धति। (द्वा.८)

मंद वि [मन्द] अल्प, मूर्ख, अज्ञानी।(स.४०, २८८) **-त्तण** वि [त्व] मंदपना, अज्ञानीपन। (स.४१) **-बुद्धि** स्त्री [बुद्धि] मन्दबुद्धि, अल्पबुद्धि। (स.९६)

मंस पुं न [मांस] मांस, गोस्त। (प्रव.चा.२९)

मंसुग पुं न [श्मश्रुक] दाड़ी-मूंछ। (प्रव.चा.५)

मक्कड पुं [मर्कट] बन्दर, वानर, कपि। (भा.९०)

मक्कण न [मत्कुण] खटमल। (पंचा.११५)

मक्खिया स्त्री [मक्षिका] मक्खी। (पंचा.११६) उद्दंसमसयमक्खिय।

मग्ग पुं [मार्ग] रास्ता, पथ,मार्ग। (पंचा.१०५, स.२३४, निय.२, मो.१९) **-प्पभावणट्ठ** वि [प्रभावनार्थ] मार्ग की प्रभावना के लिए।(पंचा.१७३)**-फल** पुं न [फल] मार्गफल, इष्ट-अनिष्टकृतकर्म का शुभ-अशुभफल। (निय.२)

मग्गण/मग्गणा स्त्री [मार्गणा] विचारणा, पर्यालोचना, अन्वेषण। (स.५३, निय.४२, चा.११, सू.१, बो.३०)

मच्छ पुं [मत्स्य] मछली। (पंचा.८५, भा.८८)

मच्छर न [मात्सर्य] ईर्ष्या, द्वेष। (भा.६९)

मच्छरिअ वि [मत्सरित] ईर्ष्यालु, द्वेषी। (द.४४)

मज्ज अक [माद्य्] उन्मत्त होना, सावधानी खोना। (स.१९६)

मज्ज न [मद्य] मदिरा, शराब। (सू.१९६)

मज्झ न [मध्य] 1. बीच, अन्तराल, मध्य। (प्रव.चा.७३) **-त्थ** वि [स्थ] माध्यस्थ, मध्यवर्ती, अन्तरङ्ग। (निय.८२, प्रव.चा.७३) 2. पुं [मम] मुझे, मेरा। (स.३८)

मज्झम/मज्झिम वि [मध्यम] मध्यवर्ती, बीच का। (प्रव.चा.४, बो.१७) **-पत्त** न [पात्र] मध्यमपात्र। (द्वा.१७)

मण पुं न [मनस्] 1. मन, अन्तःकरण,चित्त। (पंचा.१११, निय.६९, चा.३२) **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] मन की प्रवृत्ति को रोकना, मन की स्थिरता। (निय.६६, चा.३२) **-पज्ज** पुं [पर्यय] मनःपर्यय, ज्ञान का एक भेद।(निय.१२) **-परिणामविरहिद** वि [परिणामविरहित] मनोयोग से रहित। (पंचा.११२) **-मत्तदुरिय** पुं [मत्तदुरित] मनरूपी उन्मत्त हाथी। (भा.८०) 2. मनःपर्यय ज्ञान, ज्ञानविशेष, दूसरे के मनोगत विचारों को जानने वाला ज्ञान। (पंचा.४१, स.२०४)

मणि पुं स्त्री [मणि] मुक्ता, मणि, रत्न विशेष। (भा.१५९) **-माला** स्त्री [माला] मोतियों की माला। (भा.१५९)

मणु पुं [मनु] 1. मनुष्य, नर। (भा.८) **गइ** स्त्री [गति] मनुष्यगति। (भा.८) 2. मनु, कुलकर, चौथेकाल के आदि में होने वाले विशेष व्यक्ति।

मणुअ/मणुज/मणुय पुं [मनुज] मनुष्य, मानव, मनुज। (पंचा.११८, स.२६८, प्रव.६३, द.३४, मो.११, बो.३४) **-जम्म**

पुं न [जन्मन्] मनुष्य जन्म, मनुष्य पर्याय। (भा.११) **-त्त** वि [त्व] मनुष्यत्व। (द.३४) **-भव** पुं [भव] मनुष्यभव, मनुष्य पर्याय। (बो.३५) **-राय** पुं [राजन्] चक्रवर्ती। (प्रव.६)

मणुण्ण वि [मनोज्ञ] मनोहर, अतिरमणीय, सुन्दर। (चा.२९)

मणुव पुं [मनुज] मनुष्य, मानव। (निय.७७, द्वा.३)

मणुस/मणुस्स पुं स्त्री [मनुष्य] मनुष्य। (प्रव.१, प्रव.ज.वृ.७९, पंचा.१७, निय.१६) पणमंति जे मणुस्सा। (प्रव.ज.वृ.७९) **-त्तण** वि [त्व] मनुष्यत्व। (पंचा.१७)

मणो पुं न [मनस्] मन, पौद्गलिक द्रव्यमन। (पंचा.८२, प्रव.ज्ञे.६८, भा.९०) **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] मनोगुप्ति, मनोनिग्रह। (निय.६९) मन की रागादि परिणामों से निवृत्ति मनोगुप्ति है। जा रायादिणिवत्ती, मणस्स जाणीहि तम्मणोगुत्ती। (निय.६९) **-रह** पुं [रथ] मनोरथ, मन की अभिलाषा, मन की इच्छा। (स.२३६)

मण्ण सक [मन्] मानना, समझना। (पंचा.१६५, स.२८, प्रव. ज्ञे.१००, निय.१६१) मण्णइ/मण्णदि (व.प्र.ए.पंचा.१६५, स.२५०, मो.५८) मण्णए (व.प्र.ए.द.२४, मो.११) मण्णसे (व.म.ए.स.६२) मण्णसिं (व.म.ए.स.३४१) मण्णे (वि./आ.म.ए.प्रव.ज्ञे.१००)

मत्त वि [मत्त] 1. उन्मत्त, मद्युक्त। (भा.८०) 2. न [मात्र] मात्र, केवल, अवधारण।

मत्ता स्त्री [मात्रा] मर्यादा, सीमा, परिमाण। (पंचा.२६) **-रहिद** वि [रहित] मर्यादारहित, असीम। (पंचा.२६)

मत्थय पुं न [मस्तक] माथा, सिर। (ती.भ.अ.)

मद पुं न [मद] 1. अभिमान, गर्व, घमंड। (बो.५१, निय.६) 2. भरा हुआ, जीवरहित। (प्रव.चा.१९) 3. वि [मत] माना हुआ, कहा गया। (प्रव.चा.१२,१६,२७,४५) **छस्सु वि काएसु वधकरो त्ति मदो।** (प्रव.चा.१६)

मदि स्त्री [मति] बुद्धि, मेधा। (निय.२२,लिं.३,४,स.२३)

मधु न [मधु] शहद, मधु, पराग। (प्रव.चा.२९) **-कर** पुं स्त्री [कर] मधुमक्खी, भ्रमर, भौंरा, शहद की मक्खी। (पंचा.११६)

मधुर/महुर वि [मधुर] मीठा, मिष्ठ, मधुर। (पंचा.१)

ममत्त न [ममत्व] ममता, मोह, प्रीति। (स.४१३, प्रव.ज्ञे.५८)

ममत्ति न [ममत्व] ममता, मोह, स्नेह। (निय.९९, भा.५७)

मय पुं न [मद] 1.मद, गर्व अहङ्कार। (बो.५, मो.४५, भा.१६) **-मत्त** वि [मत्त] मद से उन्मत। (भा.१६) 2. पुं [मृग] मृग, हरिण,कुरङ्ग। (भा.१४३) **-उल** पुं न [कुल] मृगसमूह। (भा.१४३) **-राअ** पुं [राजन्] सिंह, मृगराज। (भा.१४३)

मयर पुं [मकर] मगर-मच्छ। (भा.१५६) **-हर** पुं न [गृह] समुद्र, सागर। (भा.१५६)

मयलिय अक [मलिनित] देखो मइलिय। (भा.७०)

मर अक [मृ] मरना। (स.२५८, निय.१०१, प्रव.चा.१७)

मरण पुं न [मरण] मौत, मृत्यु। (पंचा. १८, स.२४८)

मरिअ वि [मृत] मरा हुआ। (भा.३२)

मल पुं न [मल] मैल,पाप,कलङ्क।(चा.६)**-द** वि [द]

मलदायक।(मो.४८) -**पुंज** पुं न [पुञ्ज] मलसमूह,मल का ढेर। (सू.६) -**मेलणासत्त** वि [मेलनासत्व] पापसमूह को नष्ट करने वाला। (स.१५७-१५९) -**रहिअ** वि [रहित] मलरहित, पापरहित। (मो.६)

मलिण वि [मलिन] मैला, पाप युक्त। (पंचा३४, चा.१७)

मल्लि पुं [मल्लि] उन्नीसवें जिनदेव का नाम, मल्लिनाथ। (ती.भ.५)

मसय पुं [मशक] मच्छर। (पंचा.११६)

मसाण न [श्मशान] मशान, मरघट। (बो.४१) -**वास** पुं [वास] श्मशान में रहना। (बो.४१)

मह वि [महत्] महान्, श्रेष्ठ। (पंचा.७१, प्रव.९२) -**त्थ** वि [अर्थ] महार्थ, श्रेष्ठ अर्थ। (प्रव.ज्ञे.१००) -**प्प** पुं [आत्मन्] महात्मा। (प्रव.९२, पंचा.७१) -**रिसि** पुं [ऋषि] महर्षि। (बो.५) -**व्वय** पुं न [व्रत] महाव्रत। (चा.३१)

महल्ल वि [दे] महान्, श्रेष्ठ। (चा.३१) साहंति जं महल्ला। (चा.३१)

महा वि [महत्] बड़ा, महान। (भा.१२, पंचा.१०५, शी.६) -**जस** पुं [यशस्] महान् यश।(भा.१८) -**दुक्ख** पुं न [दुःख] बहुत दुःख, अत्यधिक दुःख। (भा.२७) -**णरय** पुं [नरक] महानरक, सातवां नरक। (भा.८८) -**णुभाव** पुं [अनुभाव] महानुभाव। (भा.५३) -**फल** पुं न [फल] महाफल, विशाल फल। (शी.६) -**वसण** न [व्यसन] बहुत दुःख। (भा.१०१) -**वीर** वि [वीर] अधिक

पराक्रमी,महाशक्तिशाली,भगवान महावीर,चौबीसवें तीर्थङ्कर का एक नाम। (पंचा.१०५) **-सत्त** पुं न [सत्त्व] महान् जीव। (भा.१३२)

महि स्त्री [मही] पृथिवी, भूमि, धरती। (भा.१२५) **-रुह** पुं [रुह] वृक्ष, पेड़। (शी.३६) **-वीढ** पुं [पीठ] पृथ्वीतल। (भा.१२५)

महिअ वि [महित] पूजित, सम्मानित। (भा.१२३)

महिला स्त्री [महिला] स्त्री, नारी। (चा.२४, बो.५६) **-लोयण** न [लोकन] स्त्रियों को देखना। (चा.३५)

महुपिंग पुं [मधुपिङ्ग] मधुपिङ्ग, एक मुनि का नाम, जो निदान मात्र के कारण कल्याण नही कर सके। (भा.४५)

महेसि पुं [महर्षि] महर्षि, महामुनि। (निय.११७)

मा अ [मा] मत, नहीं,निषेधवाचक अव्यय। (पंचा.१७२, स.३०१)

माइ वि [मायिन्] मायाचारी, छलकपटी। (लिं.१२)

माण सक [मानय्] अनुभव करना, जानना। (मो.९३)

माण पुं न [मान] अहङ्कार, अभिमान, मानकषाय विशेष। (पंचा.१३५, निय.८१) **-उवजुत्त** वि [उपयुक्त] मान से सहित। (स.१२५) **-कसाअ/कसाय** पुं न [कषाय] मानकषाय। (भा.४४, ७८) माणकसाएहिं सयलपरिचत्तो। (भा.५६)

माणस न [मनस्] मन, अन्तःकरण, हृदय। (भा.१५)

माणसिय [मानसिक] मनसम्बन्धी,मानसिक। (भा.११)

माणिक्क न [माणिक्य] रत्न विशेष, माणिक। (भा.१४४)

माणुस पुं न [मानुष] मनुष्य, मानव। (पंचा.११३, प्रव.३) देवो माणुसो त्ति पज्जाओ। (पंचा.१८)

मादु स्त्री [मातृ] माता, माँ। (द्वा.३)

मादुवाह पुं स्त्री [मातृवाह] द्वीन्द्रिय जीव विशेष। (पंचा.११४)

माय/माया स्त्री [मातृ] माता, माँ। (भा.४०) मायभुत्तमण्णंते।

माया स्त्री [माया] छल, कपट, धोखा, एक कषाय विशेष। (पंचा.१३८, भा.१०६, निय.८१) **-चार** पुं [आचार] मायाचार, छल। **-वेल्लि** स्त्री [वल्ली] मोहरूपी लता। (भा.१५७)

मार सक [मारय्] मारना, ताड़ना। (स.२६१) मारिमि (व.उ.ए.स.२६१) मारेउ (वि./आ.प्र.ए.२६२)

मारण न [मारण] हिंसा, वध, ताड़ना। (निय.६८)

मारिद वि [मारित]मारा गया। (स.२५७, २५८)

मारुय पुं [मारुत्] हवा,वायु।(भा.१२२)**-बाहा** स्त्री [बाधा] वायु की बाधा, वायु की पीड़ा। (भा.१२२)

मास पुं [मास] महिना, दो पक्ष का मापक। (पंचा.२५, भा.३९)

मासा स्त्री [दे] मासिक धर्म। विज्जदि मासा तेसिं। (सू.३९)

माहण पुं स्त्री [माहन] श्रावक। (सू.२७)

माहप्प पुं न [माहात्मय] महत्त्व,गौरव,महिमा। (प्रव.५१,भा.१५)

मिच्च न [मात्र] मात्र, केवल। (स.३२४)

मिच्चु पुं [मृत्यु] मौत, मरण। (निय.६)

मिच्छ वि [मिथ्या] मिथ्या, असत्य, झूठा। (स.३४१, प्रव.चा.६७) **-उवजुत्त** वि [उपयुक्त] मिथ्यात्व से युक्त। (प्रव.चा.६७) **-त्त** न

[त्व] मिथ्यात्व, यथार्थ तत्त्व पर अश्रद्धा। (स.१९०, निय.९०, चा.६, मो.१५, भा.७३) मिच्छत्तं अण्णाणं । (स.८९) **-दोस** पुं न [दोष] मिथ्यादोष। (मो.९६) **-भाव** पुं [भाव] मिथ्याभाव। (मो.९७) **-वाण** वि [वान्] मिथ्यावान् असत्य बोलने वाला। (लिं.१०) चोराण मिच्छवाण य। (लिं.१०) **-सहाव** पुं [स्वभाव] मिथ्यास्वभाव, मिथ्याव्यवहार। (स.३४१)

मिच्छा अ [मिथ्या] असत्य, झूठ, मिथ्यात्वकर्म विशेष। (पंचा.३२, स.२६,११९,३१४, सू.७, द.२४) कम्मं कम्मत्तमिदि मिच्छा। (स.११९) **-इट्ठि/दिट्ठि** वि [दृष्टि] मिथ्यादृष्टि, जिनधर्म से भिन्न मत मानने वाला, सत्यार्थ पर श्रद्धा न रखने वाला। (स.८६, ३२८, द.२४, सू.७, मो.१५) **-णाण** न [ज्ञान] मिथ्याज्ञान, कुज्ञान। (मो.११) **-दंसण** पुं न [दर्शन] मिथ्यादर्शन। (पंचा.३२, निय.९१, चा.१७)

मित्त पुं न [मित्र] 1. मित्र, दोस्त, सखा। (भा.२७, बो.४६) ण य मुत्तो बंधवाई-मित्तेण। (भा.४३) 2. वि [मात्र] मात्र, प्रमाणविशेष, नापविशेष। (भा.४५) णियाणमित्तेण भवियणुय। (भा.४५)

मिस्सिद/मिस्सिय वि [मिश्रित] संयुक्त, मिला हुआ। (पंचा.५६, स.२२०, मो.१७) दुहिं मिस्सिदेहिं परिणामे। (पंचा.५६)

मुअ सक [मुच्] छोड़ना, त्यागना। (स.२००,४०९) मुअदि (व.प्र.ए.स.२००) मुइत्तु (सं.कृ.स.४०९) मुइत्ता (सं.कृ.स.ज.वृ.१२५)

मुंच देखो मुअ। (स.९७, निय.५८, प्रव.३२) मुंचेइ (भा.५) मुंचदि (व.प्र.ए.स.९७)

मुक्क वि [मुक्त] छोड़ा हुआ, परित्यक्त, रहित। (पंचा.७३, निय.४७, बो.११, भा.१५८)

मुक्ख पुं [मोक्ष] 1.मोक्ष, मुक्ति। (भा.११६, चा.२) मुक्खो जिणसासणे दिट्ठो। (भा.११६) 2.प्रमुख प्रधान।

मुच्च सक [मुच्] छोड़ना, त्यागना। (स.२८९), निय.९७, मो.१३) जोई मुच्चेइ मलदलोहेण। (मो.४८) मुच्चंति मोक्खमग्गे। (स.२६७)

मुच्छा स्त्री [मूर्च्छा] मोहासक्त, गृद्ध, आसक्त, मूर्च्छा, ममता, मोह। (पंचा.११३, प्रव.चा.६) मुच्छा देहादिएसु जस्स पुणो। (प्रव.चा.३९ **-गय** वि [गत] मूर्च्छा को प्राप्त हुआ। गब्भत्था माणुसा य मुच्छगया। (पंचा.११३)

मुज्झ अक [मुह] मोह करना, मुग्ध होना। (प्रव.चा.४३) मुज्झदि वा रज्जदि वा। (प्रव.चा.४३) मुज्झदि (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.८३)

मुण सक [मुण/ज्ञा] जानना, प्रतिज्ञा करना। (पंचा.१४५, स.३१, प्रव.८) अप्पाणं मुणदि जाणयसहावं। (स.२००) मुणदि/मुणइ (व.प्र.ए.स.१८५) मुणसु (वि./आ.म.ए.स.१२०) मुणिऊण (सं.कृ.पंचा.१४५, भा.११०) मुणेदव्व/मुणेयव्व (वि.कृ.पंचा.७४, स.२२९-२३६, प्रव.८, द.१९, सू.७, बो.३९, मो.३४) सम्मादिट्ठी मुणेयव्वो। (स.२३१) मुणंत (व.कृ.स.३४१)

मुणिद/मुणिय वि [मुणित] जाना हुआ। (बो.६)

मुणि पुं [मुनि] श्रमण,साधु,ऋषि,मुनि। (स.२८, निय.११६, बो.४३, भा.१७) जो कर्म से रहित ज्ञाता एवं दृष्टा है, वह मुनि है। तया विमुत्तो हवइ, जाणओ पासओ मुणी। (स.३१५) **-पवर** वि [प्रवर] श्रेष्ठ मुनि। (भा.१७) खमाअ परिमंडिओ य मुणिपवरो। (भा.१०८) **-वर** वि [वर] उत्तम मुनि,श्रेष्ठमुनि। (बो.६, निय.९२, भा.२४) मुणिवरवसहा णि इच्छंति। (बो.४३)

मुणिंद पुं [मुनीन्द्र] श्रेष्ठ मुनि, उत्तम साधु। (भा.१५९)

मुत्त न [मूत्र] 1.मूत्र, प्रस्रवण, पेशाब। (भा.३९, द्वा.४५) 2. वि [मूर्त] मूर्त्त, रूपवाला, आकारवाला। (पंचा.९९, निय.३५, प्रव.ज्ञे.३९) मुत्ता इंदियगेज्झा। (प्रव.ज्ञे.३९) मुत्तं पुग्गलदव्वं। (पंचा.९७) 3. वि [मुक्त] मुक्ति को प्राप्त, बन्धन रहित। (पंचा.५९, भा.४३) भावविमुत्तो मुत्तो। (भा.४३)

मुत्त सक [मुच् अपभ्रंश] छोड़ना। (भा.३६) मुत्तूणट्ठपएसा। (भा.३६) मुत्तूण (सं.कृ.भा.१४१)

मुत्ति स्त्री [मूर्ति] 1. रूप, आकार, बिम्ब, सदैव विद्यमान। (पंचा.१३४, प्रव.ज्ञे.४२, निय.३७) **-गद** वि [गत] मूर्तिगत, आकारयुक्त। (प्रव.५५) **-परिहीण** वि [परिहीन] अमूर्तिक, रूप एवं आकार रहित। (पंचा.९७) **-प्पहीण** वि [प्रहीन] आकाररहित। (प्रव.ज्ञे.४२) **-भव** वि [भव] मूर्त्तिरूप हुआ, सदैव विद्यमान। (पंचा.७७) **-विरहिद/विरहिय** वि [विरहित] मूर्ति रहित, आकारहीन। (पंचा.१३४, निय.३७) 2. स्त्री

[मुक्ति] मोक्ष, निर्वाण, स्वतंत्र। (भा.१०४) तत्तो मुत्तिं ण पावंति।

मुद वि [मृत] मरा। (द्वा.२७) जादो मुदो य बहुसो।

मुद्दा स्त्री [मुद्रा] अङ्ग-विन्यास,आकृति,वेश। (बो.१८) मुद्दा इह णाणाए जिणमुद्दा एरिसा भणिया। (बो.१८)

मुय सक [मुच्] छोड़ना, त्याग करना। (पंचा.१०३, स.३१७, भा.१३७) मुयदि/ मुयइ (व.प्र.ए.स.३१७, भा.१३७) मुयदि भवं तेण सो मोक्खो। (पंचा.१५३)

मुस्स सक [मुष्] लूटना, अपहरण करना, उठा लेना। (स.५८) ण य पंथो मुस्सदे कोई। (स.५८) मुस्सदि/मुस्सदे (व.प्र.ए.स.५८) मुस्संत (व.कृ.स.५८)

मुह न [मुख] मुँह, वदन, चेहरा,मुख। (निय.८) **-उग्गद** वि [उद्गत] मुख से निकला हुआ। तस्स मुहुग्गदवयणं। (निय.८)

मुह अक [मुह्] मोह करना, मोहित होना, मूढ बनना। (प्रव.ज्ञे.६२) ण मुहदि सो अण्णदवियम्हि। (प्रव.ज्ञे.६२)

मुहिद वि [मुहित] मोहित, मोही, विमूढ। तेसु हि मुहिदो रत्तो। (प्रव.४३)

मुहुत्त पुं न [मुहूर्त्त] दो घड़ी का समय, अड़तालीस मिनिट का वाचक। (भा.२९, मो.५३) खवेइ अंतोमुहुत्तेण। (मो.५३)

मूअ वि [मूक] गूंगा, वाक्शक्ति से रहित। (द.१२)

मूढ वि [मूढ] मूर्ख, मुग्ध, ज्ञानहीन, अज्ञानी, नासमझ। (स.२५०, प्रव.८३, चा.१७, मो.८) सो मूढो अण्णाणी। (स.२४७, २५०,

२५३) **-जीव** पुं [जीव] अज्ञानी जीव। (चा.१७) बज्झंति मूढजीवा। **-दिट्ठि** स्त्री [दृष्टि] मूढदृष्टि,मन्द बुद्धि की दृष्टि। (मो.८)अज्झवसिदो मूढदिट्ठीओ।(मो.८)**-मइ/मदि** स्त्री [मति] ज्ञानरहित बुद्धि,मन्द बुद्धि,भ्रमित बुद्धि।(स.६४, २५९) एसो दे मूढमई। (स.२५९)

मूल न [मूल] 1.जड़, वृक्ष के नीचे का भाग। (द.१०,११, भा.१०३, ११३) जह मूलम्मि विणट्ठे। 2. आधार, नींव, स्त्रोत, उत्पत्ति स्थान। मूलविणट्ठा ण सिज्झंति। (द.१०) तह जिणदंसणमूलो। (द.११) 3. मूलगुण, व्रत विशेष। (प्रव.चा.९) **-गुण** पुं न [गुण] मूलगुण। (प्रव.चा.९,१४, मो.९८) **-च्छेद** वि [छेद] मूल का घात। (प्रव.चा.३०) मूलच्छेदं जधा ण हवदि। (प्रव.चा.३०)

मेत्तअ वि [मात्रक] मात्र, परिमाण, मर्यादा विशेष। (भा.३३) परमाणुपमाणमेत्तओ णिलओ।(भा.३३)

मेरु पुं [मेरु] मेरु, सुमेरुपर्वत, पर्वत विशेष। (चा.२०) **-मत्त** न [मात्र] मेरुप्रमाण। (चा.२०) संसारिमेरुमत्ताणं।

मेल सक [मेलय्] मिलाना, मिश्रण करना। (पंचा.७) मेलंता वि य णिच्चं। मेलंत (व.कृ.पंचा.७)

मेहुण न [मैथुन] रतिक्रिया, संभोग। (भा.११२) **-सण्णा** स्त्री [संज्ञा] मैथुन संज्ञा। (भा.९८) मेहुणसण्णासत्तो।

मोक्ख पुं [मोक्ष] मुक्ति, निर्वाण। (पंचा.१५३, स.१८, निय.१३६ द.२१, सू१०, चा.३९, बो.१९) जो संवर से युक्त हो कर्मों की

निर्जरा करता है तथा वेदनीय एवं आयुकर्म को नष्ट कर नाम, गोत्र पर्याय का परित्याग करता है, उसको मोक्ष होता है। (पंचा.१५३) **-उवाअ** पुं [उपाय] मोक्ष का उपाय, मुक्ति का साधन। (निय.२,४) मग्गो मोक्खउवाओ। **-काम** पुं [काम] मोक्ष की अभिलाषा, मोक्ष की आकांक्षा। (स.१८) सो चेव दु मोक्खकामेण। (स.१८) **-गय** वि [गत] मोक्ष को प्राप्त हुआ। (निय.१३५) **-पह** पुं [पथिन्] मोक्षपथ, मुक्तिमार्ग। (निय.१३६, स.४११, ४१४) मोक्खपहे अप्पाणं। (निय.१३६) **-मग्ग** पुं [मार्ग] मोक्षमार्ग। (पंचा.१६०, स.२६७, द.११, सू.२०, बो.२०-२२, चा.३९) दंसणणाणचरित्ताणि मोक्खमग्गोत्ति। (पंचा.१६४) जो मुनि पाँच महाव्रतों से युक्त एवं तीन गुप्तियों सहित होता है,वही संयत है और वही निर्ग्रन्थ मोक्षमार्ग है। (सू.२०) **-हेउ** पुं [हेतु] मोक्ष का कारण। (स.१५४) मोक्खहेउं अजाणंता। (स.१५४)

मोण न [मौन] वाणी का संयम, मूकभाव। (निय.१५५, सू.२१, मो.२८) मोणं वा होइ वचिगुत्ति। (निय.६९) **-व्वय** पुं न [व्रत] मौनव्रत, वाणी के संयम की प्रतिज्ञा। (निय.१५५, मो.२८) मोणव्वएण जोई। (मो.२८)

मोत्त वि [मूर्त] रूपवाला, आकारवाला। (निय.३७) पोग्गलदव्वं मोत्तं। (निय.३७)

मोत्त सक [मुच्] छोड़ना, त्यागना। (स.१५६, निय.३४, भा.१०६) मोत्तूण अणायारं। (निय.८५) मोत्तूण

(सं.कृ.स.२०३) मोत्तुं (हे.कृ.मो.२७)

मोस पुं न [मृषा] झूठ, असत्य। (निय.५७, चा.२४) **-भासा** स्त्री [भाषा] असत्यवाणी, मिथ्यावचन। (निय.५७) मोसभासपरिणामं। (निय.५७)

मोह पुं [मोह] मूढ़ता, अज्ञानता, अज्ञता, आसक्ति। (पंचा.१४८, स.३२, प्रव.७, निय.१७९, भा.१५७, बो.४४, चा.१५, मो.१०) मणुयाणं वड्डए मोहो। (मो.१०) **-अंधयार** पुं न [अन्धकार] मोहरूपी अन्धकार। (निय.१४५) **-उदय** पुं [उदय] मोह का उदय। (मो.११) मोहोदएण पुणरवि। (मो.११) **-उवचय** पुं [उपचय] मोह की वृद्धि। (प्रव.८६) खीयदि मोहोवचयो। (प्रव.८६) **-क्खय** पुं [क्षय] मोह का नाश,मोह का क्षय। सो मोहक्खयं कुणदि। (प्रव.८९) **-क्खोह** पुं [क्षोभ] मोह और क्षोभ। यहां क्षोभ का अर्थ राग-द्वेष है, जिनसे कि जीव क्षुभित-दुःखित होता है। (प्रव.७, भा.८३) मोहक्खोहविहीणो, परिमाणो अप्पणो हु समो। (प्रव.७) **-गंठी** पुं स्त्री [ग्रन्थि] मोह की गाँठ। (प्रव.ज्ञे.१०३) **-जुत्त** वि [युक्त] मोह से संयुक्त, मोहासक्त। (स.८९) परिणामा तिण्णि मोहजुत्तस्स। (स.८९) **-णिम्ममत्त** न [निर्ममत्व] मोह से रहित, मोहासक्ति से रहित। (स.३६) जो ऐसा जानता है कि मोह से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है, मैं तो एक उपयोग रूप ही हूं। उसे आगम के जानने वाले मोह से निमर्मत्व कहते हैं। (स.३६) **-दिट्ठि** स्त्री [दृष्टि] मोहयुक्त दृष्टि, दर्शनमोह। (प्रव.९२) जो णिहदमोहदिट्ठी। **-दुग्गंठि** पुं स्त्री

[दुर्ग्रन्थि] मोह की दुष्ट गाँठ,मोह का कठिन बन्धन। (प्रव.ज्ञे.१०२) खवेदि सो मोहदुग्गंठी। (प्रव.ज्ञे.१०२) **-पदेस** पुं [प्रद्वेष] मोह एवं द्वेष। (प्रव.ज्ञे.५७) मोहपदोसेहिं कुणदि जीवाणं। **-बहुल** वि [बहुल] मोह की अधिकता,मोह से घिरा। (पंचा.११०)देंति खलु मोहबहुलं।(पंचा.११०)**-मयगारव** पुं न [मदगौरव] मोह,मद और अहंकार।(भा.१५८)मोहमयगारवेहिं य।(भा.१५८)**-महातरु** पुं [महातरु] मोहरूपी महावृक्ष। (भा.१५७) मोहमहातरुम्मि आरूढा। (भा.१५७) **-मुक्क** वि [मुक्त] मोह से रहित। (बो.४४) **-रअ** पुं न [रजस्] मोहरूपी रज, मोहरूपी धूल। (प्रव.१५) **-रहिअ** वि [रहित] मोहरहित। (चा.१९)**-संछण्ण** वि [संछन्न] मोह से ढँका। (प्रव.७७, पंचा.६९) संसारमोहसंछण्णो। (प्रव.७७)

मोहणिय न [मोहनीय] मोहनीय कर्म, कर्मो का एक भेद। (भा.१४८)

मोहिअ/मोहिद/मोहिय वि [मोहित] मोहयुक्त, मोह करने वाला। (स.२३, भा.४०, मो.७८, शी.१३)

य

य अ [च] हेतु सूचक अव्यय, और, तथा, एवं, जो, ऐसा, जिसतरह, पादपूर्ति अव्यय। (स.१३, प्रव.३, निय.२, ९, ३४, द.८,९, बो.४, मो.१) बुद्धी ववसाओ वि य । (स.२७१) तस्स य किं दूसणं होइ। (निय.१६६)

यं अ [यत्] जो, जो कि। (स.२०१) यं तु सव्वागमधरो वि।
याण सक [ज्ञा] जानना। (स.३९०-४०१) जम्हा धम्मो ण याणए किंचि। (स.३९९)

र

रअ वि [रत] अनुरक्त, आसक्त, लीन। (मो.११, भा.३१) अप्पा अप्पम्मिरओ। (भा.३१)
रइ स्त्री [रति] कामक्रीड़ा, सुरत, मैथुन, रति, नोकषाय का एक भेद। (नियं.६, मो.१६) जो दु हस्सं रई। (निय.१३१)
रइय वि [रचित] बनाया हुआ, निर्मित। (चा.४५) रइयं चरणपाहुडं चेव। (चा.४५)
रउरव वि [रौरव] भयंकर, घोर, रौरव नामक नरक। (भा.४९) पडिओ सो रउरवे णरए। (भा.४९)
रंग सक [रङ्गय्] रंगना, मोहित करना। रंगिज्जदि अण्णेहिं। (स.२७८) रंगिज्जदि (व.प्र.ए.)
रंज सक [रञ्जय्] रंग लगना, राग युक्त होना, अनुरक्त होना। (प्रव.ज्ञे.५९) कम्मेहिं सो ण रंजदि।
रंजण न [रञ्जन] खुश करना,प्रसन्न।(भा.९०)माजणरंजन-करणं। (भा.९०)
रक्ख सक [रक्ष्] रक्षण करना, पालन करना। (लिं.५, शी.१२) संमूहदि रक्खेदि य। (लिं.५) रक्खेदि (व.प्र.ए.लिं.५) रक्खंताणं (व.कृ.ष.ब.शी.१२) सीलं रक्खंताणं।

रक्खणा स्त्री [रक्षणा] संरक्षण, स्थितीकरण, सम्यक्त्व का एक अङ्ग। (चा.११) उवगूहण रक्खणाए य। (चा.११)

रज पुं न [रजस्] धूल, रज, पराग। (पंचा.३४) रजमलेहिं।

रयअ वि [रजक] रजयुक्त, धूलधूसरित। (सू.२१८) णो लिप्पदि रजएण। (स.२१८)

रज्ज अक [रञ्ज्] अनुराग करना, आसक्त होना। (स.१५०,प्रव.चा.४३,शी.१०) रज्जदि/रज्जेदि (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.८३,८४) रज्ज (वि./आ.म.ए.स.१५०) रज्जंति (व.प्र.ब.शी.१०)

रज्जु स्त्री [रज्जु] राजू, लम्बाई नापने का एक माप। (भा.३६) रज्जूणं लोयखेत्तपरिमाणं।

रट्ठ न [राष्ट्र] देश, जनपद। (स.३२५) गामविसयणयररट्ठं।

रण्ण न [अरण्य] वन, जङ्गल, अटवी। (निय.५८) गामे वा णयरे वा, रण्णे वा। (निय.५८)

रत्त पुं [रक्त] 1. लाल, लोहित। (शी.१) **-उप्पल** न [उत्पल] लालकमल। रत्तुप्पलकोमलस्समप्पायं। (शी.१) 2. वि [रक्त] रङ्गा हुआ, अनुरक्त, रागयुक्त। (पंचा.१४७,निय.२१९, प्रव.४३) रत्तो बंधदि कम्मं। (स.१५०) उववासादिसु रत्तो। (प्रव.६९) 3. पुं [रक्त] खून, लहू। **-क्खय** पुं [क्षय] दमा, राजयक्ष्मा, रक्तचाप का कम होना। (भा.२५) विसवेयणरत्तक्खय। (भा.२५)

रत्ति स्त्री [रात्रि] रात, निशा। (द्वा.८८) **-दिव** न [दिन] रातदिन,

अहर्निश। (द्वा.८८)

रथ/रह पुं न [रथ] रथ, यान विशेष। (स.९८)

रद देखो रअ। (स.२०६) एदम्हि रदो णिच्चं। (स.२०६)

रदण पुं न [रत्न] रत्न, मणि, बहुमूल्य पत्थर विशेष। (प्रव.३०, शी.२८) रदणमिह इंदणीलं। (प्रव.३०) **-भरिद** वि [भरित] रत्नभरित, रत्नों से भरा हुआ। (शी.२८) उदधी व रदण-भरिदो। (शी.२८)

रदि देखो रइ। (पंचा.१४८) जेसिं विसएसु रदी। (प्रव.६४)

रम अक [रम्] क्रीड़ा करना, रमण करना। (प्रव.६३,७१) रमंति विसएसु रम्मेसु। (प्रव.६३)

रम्म वि [रम्य] सुन्दर, मनोहर, रमणीय। (प्रव.६१)

रय पुं न [रजस्] 1. रेणु, धूली, रज। (स.२४१,२४६) **-बंध** पुं [बन्ध] रज का बन्ध, धूल से युक्त। तम्हि णरे तेण तस्स रयबंधो। (स.२४०) 2. वि [रत] देखो रअ। (मो.७९) आधाकम्मम्मि रया।

रयण पुं न [रत्न] रत्न, माणिक्य आदि रत्न, पत्थर विशेष। (निय.७४, द.३३, भा.८२) सम्मद्दंसणरयणं। (द.३३) **-त्त** वि [त्व] रत्नत्व, रत्नपना। सदगुणवाणा सुअत्थि रयणत्तं। (बो.२२) **-त्तय** न [त्रय] रत्नत्रय, तीन रत्नों का समुदाय। (निय.७४, भा.३०, मो.३३) सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र ये तीन रत्नत्रय हैं। तं रयणत्तय समायरह। (भा.३०) **-त्तयजुत्त** वि [त्रययुक्त] रत्नत्रय से युक्त। जो

रयणत्तयजुत्तो। (मो.४४) -**त्तयसंजुत्त** वि [त्रयसयुक्त] रत्नत्रय से युक्त, रत्नत्रय से परिपूर्ण।(निय.७४, मो.३३) रयणत्तयसंजुत्ता। (निय.७४)

रस पुं न [रस] 1.रस, जिह्वा का विषय। (पंचा.११४, स.६०, प्रव.५६,निय.२७,भा.२६,लिं.१२) एयरसवण्णगंधं। (पंचा.८१) जाणंति रसं फासं। (पंचा.११४) -**अवेक्खा** स्त्री [अपेक्षा] रस की अपेक्षा, रस की चाह। (प्रव.चा.२९) -**गिद्धि** स्त्री [गृद्धि] रस की गृद्धि, रस की आसक्ति। (लिं.१२) भोयणेसु रसगिद्धिं। 2. रस, रसायनादि,धातु विशेष। -**विज्जजोय** पुं [विद्यायोग] रस विद्या का योग, रस विद्या का सम्बन्ध। (भा.२६) रसविज्जजोयधारण। (भा.२६)

रसण न [रसन] जिह्वा, जीभ। (स.३७८)-**विसयमागय** वि [विषयमागत] रसना इन्द्रिय के विषय को प्राप्त। (स.३७८) रसविसयमागयं तु रसं।

रहिअ/रहिद/रहिय वि [रहित] परित्यक्त, वर्जित,हीन। (निय.६५,प्रव.५९,बो.४५,भा.१२२) समदा रहियस्स समणस्स। (निय.१२४) तह रायाणिलरहिओ। (भा.१२२) -**कसाअ** पुं [कषाय]कषायरहित। (प्रव.चा.२६) जुत्ताहारविहारो, रहिदकसाओ हवे समणो। (प्रव.चा.२६)

रा अक [रञ्ज्] अनुराग करना, आसक्त होना। (स.२७९) राइज्जदि अण्णेहिं दु। राइज्जदि (व.प्र.ए.स.२७९)

राइ वि [रागिन्] रागयुक्त, रागी। (मो.९३) राई देवं असंजयं वंदे

। (मो.९३)

राग पुं [राग] राग,आसक्ति,प्रेम (पंचा.१६७,स.३७०,प्रव.१४, नियं.६, मो.५०) जस्स ण विज्जदि रागो। (पंचा.४६) **-प्पजह** वि [प्रजह] राग को छोड़ने वाला। (स.२१८) णाणी रागप्पजहो। **-रहिद** वि [रहित] रागरहित, आसक्ति रहित। (प्रव.ज्ञे.८७) मुच्चदि कम्मेहिं रागरहिदप्पा।

राज पुं [राजन्] राजा, नृप, नरेश। (नियं.६७)

राध पुं [राध] इष्ट, उचित, सिद्ध। (स.३०४) संसिद्धि, सिद्ध, साधित और अपराधित ये राध के एकार्थवाची हैं। (स.३०४) शुद्ध आत्मा की सिद्धि अथवा साधन को राध कहते हैं।

राम पुं [राम] बलभद्र, बलदेव। (भा.१६०) चक्कहररामकेसव।

राय देखो राज। (स.२२४,२२६) तो सो वि देदि राया। (स.२२४)

राय देखो राग। (स.१४७,प्रव.चा.४७,चा.२९,भा.७२,नियं.१२० बो.५) रायम्हि य दोसम्हि। (स.२८२) रायम्हि (स.ए.) **-करण** न [करण] राग की क्रिया, राग का आश्रय। (स.१४८) संसग्गं रायकरणं च। **-चरिय** न [चरित] राग की चेष्टा, राग का आचारण, राग से सेवित। (प्रव.चा.४७) ण णिंदया रायचरियम्मि। **-संगसंजुत्त** वि [सङ्गसंयुक्त] रागरूप, परिग्रह से युक्त। (भा.७२) जे रायसंगसंजुत्ता। (भा.७२)

राय पुं [रात्र] रात्रि, रात। (चा.२२) **-भत्त** पुं न [भक्त] रात्रि, भोजन, रात्रि में आहार। पोसहसच्चित्तरायभत्ते य। (चा.२२)

रासि पुं स्त्री [राशि] समूह, ढेर। (भा.२०) हवदि य गिरिसमधिया

रासी। (भा.२०)

रिट्ठणेमि पुं [अरिष्टनेमि] बाईसवें तीर्थङ्कर, नेमिनाथ। (ती.भ.५)

रिसि पुं [ऋषि] मुनि, साधु। (भा.१४३) रिसिसावयदुविहधम्माणं। (भा.१४३)

रुइ स्त्री [रुचि] रुचि, प्रीति। (मो.३८) तच्चरुई सम्मत्तं।

रुंध सक [रुध्] रोकना, अटकना। (स.१८७) अप्पाणमप्पणा रुंधिऊण।

रुंभ देखो रुंध। (भा.१४१) रुंभहि मणु जिणमग्गे।

रुक्ख पुं न [वृक्ष] 1. पेड़, पादप, वृक्ष। (भा.१२१) झाणकुठारेहिं भवरुक्खं। 2. वि [रूक्ष] नीरस, सूखा, स्निग्धता रहित। (बो.५१) सरीरसंकारवज्जिया रुक्खा।

रुच्च सक [रुच्] पसन्द, अच्छा लगना, प्रिय लगना। (मो.९६) जं ते मणस्स रुच्चइ।

रुजा स्त्री [रुजा] बीमारी, रोग, व्याधि। (निय.६) रागो मोहो चिंता जरा रुजा मिच्चू।(निय.६)

रुण्ण न [रुदित] रोदन,रोना। (भा.१९) रुण्णाण णयणणीर।

रुद्द वि [रौद्र] दारुण, भयङ्कर, भीषण, ध्यान का एक भेद। (पंचा. १४०,निय.१२९) इंदियवसदा य अत्तरुद्दाणि। (पंचा.१४०) जो दु अट्टं च रुद्दं च । (निय.१२९)

रुहिर पुं न [रुधिर] रुधिर, रक्त, खून। (बो.३७,भा.३९)

रूढ वि [रूढ] परंपरागत, रूढिसिद्ध। (प्रव.चा.५२) तण्हाए वा समेण वा रूढं।

रूव पुं न [रुप] रूप,आकार,आकृति,पुद्‌गल का एक गुण। (पंचा. ११६,स.३९२,प्रव.२९, निय.२७,द.१९,चा.३६,भा.२२, बो.१२, शी.१५) रूवाणि य चक्खूणं। (प्रव.२८) -**जाद** वि [जात] रूप से उत्पन्न,रूप को प्राप्त।(प्रव.चा.५) जधजादरूवजादं। -**धर** वि [धर] रूपधारी, वेशधारण करने वाला।जादो जधजादरूवधरो।(प्रव.चा.४)-**त्थ** वि [स्थ] रूपार्थ, रूपस्थ।रूवत्थं सुद्धत्थं।(बो.५९)-**विरूव** पुं न [विरूप] रूप और विरूप।(शी.१८)-**सिरी** स्त्री [श्री] रूप की शोभा। रूवसिरिगव्विदाणं।(शी.१५)

रूवि वि [रूपिन्] रूपवाला,रूपी।(स.६३)-**त्त** वि [त्व] रूपवान्, रूपीपना। जीवा रूवित्तमावण्णा। (स.६३)

रूस अक [रूष्] गुस्सा करना,क्रोध करना,रोष करना। (स.३७३) ताणि सुणिऊण रूसदि। रूसदि (व.प्र.ए.स.३७३) रूससि (व.म.ए.स.३७४)

रेणु पुं न [रेणु] रज, धूली। (स.२३७) -**बहुल** वि [बहुल] अत्यन्त धूलवाला, प्रचुरधूलवाला। रेणुबहुलम्मि ठाणे। (स.२४२)

रोग पुं [रोग] बीमारी, व्याधि। (प्रव.चा.५२) रोगेण वा छुधाए।

रोच सक [रोचय्] रुचना, अच्छा लगना।(स.२७५, भा.८४) सद्दहदि य पत्तेदि य रोचेदि य । (स. २७५)

रोध पुं [रोध] रुकावट,रोक,संवर। (पंचा.१६८) रोधो तस्स ण विज्जदि।

रोय देखो रोग। (निय.४२,भा.३७) मनुष्य के शरीर के एक-एक

अंगुल प्रदेश में छियानवें-छियानवें रोग होते हैं, शेष समस्त शरीर में कितने कहे गये , यह कौन कहे? (भा.३७) **-ग्गि** पुं स्त्री [अग्नि] रोग रूपी आग। रोयग्गी जा ण डहइ देहउडिं। (भा.१३१)

रोस पुं [रोष] गुस्सा, क्रोध, द्वेष। (निय.६) छुहतण्हभीरुरोसो।

रोह अक [रुह्] उत्पन्न होना, उगना। ण वि रोहइ अंकुरो य महिवीढे। (भा.१२५)

ल

लंबिय वि [लम्बित] लटका हुआ। लंबियहत्थो गलियवथो। (भा.४)

लक्ख सक [लक्षय्] जानना, पहचानना, देखना। (चा.१२,बो.२०) तह णवि लक्खदि लक्खं। (बो.२०) लखदि (व.प्र.ए.) लक्खिज्जइ (व.प्र.ए.चा.१२) लक्खंतो (व.कृ.प्र.ए.)

लक्ख बि [लक्ष्य] 1.उद्देश्य, निशाना, देखने योग्य। (बो.२०) तह णवि लक्खदि लक्खं। 2.पुं न [लक्ष] लाख,संख्या विशेष। (भा.१२०) चउरासीगुणगणाण लक्खाइं।

लक्खण पुं न [लक्षण] वस्तुस्वरूप, भेदक चिन्ह, संकेत, विशेषता। (स.६४,प्रव.ज्ञे.५,चा.१२,बो.३७) एवं पुग्गलदव्वं जीवो तह लक्खेणेण मूढमदी। (स.६४)

लज्जा स्त्री [लज्जा] लज्जा, शरम, अदब। (द.१३) लज्जगारवभएण।

लच्छी स्त्री [लक्ष्मी] सम्पत्ति, वैभव। (भा.७५)

लद्ध सक [लभ्] प्राप्त करना। (निय.१५७,द.३४) लद्धूण णिहिं एक्को। (निय.१५७)

लद्ध वि [लब्ध] प्राप्त, प्रत्यक्ष किया, उपलब्ध। (प्रव.६१, पंचा.१०६)-**बुद्धि** स्त्री [बुद्धि] बुद्धि को प्राप्त। भव्वाणं लद्धबुद्धीणं। -**सहाव** पुं [स्वभाव] स्वभाव को प्राप्त। (प्रव.१६, प्रव.ज्ञे.२६) तह सो लद्धसहावो। (प्रव.१६)

लद्धि स्त्री [लब्धि] 1. सामर्थ्य, क्षयोपशम, योग आदि से उपलब्ध होने वाली शक्ति। (निय.१५६, मो.२४) णाणाविहं हवे लद्धी। (निय.१५६) काल, करण, उपदेश, उपशम और प्रायोग्य ये पाँच लब्धियाँ हैं। कालाईलद्धीए, अप्पा परमप्पओ हवदि। (मो.२४) 2.लाभ, प्राप्ति, उपलब्धि। पंससणिद्दा अलद्धलद्धि समा। (बो.४६)

लब्भ सक [लभ्] प्राप्त करना, उपलब्ध करना। (पंचा.१०२, भा.७५) लब्भंति दव्वसण्णं। (पंचा.१०२)

लभ सक [लभ्] प्राप्त करना, उपलब्ध करना। (प्रव.ज्ञे १९, भा.८७) पाडुब्भावं सदा लभदि। (प्रव.ज्ञे.१९) लभदि (व.प्र.ए.) लभेह (वि./आ.म.ब.भा.८७)

लय पुं [लय] नाश, तिरोभाव, विनाश। (प्रव.८०) मोहो खुल जादि तस्स लयं। (प्रव.८०)

लव सक [लप्] बोलना, कहना। (भा.३८)

लविअ वि [लपित] कथित, उपदिष्ट। (भा.३९)

लवण न [लवण] नमक, लवण। (शी.९) खंडियलवणलेवेण।

लह देखो लभ। (पंचा.२८,स.१८६,प्रव.७९,द.५,सू.६,चा.४०, भा.७२, बो.१९, मो.१२) लहदि (व.प्र.ए.पंचा.२८) एवं लहदि त्ति णवरि ववदेसं। (स.१४४) लहइ/लहेइ (व.प्र.ए.स.१८९,सू.१६) लहंति/लहंते (व.प्र.ब.चा.४०,४२) लहिदुं (हे.कृ.स.२०४)

लहु वि [लघु]1. छोटा, थोड़ा, अल्प। (प्रव.चा.७५,भा.६०) लहुणा कालेण पप्पोदि। (प्रव.चा.७५) 2.शीघ्र जल्दी। (चा.४५) लहु चउगइं चइऊण।

लिंग न [लिङ्ग] चिन्ह, लक्षण, प्ररूप, प्रतीक, वेश। (पंचा.६, स.४०८,प्रव.८५,सू.१९,द.१८,शी.२ भा.६) णाणंतरिदेहिं लिंगेहिं।(पंचा.१२३) जिणलिंगं धारंतो।(लिं.१४)-**ग्गहण** न [ग्रहण] वेशधारण,चिह्नग्रहण। (प्रव.चा.१०,शी.५) लिंगग्गहणं च दंसणविसुद्धं। (शी.६)-**दंसण** न [दर्शन] लिङ्ग दर्शन। (द.१८) लिंगदंसणं णत्थि। -**पाहुड** न [प्राभृत] लिङ्गप्राभृत, ग्रन्थविशेष। (लिं.२२) इय लिंगपाहुडमिणं। -**मत्त** पुं [मात्र] लिङ्ग मात्र। (लिं.२) -**रूव** पुं [रूप] लिङ्ग रूप,मुनिवेश।(लिं.४,७,१५) पुढवीओ खणदि लिंगरूवेण। (लिं.१५) -**विवाई** वि [व्यवायी] वेशधारण कर छल करने वाला, मुनिवेश को नष्ट करने वाला। (लिं.१२) मायी लिंगविवाई।

लिंगि वि [लिङ्गिन्] धर्म के वेश को धारण करने वाला,साधु। (सू.१३,भा.४८,लिं.३) पावदि लिंगी णरयवासं। (लिं.११)

-भाव पुं [भाव] लिङ्गीभाव। उवहसदि लिंगिभावं। (लिं.३) **-रूव** पुं [रूप] लिङ्गी का रूप।(लिं.६)

लिप्प अक [लिप्] लिप्त होना, आसक्त होना।(सू.२४१, भा.१५३)लिप्पदि कम्मरएण दु।(स.२१९) लिप्पदि (व.प्र.ए.स.२१९) लिप्पंति (व.प्र.ब.स.२७०)

लुक्ख पुं [रूक्ष] रूक्ष,रूखा,स्निग्धता से रहित। (प्रव.ज्ञे.७१) णिद्धो वा लुक्खो वा। (प्रव.ज्ञे.७१) णिद्धा वा लुक्खा वा। (प्रव.ज्ञे.७३) **-त्त** वि [त्व] रूक्षत्व, रूक्षता। (प्रव.ज्ञे.७२)

लुण सक [लू] छेदना, काटना। (भा.१५७)

लुद्ध वि [लुब्ध] लोभी, लम्पट, लोलुप। (शी.२१) **-विस** पुं [विष] लोभी को विष। (शी.२१) जह विसयलुद्धविसदो।

लुल्ल वि [दि] लूला, खञ्ज, लंगड़ा। ते होंति लुल्लमूआ। (द.१२)

ले सक [ला] लेना, ग्रहण करना। (सू.१८, मो.२१) जह लेइ अप्पबहुयं। (सू.१८) लेवि (अप.सं.कृ.मो.२१)

लेव पुं [लेप] लेपन, उवटन, मालिश, मल्हम। (शी.९,प्रव.चा. ५१)कुव्वदु लेवो जदि वियप्पं। (प्रव.चा.५१)

लेस्सा स्त्री [लेश्या] आत्मा का परिणाम विशेष। कषाय से अनुरञ्जित योग की प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं। संजमदंसणलेस्सा। (बो.३२) कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, और शुक्ल ये छह लेश्यायें हैं।

लोअ/लोग पुं [लोक] 1.लोक, संसार, जगत्। जहां जीव, अजीव, धर्म, अधर्म, आकाश, और काल ये छह द्रव्य पाये जाते हैं।

(पंचा.३,प्रव.६१,द्वा.२) सो चेव हवदि लोओ। (पंचा.३) -**उत्तम** वि [उत्तम] लोक में उत्तम। (ती.भ.७) -**ओगाढ** वि [अवगाढ] लोक में व्याप्त। (पंचा.८३) लोगोगाढं पुट्ठं। (पंचा.८३) -**सहाव** लोकस्वभाव। लोगसहावं सुणंताणं। (पंचा.९५)2.लोग,मनुष्य, जन। (स.५८,१०६) लोगा भणंति ववहारी। (स.५८)

लोगिग वि [लौकिक] लोकसम्बन्धी, सांसारिक (प्रव.चा.५३,६८,६९) -**जण** पुं [जन] लौकिक मनुष्य। (प्रव.चा.५३,६८)

लोच पुं [लौच] केशों का निकलना, उखाड़ना। (प्रव.चा.८)

लोभ पुं [लोभ] लालच, तृष्णा। (पंचा.१३८) लोभो व चित्तमासेज्ज।

लोय देखो लोअ। (पंचा.८७,स.९,प्रव.३३, निय.४८, भा.३६, मो.२७) समओ सव्वत्थ सुंदरो लोए। (स.३) -**अग्ग** न [अग्र] लोक का अग्रभाग। (निय.७२,१८२) जह लोयग्गे सिद्धा। (निय.४८) -**अलोय** पुं [अलोक] लोक और अलोक। (निय.१६६,भा.१४९) -**आयास** पुं न [आकाश] लोकाकाश। (निय. ३२,३६) -**प्पदीवयर** वि [प्रदीपकर] लोक को प्रकाशित करने वाले।(स.९,प्रव.३३)भणंति लोयप्पदीवयरा।-**ववहारविरद** वि [व्यवहारविरत] लोक के व्यवहार से रहित। लोयववहार विरदो अप्पा। (मो.२७) -**विभाग** पुं [विभाग] लोक का अंश। (निय.१७) लोयविभागेसु णादव्वा।

लोयंतिय पूं [लौकान्तिक] लौकान्तिक देव,देवों की एक जाति

(मो.७७) **-देवत्त** वि [देवत्व] लौकान्तिक देवपना। (मो.७७)

लोल अक [लुठ्] लोटना। (भा.४१)

लोल वि [लोल] लम्पट, लुब्ध, आसक्त, चपल। (पंचा.१३९) **-दा** वि [ता] लोलुपता, चपलता। कालुस्सं लोलदा य विसएसु। (पंचा.१३९)

लोलित वि [लोलित] लोटता हुआ, लोटने वाला,स्खलित, चलित। असुईमज्झम्मि लोलिओ सि तुमं। (भा.४१)

लोह 1.देखो लोभ। (स.१२५, निय.८१, बो.५, चा.३३) **-उवजुत** [उपयुक्त] लोभयुक्त। (स.१२५) लोहुवजुत्तो हवदि लोहो। 2. पुं न [लोह] लोहा, धातु विशेष। कद्दममज्झे जहा लोहं। (स.२१९)

व

व अ [व/वा] 1. अथवा,या,और,तथा,पादपूर्ति अव्यय। (पंचा.११, स.१४७, निय.५७, प्रव.७०) उप्पत्ती व विणासो। (पंचा.११) 2. अ [वत्] जैसा, तरह।

वइसेसिय न [वैशेषिक] कणाद-दर्शन, मत विशेष। (शी.१६) वायरणछंदवइसेसिय।

वंद सक [वन्द] वन्दना करना, प्रमाण करना, नमन करना। (प्रव.३,द.२८,मो.९३,भा.१,चा.१,स.२०,बो.१)वंदामि य वट्टंते। (प्रव.३) वंदए (व.प्र.ए.मो.९२) वंदमि/वंदामि

(व.उ.ए.प्रव.३, द.२७,२८) वंदे (व.उ.ए.मो.९३) वंदिज्ज (वि./आ.प्र.ए.द.३६) वंदिज्जइ (क.व.प्र.ए.द.२७) वंदिव्वो (वि.कृ.प्र.ए.द.२) वंदित्ता (सं.कृ.बो.१) वंदित्तु (सं.कृ.चा.१,स.१)

वंदण न [वन्दन] प्रणाम, नमन, स्तवन। (प्रव.चा.४७) वंदणणमंसणेहिं। (प्रव.चा.४७)

वंदणिज्ज वि [वन्दनीय] वन्दना करने योग्य, प्रणाम करने योग्य। (सू.२०) सो होदि हु वंदणिज्जो य। (सू.२०)

वंदणीअ/वंदणीय वि [वन्दनीय] वन्दनीय, पूजनीय, पूज्य। (सू.११,१२,बो.१०,द.२३) सो होइ वंदणीओ। (सू.११)

वंदिअ/वंदिद/वंदिय वि [वन्दित] अर्चित, पूजित। (स.२८, पंचा.१, प्रव.१, भा.१) वंदिदो मए केवली भयवं। (स.२८)

वंस पुं [वंश] बाँस, वेणु। (स.२३८, २४३) तालीतलकयली वंसपिंडीओ (स.२३८)

वक्क न [वाक्य] वचन, शब्द, पदावली। वह पदसमूह जिससे श्रोता को वक्ता के अभिप्राय का बोध हो। (पंचा.१) तिहुवणहिदमधुरविसदवक्काणं। (पंचा.१)

वग्ग पुं [वर्ग] सजातीय समूह, प्रभाग, दल। (स.५२, प्रव.४) जीवस्स णत्थि वग्गो। (स.५२)

वच न [वचस्] वचन, वाणी,भाषा। (बो.४२, निय.६७) **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] वचनगुप्ति। परिहारो वचगुत्ती। (निय.६७)

वचि स्त्री [वाच्] वाणी, वचन। (पंचा.३५, भा.६३)

-गोचर/गोयर पुं [गोचर] वचन का विषय, वचन के द्वारा ग्रहण करने योग्य। ते होंति भिण्णदेहा, सिद्धा वचिगोयरमदीदा। (पंचा.३५)

वच्च सक [वच्] 1. कहना, बोलना। कह ते जीवो त्ति वच्चंति। (स.४४) 2. सक [व्रज्] जाना, गमन करना। (लिं.६,९) वच्चदि णरयं पाओ। (लिं.६)

वच्छल्ल न [वात्सल्य] स्नेह, अनुराग, प्रेम, सम्यक्त्व का एक अङ्ग, सोलह कारण भावना का एक भेद। (स.२३५, चा.११, बो.१६) जो जीव आचार्य, उपाध्याय और साधुओं के प्रति तथा मोक्षमार्ग में वत्सलता करता है, वह वात्सल्य से युक्त है। (स.२३५) **-त्त/दा** [त्व/ता] वत्सलत्व, वत्सलता, स्नेहपना। (स.२३५, प्रव.चा.४६) **-भावजुद** वि [भावयुत] वात्सल्यभाव से युत, वात्सल्यसहित। (स.२३५)

वज सक [व्रज्] जाना, गमन करना। णिव्वाणपुरं वजदि धीरो। (पंचा.७०)

वज्ज सक [वर्जय्] त्याग करना, छोड़ना। (स.१४८, १४९, निय.१२९, चा०१५) वज्जेदि (व.प्र.ए.स.१४८, निय.१३०) वज्जंति (व.प्र.ब.स.१४९) वज्जहि (वि./आ.म.ए.चा.१५) वज्जहि णाणे विसुद्धसम्मत्ते। (चा.१५)

वज्ज पुं न [वज्र] हीरा, पत्थर विशेष। जहरयणाणं वज्जं। (भा.८२)

वज्जण न [वर्जन] परित्याग, परिहार। अणत्थदंडस्स वज्जणं

विदियं। (चा.२५)

वज्जर सक [कथय्] कहना, बोलना। (भा.११८)

वज्जरिय [कथित] कहा हुआ, उपदिष्ट, कथित, प्रतिपादित। संखेवेणेव वज्जरियं। (भा.११८)

वज्जिज्ज वि [वर्जित] छोड़ने योग्य,निषिद्ध। (निय.१५६)

वज्जिद/वज्जिय वि [वर्जित] रहित, हीन, परित्यक्त। (निय.१५,९ बो.३६,५१) सरीरसंस्कारवज्जिया रुक्खा। (बो.५१)

वज्झ सक [बन्ध्] बांधना, जकड़ना, पकड़ना, नियन्त्रण करना। (पंचा.१४९, स.१६९, ३०१-३०३, प्रव.ज्ञे.८४) वज्झदि (व.प्र.ए.स.१७२, प्रव.ज्ञे.७४) वज्झए (व.प्र.ए.स.१६८,१९५) वज्झामि (व.उ.ए.स.३०३) वज्झेज्जं (वि./आ.उ.ए.स.३०१) वज्झिदुं (हे.कृ.स.३०२) वज्झंति (व.प्र.ब.पंचा.१४९, प्रव.ज्ञे.८६) तेसिमभावे ण वज्झंति। (पंचा.१४९)

वट्ट सक [वृत्] 1. वर्तना, होना, प्रवृत्त करना, प्रेरित करना। (स.३०५,प्रव.२७,निय.८४,सू.२) वट्टदि/वट्टइ/ वट्टेइ (व.प्र.ए.प्रव.२७, निय.८४, स.३०५) वट्टदे (व.प्र.ए.स.६९) वट्टदु (वि./आ.प्र.ए.प्रव.चा.२१,६१) वट्टंत (व.कृ.स.७०,२४६) वट्टदि तह णाणमत्थेसु। (प्रव.३०) 2. आचरण करना, धारण करना। वट्टंतो बहुविहेसु जोगेसु। (स.२४६)

वट्ट वि [वृत्त] गोल, वर्तुल। वट्टेसु य खंडेसु य। (शी.२५)

वट्टण न [वर्तन] विद्यमान, स्थित, अवस्थित। (प्रव.चा.९३) वट्टण

वत्थ पुं न [वस्त्र] कपड़ा, परिधान। (स.१५७ द.२६, सू.२२, बो.४५, भा.४) वत्थस्स सेदभावो। (स.१५७) **-आवरण** न [आवरण] वस्त्र का पर्दा। (सू.२२) वत्थावरणेण भुंजेइ। (सू.२२) **-खंड** पुं न [खण्ड] वस्त्र का भाग, बिना सिला वस्त्र। (प्रव.चा.ज.वृ.२०) **-धर** वि [धर] वस्त्रधारी। णवि सिज्झइ वत्थधरो। (सू.२३) **-विहीण** वि [विहीन] वस्त्र रहित। वत्थविहीणो वि तो ण वंदिज्ज। (द.२६)

वत्थु न [वस्तु] पदार्थ, द्रव्य, सामग्री, सम्पत्ति। (स.२६५, प्रव.चा.५५) दिट्ठा पगदं वत्थू। (प्रव.चा.६१) **-विसेस** पुं न [विशेष] पदार्थ विशेष। वत्थुविसेसेण फलदि विवरीदं। (प्रव.चा.५५)

वद सक [वद्] कहना, बोलना। (स.४३,निय.६३) परमप्पाणं वदंति दुम्मेहा। (स.४३)

वद पुं न [व्रत] नियम, धार्मिक प्रतिज्ञा। (स.१५२, प्रव.चा.५६, निय.११३, भा.८३, चा.२२, बो.१७) वदणियमाणि धरंता। (स.१५३)

वदि स्त्री [वाच्] वाणी, वचन। (निय.६९) मोणं वा होइ वदिगुत्ति। **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] वचनगुप्ति।असत्यादिक से निवृत्ति अथवा मौन रहना वचनगुप्ति है। (निय.६९)

वदिरित्त वि [व्यतिरिक्त] भिन्न, वियुक्त। (निय.१९, ३८, द्वा.७) विहावगुणपज्जएहिं वदिरित्तं। (निय.१०७)

वदिवदद वि [व्यतिपतत] मन्दगति से परिणमन करने वाला, मन्द

वि सव्वकालेसु। (प्रव.चा.९३) **-लक्ख** न [लक्षण] वर्तनालक्षण। वट्टणलक्खो य परमट्ठो।(पंचा.२४)

वट्टणा स्त्री [वर्तना] वर्तना, परावर्तन, आवृत्ति। (प्रव.चा.४२) कालस्स वट्टणा से।

वड्ढमाण पुं [वर्धमान] भगवान् महावीर का एक नाम,वर्धमान। पणमाणि वड्ढमाणं। (प्रव.१)

वण न [वन] जङ्गल, अरण्य, वन। (निय.१२४,भा.२१) **-वास** पुं [वास] वनवास, जङ्गल में निवास। किं काहदि वणवासो। (निय.१२४)

वणप्फदि पुं [वनस्पति] वृक्षविशेष, वृक्ष आदि। (पंचा.११०)

वणिज्ज न [वाणिज्य] व्यापार। (लिं.९) किसिकम्मवणिज्जजीवघादं च।

वण्ण पुं [वर्ण] वर्ण, रङ्ग। (पंचा.२४, स.५०, प्रव.५६) जीवस्स णत्थि वण्णो। (स.५०)

वण्णिअ/वण्णिद/वण्णिय वि [वर्णित] प्रतिपादित, वर्णन किया गया। (स.१९८) आकारओ वण्णिओचे या। (स.२८३)

वत्त सक [वद्] कहना, बोलना। (स.२५) तो सत्तो वत्तुं जे। वंत्तु (हे.कृ.स.२५)

वत्तव्व न [वक्तव्य] वचन, कथन, वाणी। (स.३५३, ३६०) ववहारणयस्स वत्तव्वं। (स.१०७)

वत्तीस वि [द्वात्रिंशत्] बत्तीस, संख्याविशेष। वेणइया होंति वत्तीसा। (भा.१३६)

गति से गमन करने वाला। (प्रव.ज्ञे.४६,४७) वदिवददो सो वट्टदि। (प्रव.ज्ञे.४६)

वय देखो 1.वद(वचन)।**-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] वचनगुप्ति। (चा.३२)। 2. देखो वद (व्रत)। (बो.२५) वयसम्मत्तविसुद्धे। (बो.२५) **-सहिय** वि [सहित] व्रत सहित। (भा.८३) 3. पुं [व्यय] क्षय, नाश। (प्रव.ज्ञे.३,४) 4. पुं न [वयस्] उम्र, अवस्था, आयु। (प्रव.चा.३)

वय अक [व्यय] नष्ट होना, क्षय होना। (प्रव.ज्ञे.११) पज्जाओ पज्जओ वयदि अण्णो। (प्रव.ज्ञे.११)

वयण पुं न [वचन] वचन, कथन, शब्द। (पंचा.१४८, स.३००, प्रव.३४,निय.३, भा.१०७) जोगो मणवयणकायसंभूदो। (पंचा.१४८) **-उच्चारण** न [उच्चारण] वचन का कथन। (निय.१२२) **-मय** वि [मय] वचनमय। (निय.१५३) वयणमयं पडिकमणं। (निय.१५३) **-रयणा** स्त्री [रचना] वचनों की रचना। (निय.८३) मोत्तूण वयणरयणं। (निय.८३) **-विवाद** पुं [विवाद] वचन सम्बन्धी विवाद, जबानी लड़ाई, वाक्युद्ध। (निय.१५६) तम्हा वयणविवादं। (निय.१५६)

वर [वर] क्षेष्ठ, उत्तम, उत्कृष्ट। (निय.११७, भा.१०९, मो.२५) **-कारण** न [कारण] श्रेष्ठ कारण। (भा.७९) **-खमा** स्त्री [क्षमा] उत्तम क्षमा। (भा.१०९) वरखमसलिलेण सिंचेह। (भा.१०९) **-णाणि** वि [ज्ञानिन्] उत्कृष्ट ज्ञानी, श्रेष्ठ जानकार। (द.६) वरणाणी होंति अइरेण। (द.६) **-तव** पुं न [तपस] उत्तमतप,

उत्कृष्ट तपश्चर्या। (निय.११७) वरतवचरण महेसिणं सव्वं। (निय.११७) **-भवण** न [भवन] उत्तम भवन। (द्वा.३) **-भाव** पुं [भाव] उत्कृष्टभाव। (भा.१५२, १६२) खणंति वरभावसत्थेण। (भा.१५२) **-वय** पुं न [व्रत] उत्तमव्रत, श्रेष्ठ प्रतिज्ञा। (मो.२५) वरवयतवेहि सग्गो। (मो.२५) **-सिद्धिसुह** न [सिद्धिसुख] उत्तनसिद्धिरूपी सुख। (भा.१६१) पत्ता वरसिद्धिसुहं। (भा.१६१)

वरिट्ठ पुं [वरिष्ठ] अतिश्रेष्ठ, अतिइष्ट। (प्रव.ज.वृ.२२) तं सव्वट्ठवरिट्ठं इट्ठं।

वल पुं न [बल] सैन्य, सैना, शक्ति। (स.४७) **-समुदय** पुं [समुदाय] सेना समूह, शक्ति का भंडार। एसो वलसमुदयस्स आदेसो। (स.४७)

वल्लह वि [वल्लभ] प्रिय, स्नेही, पति। देवा भवियाण वल्लहा होंति। (शी.१७)

ववगद/ववगय वि [व्यपगत] दूर किया हुआ, विसर्जित, हटाया हुआ, रहित। (पंचा.२४, निय.५, बो.२४) ववगदपणवण्णरसो।

ववदिस सक [व्यप+दिश्] कहना, प्रतिपादन करना। (स.६०) णिच्छयदण्हू ववदिसंति। (स.६०)

ववदेस पुं [व्यपदेश] कथन, प्रतिपादन। (पंचा.५२, स.१४४, निय.२९) कालो त्ति य ववदेसो। (पंचा.१०१)

ववसाअ/ववसाय पुं [व्यवसाय] उद्यम, प्रयत्न। (स.२७१, निय.१०५) बुद्धिववसाओ वि।(स.२७१)

ववसायि वि [व्यवसायिन्] उद्यमशील, व्यवसायी। (निय.१०५) सूरस्स ववसायिणो।

ववहार पुं [व्यवहार] 1. नय विशेष, वस्तुपरिज्ञान का एक दृष्टिकोण। (पंचा.७६,स.४८,प्रव.ज्ञे.९७,निय.१३५,मो.३२, द.२०)व्यवहार अभूतार्थ है। (स.११) **-णअ/णय** पुं [नय] व्यवहारनय। (स.२७२, निय.४९) ववहारणयो भासदि। (स.२७) **-देसिद** वि [दिशित] व्यवहार से कथित, व्यवहार से प्रतिपादित।ववहारदेसिदा पुण। (स.१२)**-भासिअ** वि [भाषित] व्यवहार से कथित।ववहारभासिएण उ। (स.३२४) 2. गणित, एक संख्या का मापक (व्यवहारपल्य),जीवों की संख्या का मापक (व्यवहार राशि)। ववहारणायसत्थेसु। (शी.१६)

ववहारि पुं [व्यवहारिन्] व्यवहारी, व्यापारी, व्यवहार क्रिया में लीन। लोगा भणंति ववहारी। (स.५८)

ववहारिअ वि [व्यावहारिक] व्यवहार सम्बन्धी, व्यवहार कुशल। (स.४१४) ववहारिओ पुण णओ। (स.४१४)

ववहारिण पुं [व्यवहारिन्] व्यवहार क्रिया प्रवर्तक। (प्रव.चा.१२)

वस अक [वस्] रहना, निवास करना। (भा.४०)

वसह पुं [वृषभ] उत्तम, श्रेष्ठ, प्रमुख, आदिनाथ का एक नाम। (मुणिवरवसहा णि इच्छंति। (बो.४३)

वसिअ वि [वषित] रहा हुआ, स्थित रहा। (भा.१७, २१) उयरे वसिओसिचिरं। (भा.३९)

वसिट्ठ पुं [वशिष्ट] एक मुनि का नाम। (भा.४६) **-मुणि** पुं [मुनि]

वशिष्ठ मुनि। अण्णं च वसिट्ठमुणी।

वसिद देखो वसिअ। (बो.४१) भीमवणे अहव वसिदो वा।

वसुहा स्त्री [वसुधा] पृथिवी, धरती, भूमि। (लिं.१६)

वह सक [वह्] धारण करना, ले जाना, ढोना। (निय.६०) चारित्तभरं वहंतस्स। (निय.६०) वहंत (व.कृ.)

वह पुं स्त्री [वध] घात, हनन। पाणिवहेहि महाजस। (भा.१३४)

वा अ [वा] अथवा,या,तथा,और,भी,यदि,पादपूर्ति अव्यय। (पंचा.५८, स.१९४, प्रव.९, निय.३९,बो.४१) गुणपज्जयासयं वा। (पंचा.१०)

वाअ सक [वाजय्] बजाना। (लिं.४) वायं वाएदि लिंगरूवेण।

वाउ पुं [वायु] पवन, हवा, वात, वायुकायिक जीव विशेष। (पंचा.११०, प्रव.ज्ञे.७५) वाउवणप्फदिजीवसंसिदा काया। (पंचा.११०)

वांछा स्त्री [वाञ्छा] इच्छा, आकांक्षा। (निय.५९) **-भाव** पुं [भाव] इच्छा का भाव।(निय.५९)

वाणी स्त्री [वाणी] वचन, वाक्य। देहो य मणो वाणी। (प्रव.ज्ञे.६९)

वाद पुं [वाद] शास्त्रार्थ, कहना, मत। कलहं वादं जूवा। (लिं.६)

वादर [बादर] स्थूल, मोटा, नामकर्म का एक भेद। (पंचा.६४, स.६५) वादरसुहुमगदाणं। (पंचा.७६)

वाधा/वाहा स्त्री [बाधा] व्यवधान, व्याघात, रुकावट। (प्रव.७६) **-सहिद** वि [सहित] बाधासहित।सपरं वाधासहिदं। (प्रव.७६)

वामोह पुं [व्यामोह] मूढ़ता, भ्रान्ति। गारवमयरायदोसवामोहं।

(मो.२७)

वाय पुं [वाज] शब्द, आवाज, वाद्यविशेष। वायं वाएदि लिंगरूवेण। (लिं.४)

वायरण न [व्याकरण] व्याकरण, शास्त्र विशेष। (शी.१६)

वायाम पुं [व्यायाम] कसरत, शारीरिक श्रम। (स.२३७) करेदि सत्थेहिं वायामं। (स.२३७)

वार पुं [वार] अवसर, बेला। वार एकम्मि य जम्मे। (शी.२२)

वारण न [वारण] निषेध, रोक, निवारण।सुहमसुहवारणं किच्चा। (निय.९५)

वालण न [ज्वालन] जलाना, दग्ध करना। (भा.१०) खणणुत्तावणवालण। (भा.१०) वालण में व्यञ्जन का लोप हो गया है।

वालुअ/वालुय स्त्री [बालुका] बालू, रेज, रज, धूली। (द.७) **-वरण** पुं [वरण] बालू का पुल, रेत का सेतु। कम्मं वालुयवरणं। (द.७)

वावार पुं [व्यापार] नियोजन, संलग्नता, प्रक्रिया। (प्रव.६४, निय.७५,भा.४५)वावारो णत्थि विसयत्थं।(प्रव.६४) **-विप्प-मुक्क** वि [विप्रमुक्त] इन्द्रियों की प्रवृत्ति से सर्वथा रहित वावारविप्पमुक्का। (निय.७५)

वावीस वि [द्वाविंशति] बाईस, संख्याविशेष। (बो.४४, सू.१२) **-परिसह/परीसह** पुं [परीषह]पीड़ा,बाधा।जे वावीसपरीसह-सहंति। (सू. १२)

वास पुं न [वर्ष] 1. वर्ष, साल। वाससहस्सकोडीहिं (द.५) 2. पुं [वास] निवास, स्थान विशेष, रहने की जगह। (भा.४६) **-ठाण** पुं न [स्थान] निवास स्थान। सो ण वि वासठाणो। (भा.४६)

वाहण पुं न [वाहन] रथ आदि वाहन। (द्वा.३)

वाहि पुं स्त्री [व्याधि] व्याधि,पीड़ा,कष्ट।जरवाहिदुक्खरहियं। (बो.३६)

वाहिर वि [बाह्य] बाहर, बाह्य। (भा.७) **-गंथचाअ** वि बाह्यपरिग्रह का त्याग, बाह्य परिग्रह से रहित। (भा.४) **-णिग्गंथ** वि [निर्ग्रन्थ] बाह्य निर्ग्रन्थ।(भा.७)

वि अ [अपि] अपि,भी,ही,औरभी,प्रतिपक्षता,पादपूर्ति अव्यय। (पंचा.४१,स.४,प्रव.चा.२४, निय.१०४, द.१३, सू.४, चा.१०, बो.२१, भा.९५, मो.९७, शी.६, लिं.१४) जह णाम को वि पुरिसो। (स.१७)

विअ सक [विद्] जानना, कहना।(भा.२,स.३९०)गुणदोसाणं जिणा विंति। (भा.२)

विआण सक [वि+ज्ञा] जानना, मालूम करना। (स.२९३) विआणओ अप्पणो सहावं च।

विआणिअ व [विज्ञात] जाना हुआ, विदित, ज्ञात। (स.२९३)

विउल वि [विपुल] प्रभूत, प्रचुर, विशाल। (बो.६१, भा.७५) चउदसपुव्वंगविउलवित्थरणं। (बो.६१)

विउव्विय वि [वैक्रियिक] वैक्रियिक शरीरी,विक्रिया ऋद्धिधारी, शरीर का एक भेद। (भा.१२९) इड्ढिमतुलं विउव्विय।

(भा.१२९)

विओय/वियोग पुं [वियोग] विरह, वियोग। (स.२१५, भा.१२) **-काल** पुं [काल] वियोग का समय। सुरणिलएसु सुरच्छरविओयकाले। (भा.१२) **-बुद्धि** स्त्री [बुद्धि] वियोगबुद्धि। (स.२१५) विओगबुद्धीए तस्स सो णिच्चं।

विंट न [वृन्त] फल-पत्रादि का बन्धन। (स.१६८) जह ण फलं वज्झए विंटे। (स.१६८)

विकध न [विकथ] विकथन, बुराकथन। (प्रव.चा.१५) णेच्छदि समणम्हि विकधम्हि। (प्रव.चा.१५)

विकहा स्त्री [विकथा] विकथा, प्रमाद का एक भेद। (चा.३५, भा.१६) चउविह विकहासत्तो। (भा.१६) स्त्री कथा, राजकथा चोरकथा और भोजनकथाये चार विकथाएँ हैं। (निय.६७)

विगडि स्त्री [विकृति] विकार, विकृति, रागद्वेष आदि विकार। (निय.१२८) विगडिं जणेदि दु।

विगद वि [विगत] रहित, नाश को प्राप्त। (प्रव.१४,१५) **-आवरण** पुं न [आवरण] आवरण रहित। (प्रव.१५) **-राग** पुं [राग] रागरहित। (प्रव.१४) संजमतवसंजुदो विगदरागो। (प्रव.१४)

विगम पुं [विगम] विनाश, व्यय। विगमुप्पादधुवत्तं। (पंचा.११)

विग्गह पुं [विग्रह] 1. आकृति, आकार। 2. शरीर, देह। 3. मोड़, टेड़ा, वक्र। 4. अलग-अलग होना, टूट जाना, बिखर जाना।

विग्घ पुं न [विघ्न] अन्तराय, आत्मशक्ति का घातक कर्म, कर्म का

एक भेद।

विचिंत सक [वि+चिन्तय्] विचार करना, सोचना। (मो.८२, द्वा.३८) विचिंतंत (व.कृ.मो.८२) विचितेज्जो (वि./आ.म.ए.द्वा.३८) जीवो सो हेयमिति विचितेज्जो। (द्वा.३८)

विचित्त वि [विचित्र] विविध,नाना प्रकार, अनेक तरह का। (प्रव.४७, निय.१२४) अत्थं विचित्तविसमं। (प्रव.४७) **-उववास** पुं न [उपवास] नाना प्रकार के उपवास। (निय.१२४) किं काहदि विचित्तउववासो। (निय.१२४)

विच्छिण्ण वि [विच्छिन्न] 1. पृथक् हुआ, अलग हुआ,वियुक्त, नष्ट हुआ। (प्रव.७६) विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं। (प्रव.७६) 2. विभक्त,भेदयुक्त। (पंचा.५६) बहुसु य अत्थेसु विच्छिण्णा।

विच्छिय पुं [वृश्चिक] बिच्छू, जन्तु विशेष। विच्छियादिया कीडा। (पंचा.११५)

विच्छेयण न [विच्छेदन] विभाग, पृथक्करण, वियुक्त, अलग। (भा.१०)

विजह सक [वि+हा] परित्याग करना, छोड़ना। (पंचा.७) सगं सभावं ण विजहंति। (पंचा.७)

विजाण सक [वि+ज्ञा] जानना, मालूम करना, समझना। (निय.१५१, स.१६०, प्रव.२१, पंचा.१६३) सो ण विजाणदि समयं। (पंचा.१६७) विजाणदि (व.प्र.ए.स.१६०, पंचा.१६७) विजाणंति (व.प्र.ब.प्रव.४०; पंचा.११६) विजाणीहि (वि./आ.म.ए.निय.१५१) बहिरप्पा इदि विजाणीहि।

विजुद वि [वियुत] रहित, हीन। (पंचा.३२)

विजुज्ज वि [वियुज्य] खिरते हुए, झड़ते हुए, रहित। (पंचा.६७) काले विजुज्जमाणा।

विज्ज अक [विद्] होना, रहना, अस्तित्व होना। (पंचा.१६७, स.२०१, प्रव.१७, निय.१७८, सू.२६) रायादीणं तु विज्जदे जस्स। (स.२०१) विज्जदि/विज्जदे (व.प्र.ए.प्रव.ज्ञे.५०, पंचा.१६७) विज्जंते (व.प्र.ब.पंचा.४६)

विज्जा स्त्री [विद्या] विद्या, शास्त्रज्ञान, यथार्थज्ञान, तपश्चर्या से होने वाली सिद्धि विशेष। (स.२३६) **-रह** पुं न [रथ] विद्यारथ। (स.२३६) विज्जारहमारूढो।

विज्जावच्च न [वैयावृत्य] सेवा, शुश्रूषा, वैयावृत्ति, सोलह कारणभावनाओं का एक भेद। विज्जावच्चं दसवियप्पं। (भा.१०५)

विणअ पुं [विनय] आदर, सम्मान, शिष्टाचार, विनय, सोलह कारण भावनाओं का एक भेद। (प्रव.चा.२५, चा.११) वच्छल्लं विणएण य। (चा.११) विनय का उल्लेख तप के भेदों में आता है, वहाँ उसके चार भेद किये हैं-ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय एवं उपचार विनय।

विणट्ठ वि [विनष्ट] विनाश को प्राप्त, लुप्त, ध्वस्त, उच्छिन्न। (पंचा.१८) उप्पण्णो य विणट्ठो।

विणय देखो विणअ। (प्रव.६६, बो.१६, भा.१०४) **-संजुत्त** वि [संयुक्त] विनय से युक्त। सुपुरिसो वि विणयसंजुत्तो। (बो.२१)

विणस्स अक [वि+नश्] नष्ट होना, ध्वस्त होना। (स.३४५, ३४६) विणस्सए णेव केहिंचि दु जीवो। (स.३४५)

विणा अ [बिना] बिना, सिवाय, बगैर।(पंचा.२६,स.८, प्रव.१०)दव्वेण विणा ण गुणा(पंचा.१३)अत्थो अत्थं विणेह परिणामो। (प्रव.१०) यहाँ क्रमशः दोनों सन्दर्भों में तृतीया और द्वितीया के योग में विणा का प्रयोग हुआ है।

विणास सक [वि+नाशय्] ध्वंस करना, नष्ट करना, क्षय करना। (सू.४, शी.२,२१) ण विणासइ सो गओ वि संसारे। (सू.४) विणासदि (व.प्र.ए.शी.२१) विणासंति (व.प्र.ब.शी.२)

विणास पुं [विनाश] विध्वंस, क्षय, नाश। (पंचा.११, स.१४७, प्रव.१७) एवं सदो विणासो। (पंचा.५४)

विणासग वि [विनाशक] नाश करने वाला, क्षय करने वाला। (मो.६१) मोक्खपहविणासगो साहू। (मो.६१)

विणिग्गह सक [विनि+ग्रह] निग्रह करना, रोकना, वश करना। (स.३७५-३८१) ण य एइ विणिग्गहिदुं। (स.३७५) विणिग्गहिदुं (हे.कृ.स.३७५)

विणिच्छअ पुं [विनिश्चय] निश्चय, निर्णय, परिज्ञान। (स.३६५) विणिच्छओ णाणदंसणचरित्ते। (स.३६५)

विण्णाण न [विज्ञात] ज्ञान, बुद्धिमत्ता, प्रज्ञा, समझ। (पंचा.३७, स.२७१) अज्झवसाणं मई य विण्णाणं। (स.२७१)

विण्णाद वि [विज्ञात] जाना गया, समझा हुआ। जीवमजीवं च हवदि विण्णादं। (प्रव.ज्ञे.३८)

विण्हु पुं [विष्णु] 1.विष्णु।(स.३२१) लोयस्स कुणइ विण्हु। (स.३,२१,३२२) 2. परमात्मा का एक नाम। (भा.१५०) जो ज्ञान के द्वारा समस्त लोक-अलोक में व्यापक है, वह विष्णु है। (भा.१५०)

विण्णेय विकृ[वि+ज्ञा] जानने योग्य, समझने योग्य। (स.२४०, निय.१११) णिच्छयदो विण्णेयं। (स.२४५)

वित्ति स्त्री [वृत्ति] जीविका, जीवन निर्वाह का साधन, चारित्र। वित्तिणिमित्तं तु सेवए रायं। (स.२२४) **-णिमित्त** न [निमित्त] आजीविका हेतु, जीविका के कारण। (स.२२४)

वित्थड वि [विस्तृत] विस्तारयुक्त, विशाल। (प्रव.६१) लोगालोगेसु वित्थडा दिट्ठी। (प्रव.६१)

वित्थार पुं [विस्तार] फैलाव, प्रसारण, विस्तार। (प्रव.ज्ञे.१५, निय.१७) सच्चेव य पज्जओ **त्ति वित्थारो**। (प्रव.ज्ञे.१५)

विदिद वि [विदित] ज्ञात, जाना हुआ, सीखा। (प्रव.७८, प्रव.चा.७३) **-अत्थ** पुं न [अर्थ] ज्ञात हुए पदार्थ। एवं विदिदत्थो जो। (प्रव.७८) **-पयत्थ** पुं न [पदार्थ] जाने गए पदार्थ। सम्मं विदिदपयत्था। (प्रव.चा.७३)

विदिय वि [द्वितीय] दूसरा, संख्यावाची शब्द। (निय.५७, चा.५,२५,२६, भा.११४) विदियस्स भावणाए। (चा.३३) **-वद** पुं न [व्रत] द्वितीयव्रत, सत्यव्रत। (निय.५७) जो साधु राग, द्वेष और मोह से युक्त असत्य भाषा के परिणाम को छोड़ता है, उसके दूसरा सत्यव्रत होता है। (निय.५७)

विदिसा स्त्री [विदिशा] विदिशा, दिशाओं के बीच के कोण की दिशाएँ। (पंचा.७३) विदिसावज्जं गदिं जंति। **-वज्ज** वि [वर्ज्य] विदिशाओं को छोड़कर। (पंचा.७३)

विदुस वि [विद्वस्] विद्वान्, वेत्ता, बुद्धिमान, ज्ञानी। (स.१५६) ववहारेण विदुसा पवट्टंति। (स.१५६)

विधाण/विहाण न [विधान] 1.शास्त्रोक्त नियम, रीति, अनुष्ठान। (प्रव.८२) तेण विधाणेण खविदकम्मंसा। (प्रव.८२) 2.प्रकार, भेद।

विद्धि स्त्री [वृद्धि] वृद्धि, विकास, बढ़ोत्तरी। (प्रव.७३) देहादीणं विद्धिं।

विपच्च सक [वि+पच्] पकना, उदय में आना। (स.४५) दुक्खं ति विपच्चमाणस्स। विपच्चमाणस्स (व.कृ.ष.ए.स.४५)

विप्पजोग पुं [विप्रयोग] वियोग,विरह,जुदापन। सजोगविप्पजोगं। (द्वा.३६)

विप्पमुक्क वि [विप्रमुक्त] विमुक्त, रहित। दो-दोसविप्पमुक्को। (मो.४४)

विप्पलय पुं [विप्रलय] विनाश,क्षय,अभाव।(स.२०९) णिज्जदु वा अहव जादु विप्पलयं।

विप्फुर अक [वि+स्फुर] विकसना, देदीप्यमान होना, चंमकना। (भा.१४४) फणमणिमाणिक्ककिरणविप्फुरिओ। (भा.१४४) विप्फुरंत (व.कृ.भा.१५५)

विप्फुरिअ वि [विस्फुरित] देदीप्यमान, चमकने वाला। (भा.१४४)

विब्भम पुं [विभ्रम] अस्थिरता, अनध्यवसाय, अव्यक्तज्ञान, अतिसामान्यज्ञान। (निय.५१) संसयविमोहविब्भम। (निय.५१)

विभंग पुं [विभङ्ग] मिथ्यात्वयुक्त अवधिज्ञान। (पंचा.४१) कुमदिसुदविभंगाणि। (पंचा.४१)

विभ अक [विभ्] डरना, भयभीत होना। (पंचा.१२२) इच्छदि सुक्खं विभेदि दुक्खादो। (पंचा.१२२)

विभत्त वि [विभक्त] विभाग, भेद, बाँटा हुआ, विभाजित। (पंचा.४५, स.४) दो वि य मया विभत्ता। (पंचा.८७)

विभत्ति स्त्री [विभक्ति] विभाग, भेद, व्याकरण में प्रयुक्त विभक्ति विशेष। (चा.३९) जीवाजीवविभत्ती। (चा.३९)

विभाग पुं [विभाग] अंश, भेद। (निय.१७)

विभाव पुं [विभाव] औपाधिक अवस्था, विकारी दशा। णरणारयतिरियसुरा पज्जाया ते विभावमिदि भणिदा। (निय.१५) **-णाण** न [ज्ञान] विभावज्ञान। विभावणाणं हवे दुविहं। (निय.११) **-दिट्ठि** स्त्री [दृष्टि] विभाव दृष्टि, मिथ्यादर्शन, विकारमयदृष्टि। (निय.१४) तिण्णि वि भणिदं विभावदिट्ठि त्ति। (निय.१४)

विमल वि [विमल] विशुद्ध, पवित्र, निर्मल। (प्रव.५९, निय.१११, भा.७२, बो.३६) णाणमयविमलसीयलसलिलं। (भा.१२४) **-गुण** पुं न [गुण] निर्मलगुण, विशुद्धगुण। (निय.१११) भिण्णं भावेह विमलगुणणिलयं। (भा.१११) **-दंसण** न [दर्शन] निर्मल सम्यक्त्व। (भा.१४४) तह विमलदंसणधरो।

विमुंच सक [वि+मुच्] छोड़ना, परित्याग करना, बन्धनमुक्त

होना। (स.३५) णाऊण विमुंचदे णाणी। विमुंचदि/विमुंचदे/विमुंचए (व.प्र.ए.स.४०७,३५)

विमुक्क वि [विमुक्त] छूटा हुआ,बंधनमुक्त। (भा.१२४) वाहिजरमरणवेयणडाहविमुक्का सिवा होंति। (भा.१२४)

विमुञ्च सक [वि+मुच्] छोड़ना, त्याग करना। (प्रव.ज्ञे.९४) विमुञ्चदे कम्मधूलीहिं।

विमुत्त वि [विमुक्त] छूटा हुआ, बंधन मुक्त। तया विमुत्तो हवइ। (स.३१५)

विमोइद वि [विमोचित] छुड़ाया हुआ,मुक्त हुआ,छोड़ा गया। विमोइदो गुरुकलत्तपुत्तेहिं। (प्रव.चा.२)

विमोक्ख पुं [विमोक्ष] मुक्ति, छुटकारा। (स.२८९, सू.२३) जीवोवि ण पावइ विमोक्खं।(स.२९१) **-मग्ग** पुं [मार्ग] मुक्तिपथ, मोक्षमार्ग। णग्गो विमोक्खमग्गो। (सू.२३)

विमोच सक [वि+मुच्] परित्याग करना, छोड़ना। करेमि बंधेमि तह विमोचेमि। (सू.२६६)

विमोचित देखो विमोइद। (चा.३४) **-आवास** पुं [आवास] विमोचितावास, छोड़े हुए आवास, अचौर्यव्रत की एक भावना। विमोचितावास जं परोधं च। (चा.३४)

विमोह वि [विमोह] विपर्यय, उल्टाज्ञान, विपरीत ज्ञान। संसयविमोहविब्भमविवज्जियं। (निय.५१)

विमोहिय वि [विमोहित] मोह को प्राप्त, मोहासक्त। (मो.६७) विसएसु विमोहिया मूढा। (मो.६७)

विम्हिय पुं [विस्मय] आश्चर्य, अठारह दोषों में एक। विम्हियणिद्दा जणुव्वेगो। (निय.६)

विय अ [इव] तरह, इस प्रकार, जैसा। ते रोया वि य सयला। (भा.३८)

वियलिंदिअ पुं न [विकलेन्द्रिय] द्वीन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के जीव। (भा.२९) वियलिंदिए असीदी। (भा.२९)

वियप्प सक [वि+कल्पय्] भेदभाव को प्राप्त होना, संशय करना, विचार करना। ण वियप्पदि णाणादो। (पंचा.४३)

वियप्प पुं [विकल्प] भेद, प्रकार। (स.११०, प्रव.ज्ञे.३२, प्रव.चा.२३, निय.२०) भणिदो भेदो दु तेरहवियप्पो। (स.११०)

वियल सक [वि+गल्] टपकना, गलना, घटना। इंदियबलं ण वियलइ। (भा.१३१)

वियर सक [वि+चर्] विचरना, घूमना, परिभ्रमण करना। चोरो त्ति जणम्मि वियरंतो। (स.३०१) वियरंत (व.कृ.स.३०१)

वियाण सक [वि+ज्ञा] जानना, समझना, अनुभव करना। (पंचा.७७,स.३७,प्रव.६४,द्वा.३)णाणी कम्मफलं वियाणेदि। (स.३१८)वियाणादि/वियाणेदि/वियाणाए(व.प्र.ए.प्रव.चा.३३, स.३१८ ,२८८) वियाणीहि/वियाणेहि/वियाण/वियाणाहि (वि./आ.म.ए.पंचा.४०,८१,७७,६६)वियाणंत (व.कृ.स.१८६) वियाणित्ता (सं.कृ.स.१४८) कुच्छियसीलं जणं वियाणित्ता। (स.१४८) वियाणत्ता/वियाणिच्चा (सं.कृ.प्रव.चा.२२,द्वा.३)

विरअ वि [विरत] निवृत्त, राग से मुक्त, वृत्ति परिवर्तन,

वैराग्ययुक्त। (मो.१३, चा.३५, सू.११) विरओ मुच्चेइ विविहकम्मेहिं। (मो.१३)

विरइ स्त्री [विरति] निवृत्ति, विश्राम, सांसारिक वासनाओं के प्रति उदासीनता। (मो.१६) कुणह रई विरइ इयरम्मि। (मो.१६)

विरज्ज अक [वि+रञ्ज्] विरक्त होना, उदासीन होना, रागरहित होना। (स.२९३, शी.३) विसएसु विरज्जए दुक्खं। (शी.३)

विरत्त वि [विरक्त] उदासीन, विरागी। (शी.४) विसए विरत्तमेत्तो। **-चित्त** पुं न [चित्त] विरागमन, रागरहित चित्त। विसएसु विरत्तचित्ताणं। (मो.७०)

विरद देखो विरअ। (निय.१२५, पंचा.१४३) विरदो सव्वसावज्जे। (निय.१२५)

विरदि देखो विरइ। (स.१३४) सोहणमसोहणं वा कादव्वो विरदिभावो वा। **-भाव** पुं [भाव] विरागभाव, निवृत्ति भाव। (स.१३४)

विरह पुं [विरह] वियोग, विछोह, व्यवधान। कुद्दाणविरहिया। (बो.४५)

विरहिद वि [विरहित] रहित, मुक्त। मोहादीहिं विरहिदा। (प्रव.४५)

विराग पुं [विराग] राग का अभाव, वैराग्य। (स.१५०, प्रव.९२, निय.१५२) **-चरिय** न [चरित] वीतराग चारित्र, विरागी का आचरण। (प्रव.९२, निय.१५२) आगमकुसलो विरागचरियम्मि। (प्रव.९२) **-संपत्त** वि [संप्राप्त] विराग को प्राप्त। (स.१५०)

मुंचदि जीवो विरागसंपत्तो। (स.१५०)

विराधग वि [विराधक] तोड़ने वाला, खण्डन करने वाला। (मो.९८) जिणलिंगविराधगो णिच्चं। (मो.९८)

विराहण न [विराधन] खण्डन, भङ्ग। (निय.८४) मोत्तूण विराहणं विसेसेण। (निय.८४)

विरुद्ध वि [विरुद्ध] विपरीत, प्रतिकूल, उल्टा। (पंचा.५४) अण्णोण्णविरुद्धमविरुद्धं। (पंचा.५४)

विलअ/विलय पुं [विलय] विनाश, व्यय, प्रलय, विलय। जो हि भवो सो विलओ। (प्रव.ज्ञे.२७)

विवज्जिअ/विवज्जिय वि [विवर्जित] रहित, वर्जित, निषेध। (निय.५९, भा.१२२ मो.४५) मेहुणसण्णविवज्जिय। (निय.५९) **-भाव** पुं [भाव] भावरहित। (निय.११२) मदमाणमायलोहविवज्जियभावो। (निय.११२)

विवर न [विवर] अन्तःस्थान, अन्तराल, गड्ढा, छेद। जं देदि विवरमखिलं। (पंचा.९०)

विवरीअ/विवरीद/विवरीय वि [विपरीत] विरोधी, नियमविरुद्ध, मिथ्या। (स.२५०, प्रव.चा.५५,निय.३, चा.३३, मो.५४) णाणी सत्तो दु विवरीदो। (स.२५३) **-अभिणिवेस** पुं [अभिनिवेश] विपरीत आग्रह। (निय.१३९) विवरीयाभिणिवेसं। **-परिहरत्थ** पुं न [परिहरार्थ] विपरीत का परिहार करने के लिए। विवरीयपरिहरत्थं। (निय.३) **-भासण** न [भाषण] विपरीत कथन, मिथ्याप्रतिपादन। (चा.३३)

कोहभयहासलोहापोहाविवरीयभासणा। (चा.३३)

विवाग पुं [विपाक] कर्म परिणाम, कर्मोदय, सुख-दुःखादि भोगरूपकर्मफल। (स.१९९)-**उदअ** पुं [उदय] विपाक उदय। (स.१९९) तस्स विवागोदओ हवदि एसो। (स.१९९)

विवास पुं [विवास] देशनिर्वासन, निष्कासन, दूसरी ओर निवास। (प्रव.चा.१३) अधिवासे य विवासे।

विव्वाह पुं [विवाह] व्याह, परिणय, जीवनबंधन। जो जोडदि विव्वाहं। (लिं.९)

विविह वि [विविध] नाना प्रकार का, अनेक प्रकार, बहुरूपी, भांति-भांति का। (पंचा.६४, स.१९८, प्रव.७०, भा.२६, मो.१३) उदयविवागो विविहो। (स.१९८) -**कम्म** पुं न [कर्मन्] विविध कर्म, नाना प्रकार के कर्म। (मो.१३) विरओ मुच्चेइ विविहकम्मेहिं। (मो.१३) -**लक्खण** पुं न [लक्षण] नाना प्रकार के लक्षण, विविधलक्षण, अनेक स्वरूप। (प्रव.ज्ञे.५) इह विविहलक्खणाणं। (प्रव.ज्ञे.५) विविहो (प्र.ए.स.१९८) विविहाणि (प्र.ब.प्रव.७४) विविहं (द्वि.ए.प्रव.७०) विविहे/विविहाणि। (द्वि.ब.स.९८) विविहेण (तृ.ए.पंचा.१४७) विविहेहिं (तृ.ब.पंचा.६४)

विस पुं न [विष] जहर, गरल, हलाहल। (स.३०६, भा.२५, शी.२२) विसयविसपुप्फफुल्लिय। (भा.१५७) -**कुंभ** पुं .[कुम्भ] विषकलश, विषघट। (स.३०६) आचार्य कुन्दकुन्द ने प्रतिक्रमण, प्रतिसरण, परिहार, धारणा, निवृत्ति, निन्दा, गर्हा और शुद्धि,

इन आठ को विषकुम्भ कहा है। (स.३०६) **-परिहय** वि [परिहत] विष से पीड़ित, विष से दुःखित। विसयविसपरिहयाणं। (शी.२२) **-पुप्फ** न [पुष्प] विषपुष्प।(भा.१५७) **-वेयणाहद** स्त्री [वेदनाहत] विष वेदना से पीड़ित। मरिज्ज विसवेयणाहदो जीवो। (शी.२२)

विसंवादिणि वि [विसंवादिन्] असत्य, अप्रमाणिक, मिथ्या। (स.३)

विसद वि [विशद्] निर्मल, स्वच्छ, प्रत्यक्ष। (पंचा.१) तिहुअणहिदमधुरविसदवक्काणं। (पंचा.१)

विसम वि [विषम] विषमता लिए हुए, असमान, एक-सा नहीं। तेकालणिच्चविसमं। (प्रव.५१)

-विसय पुं [विषय] 1. इन्द्रिय द्वारा गृहीत होने योग्य पदार्थ, कामभोग, सांसारिक विषय,भोगविलास। (पंचा.१२९, स.२२७, प्रव.२६ भा.१५, द.१७, शी.२) विसयादो तस्स ते भणिदा। (प्रव.२६)**-अतीद** वि [अतीत]विषयों से रहित, विषयों से परे। विसयातीदं अणोवममणंतं।(प्रव.१३) **-अत्थ** पुं [अर्थ] विषयार्थ, विषय का प्रयोजन। विसयत्थं सेवए ण कम्मरयं। (स.२२७) **आसत्त** वि [आसक्त] विषयों में तत्पर, विषयों में लीन। (शी.२३) **-कसाय** पुं [कषाय] विषय कषाय। जदि ते विसयकसाया। (प्रव.चा.५८)

-ग्गह न [ग्रहण] विषयग्रहण, इन्द्रिय जन्य विषयों को स्वीकारना। तेहिं दु विसयग्गहणं। (पंचा.१२९) **-तण्हा** स्त्री[तृष्णा] विषयों की अभिलाषा, इन्द्रिय सम्बन्धी सुखों की

इच्छा। (प्रव.७४) जणयंति विसयतण्हं। **-बल** न [बल] विषयों की शक्ति, विषयों का पराक्रम। विसयबलो जाव वट्टए जीवो। (शी.४) **-राग** पुं [राग] विषयों के प्रति अनुराग। जावद्धा विसय-रायमोहेहिं। (शी.२७) **-लोल** वि [लोल] विषयों के प्रति लम्पटता। जइ विसयलोलएहिं (शी.२६) **-वस** वि [वश] विषयों के आधीन। विसयवसेण दु सोक्खं। (प्रव.६६) **-विरत्त** वि [विरक्त] विषयों से विरक्त, विषयों से उदासीन। (प्रव.ज्ञे.१०४,मो.६८,शी.३२) जाए विसयविरत्तो। (शी.३२) **विराग** वि [विराग] विषयों से विरक्त। सीलं विसयरागो। (शी.४०) **-विस** पुं न [विष] विषयरूपी विष, इन्द्रियों सम्बन्धी विषय-विष। विसयविसपरिहया। (शी.२२) **-सुह** न [सुख] विषयसुख। विसयसुहविरेयणं अमिदभूयं।(द.१७) **-सोक्ख** न [सौख्य] विषयसुख। दुहिदा तण्हादि विसयसोक्खाणि (प्रव.७५)2.देश, क्षेत्र।अम्हं गामविसयणयरट्ठं। (स.३२५)

विसाल वि [विशाल] विस्तृत, बड़ा। वीरं विसालणयणं। (शी.१)

विसिट्ठ वि [विशिष्ट]1. संयुक्त, सहित, युक्त। अज्झवसाणविसिट्ठो। (पंचा.३४) 2.विशेषयुक्त, सुसभ्य, शिष्ट। (प्रव.चा.३) कुलरूववयोविसिट्ठमिट्ठदरं। (प्रव.चा.३)

विसुद्ध वि [विशुद्ध] निर्मल, निर्दोष, पवित्र, विशद। (प्रव.२, निय.४८, भा.९२, मो.६, चा.१५ बो.५२) उवओगो विसुद्धो जो। (प्रव.१५)**-झाण** न [ध्यान] विशुद्ध ध्यान, शुक्ल ध्यान। विसुद्धझाणस्स णाणजुत्तस्स। (बो.६) **-प्पा** पुं [आत्मन्] विशुद्ध

आत्मा। (निय.४८, प्रव.ज्ञे.१०२, मो.६) अणिंदिओ केवलो विसुद्धप्पा। (मो.६) **-भाव** पुं [भाव] विशुद्धभाव, निर्मल परिणाम। (भा.१६०) विसुद्धभावेण सुयणाणं। (भा.९२) **-मइ** स्त्री [मति] विशुद्धमति, निर्मलबुद्धि। जुवईजणवेड्डिओ विसुद्धमई। (भा.५१) **-सम्मत्त** न [सम्यक्त्व] विशुद्ध सम्यक्त्व,सम्यग्दर्शन की निर्मलता। (चा.१५,द.३३) कहंति जीवा विसुद्धसम्मत्तं। (द.३३)

विसेस सक [वि+शेषय्] विशेषयुक्त करना, विशेषण से युक्त करना, व्यवच्छेद करना। (प्रव.चा.६१) विसेसिदव्वो त्ति उवदेसो। विसेसिदव्वो (वि.कृ.प्रव.चा.६१)

विसेस पुं न [विशेष] पर्याय, धर्म, गुण, अतिशय, भिन्नता। (पंचा.५१, स.६२, प्रव.७७, निय.८४) सिद्धंतं जइ ण दीसइ विसेसो। (स.३२२) **-अंतर** न [अन्तर] विशेष अन्तर, विशेष भेद। (स.७१) णादं होदि विसेसंतरं। **-द** वि [ता] भिन्नता, विशेषता। विसेसदो दव्वजादीणं। (प्रव.३७)

विसेसिद वि [विशेषित] विशेषण युक्त, अतिशय युक्त, गुणयुक्त। (प्रव.९२) धम्मो त्ति विसेसिदो समणो। (प्रव.९२)

विसोहि स्त्री [विशोधि] विशुद्धि, निर्मलता, पवित्रता। (स.५४) **-ट्ठाण** न [स्थान] पवित्र स्थान, विशुद्धि स्थान। णेव विसोहिट्ठाणा। (स.५४)

विस्स वि [विश्व] अनेक,लोक,छह द्रव्यों का समूह। (पंचा.४३) **-रूव** पुं न [रूप] अनेक रूप, अनेक प्रकार का। तम्हा दु

विस्सरूवं। (पंचा.४३)

विस्सस पुं [वैस्रस] स्वाभाविक गुण। (स.४०६) पाउगिओ विस्संसो वा वि।(स.४०६)

विह पुं स्त्री [विध] भेद, प्रकार। (सू.५)

विहत्त देखो, विभत्त। (स.२९६) जह पण्णाइ विहत्तो। (स.२९६)

विहत्ति देखो विभत्ति। (मो.४१) जीवाजीवविहत्ती।

विहर सक [वि+हृ]विहार करना, गमन करना, जाना। (स.४१२, सू.९) तत्थेव विहर णिच्चं। (स.४१२) विहरइ/विहरदि (व.प्र.ए.सू.९द.३५) विहर (वि./आ.म.ए.स.४१२)

विहल वि [विफल] निष्फल, निरर्थक, अनुपयोगी, व्यर्थ, फलरहित। बाहिरचागो विहलो। (भा.३)

विहव पुं [विभव] समृद्धि, ऐश्वर्य, वैभव, सम्पत्ति, धन दौलत। (प्रव.६) देवासुरमणुयरायविहवेहिं।(प्रव.६)

विहार पुं [विहार] विचरण, गमन, गति,भ्रमण। (प्रव.४४,प्रव.चा.१५) आवसधे वा पुणो विहारे वा। (प्रव.चा.१५)

विहाव देखो विभाव। (निय.१०७) विहावगुणपज्जएहिं वदिरित्तं। (निय.१०७) **-गुण** पुं न [गुण] विभावगुण। विहावगुणमिदि भणिदं। (निय.२७) **-णाण** न [ज्ञान] विभावज्ञान। (निय.११) विकल्पयुक्त ज्ञान विभावज्ञान है। इसके दो भेद हैं--सम्यग्ज्ञान और मिथ्याज्ञान। मति, श्रुत,अवधि और मनः पर्यय ये

सम्यग्विभाव ज्ञान हैं तथा कुमति, कुश्रुत और विभङ्गावधि, तीन मिथ्याविभावज्ञान हैं। (निय.११,१२) **-पज्जाय** पुं [पर्याय] विभावपर्याय, विभावक्रम, विभावपरिपाटी। (निय.२८) खंधसरूवेण पुणो परिणामो सो विहावपज्जयो।(निय.२८)

विहि पुं [विधि] प्रणाली, रीति, पद्धति, साधन, नियम, शास्त्रोक्त विधान। (द.३६) **-बल/वल** न [बल] विधिपूर्वक, विधि के योग से।कम्मं खविऊण विहिवलेणस्सं। (द.३६)

विहिअ वि [विहित] कृत, निर्मित, कथित, स्वीकृत। (स.१५६) जदीण कम्मक्खओ विहिओ।

विहिद वि [विहित] चेष्टित, कथित। (प्रव.चा.५६) छदुमत्थविहिदवत्थुसु।

विहीण वि [विहीन] वर्जित, रहित। (स.२०५, प्रव.७,चा.४२) णाणगुणेण विहीणा। (स.२०५)

विहुय वि [विधुत] व्यक्त, नष्ट। (ती.भ.६) **-रयमल** पुं न [रजोमल] मैल से रहित। विहुयरयमला पहीणजरमरणा। (ती.भ.६)

विहूइ स्त्री [विभूति] ऐश्वर्य, वैभव। देवाण गुणविहूई। (भा.१५)

वीदराग वि [वीतराग] रागरहित, वीतराग।सो तेण वीदरागो। (पंचा.१७२)

वीय न [बीज] बीज, अङ्कुरित होने योग्य धान्य। (स.३८७, प्रव.चा.५५, भा.१२५) वीयं दुक्खस्स अट्ठविहं। (स.३८८)

वीयराग/वीयराय देखो वीदराग। (बो.९,निय.१२२,चा.१६)

णिम्मोहा वीयरायपरमेट्ठी। (चा.१) **-भाव** पुं [भाव] वीतराग। भाव परिचत्ता वीयरायभावेण। (निय.१२२)

वीर पुं [वीर] 1.भगवान महावीर, अन्तिम तीर्थङ्कर। (प्रव.ज्ञे१४, शी.१, निय.१) णमिऊण जिणं वीरं। 2.वि.[वीर] पराक्रमी, शूरवीर। आराहणणायगं वीरे। (भा.१२३)

वीरिय पुं न [वीर्य] शक्ति, सामर्थ्य। (प्रव.२ शी.३७) णाणदंसणचरित्ततववीरियायारे। (प्रव.२) **-आचार** पुं [आचार] वीर्य का आचार, शक्तिमय आचार। (प्रव.चा.२) **-आवत्त** पुं [आवर्त] वीर्य के आधीन, शक्ति विशेष। (शी.३७) दंसणसुद्धी य वीरियावत्तं। (शी.३७)

वीसट्ठ पुं [विश्वस्त] विश्वास, आस्था। महिलावग्गम्मि देदि वीसट्ठो। (लिं.२०)

वीहत्थ वि [वीभत्स] घृणित,क्रूर,भयावह।असुहीवीहत्थेहिं य। (भा.१७)

वुच्च सक [वच्] बोलना, कहना। (स.४५, पंचा.१३६, प्रव.ज्ञे.३) जस्स फलं तं वुच्चइ। (स.४५)

वुज्झ सक [बुध्] जानना, ज्ञान करना, समझना। (बो.२) बुज्झामि समासेण। (बो.२)

वुज्झद वि [बुध्यमान] जानने वाला, समझने वाला। पच्चक्खादीहिं वुज्झदो णियमा। (प्रव.८६)

वुत्त वि [उक्त] कथित, प्रतिपादित। वचचइदालत्तयं च वुत्तेहिं। (बो.४२)

वेअ पुं [वेद] कर्म विशेष, मोहनीय कर्म का एक भेद। (बो.३२)

वेउव्विअ वि [वैक्रियिक] अनेक प्रकार की प्रक्रिया करने वाला, शरीर विशेष। (प्रव.ज्ञे.७९) देहो वेउव्विओय तेजयिओ।

वेज्ज पुं [वैद्य] चिकित्सक, भिषक्, वैद्य। वेज्जो पुरिसो ण मरणमुवयादि। (स.१९५)

वेज्जावच्च देखो विज्जावच्च। वेज्जावच्चणिमित्तं। (प्रव.चा.५३)

वेज्झ वि [वेद्य] जानने योग्य , अनुभव करने योग्य। जिणभवणं अह वेज्झं। (बो.४२)

वेज्झय वि [वेद्यक] अभ्यास करने योग्य , अनुभव करने योग्य। (बो.२०) -**विहीण** वि [विहीन] अभ्यास से रहित,अनुभव से रहित। रहिओ कंडस्स वेज्झयविहीणो। (बो.२०)

वेणइय न [वैनयिक] मिथ्यात्व विशेष, सभी धर्मों एवं सभी देवों पर विश्वास करना। (भा.३२) वेणइया होंति बत्तीसा। (भा.१३६)

वेद पुं [विद] वेदनीय, कर्म का एक भेद। (पंचा.१५३)

वेद/वेय सक [वेद्‌य] अनुभव करना, भोगना। (पंचा.५७, स.३८७, शी.१६) जो वेददि वेदिज्जदि। (स.२१६) वेददि/वेदेदि/वेदयदि (व.प्र.ए.स.२१६,३१६,८५) वेदिज्जदि (व.प्र.ए.स.२१६) वेदंत/वेदयमाण (व.कृ.स.३८८, पंचा.५७) वेदेऊण (सं.कृ.शी.१६) तं चेव पुणो वेयइ। (स.८४)

वेदग वि [वेदक] भोगने वाला, अनुभव करने वाला। ण वि तेसिं वेदगो आदा। (स.१११)

वेदणा/वेयणा स्त्री [वेदना] पीड़ा, कष्ट, वेदना। (प्रव.७१,

भा.१२४) ते देहवेदणट्ठा। (प्रव.७१)

वेयण पुं न [व्यजन] 1.बेना, पंखा। (भा.१०) 2.न [वेदन] जानना, ज्ञान, अनुभव।

वेर न [वैर] विरोध, शत्रुता, वैमनस्य, द्रोह। (निय.१०४) वेरं मज्झं ण केणवि।

वेरग्ग न [वैराग्य] विरागभाव, सांसारिक, विषय वासनाओं के प्रति उदासीनता,विरक्ति। वेरग्गपरो साहू। (मो.१०१)

वोच्छ सक [वच्] कहना, बोलना। (स.१, पंचा.१०५, निय.१, चा.२, मो.२, भा.१, लिं.१, द्वा.१) वोच्छामि णियमसारं। (निय.१)

वोसट्ठ वि [दे] व्युत्सर्ग, त्यक्त, छोड़ा हुआ, खाली। वोसट्ठचत्तदेहा। (द.३६)

वोसर सक [व्युत्+सृज्] परित्याग करना, छोड़ना। (निय.९९) सव्वं तिविहेण वोसरे। (निय.१०३) वोसरे (व.उ.ए.निय.१०३) वोसरित्ता (सं.कृ.निय.१०४)

वोसर वि [व्युत्सर्ग] कायरहित, शरीर के ममत्व का त्याग। (बो.१२) **-पडिमा** स्त्री [प्रतिमा] कायरहित मूर्ति, कायोत्सर्ग की मुद्रा। वोसरपडिमा धुवा सिद्धा। (बो.१२)

स

स पुं [स्व] 1.खुद, निज, अपनी। (प्रव.३०, मो.३१,स.२) दुद्धज्झसियं जहा सभासाए।(प्रव.३०)**-विहव** पुं [विभव] निज

अनुभव,निज ज्ञान।(स.५)-**समय** पुं [समय] स्वसमय। (स.२)
2.वि [स] सहित,युक्त,संलग्न।(पंचा.२,प्रव.४१,सू.११)
स-सव्वसिद्धे विसुद्धसब्भावे। (प्रव.२) -**उत्त** वि [उक्त] संवाद सहित। एसणसुद्धिसउत्तं। (चा.३४) -**कम्म** पुं न [कर्मन्] कर्मसहित। (प्रव.ज्ञे.२७) -**गुण** पुं न [गुण] गुणसहित। (बो.२७) दव्वे भावे हि सगुणपज्जाया। -**णिव्वाण** न [निर्वाण] मुक्ति सहित। चदुगदिणिवारणं सणिव्वाणं। (पंचा.२) -**पज्जाय** पुं [पर्याय] पर्याय सहित। (प्रव.ज्ञे.३) गुणवं च सपज्जायं -**पदेस** पुं [प्रदेश] प्रदेश सहित। अपदेसं सपदेसं। (प्रव.४१) -**वियप्प** पुं [विकल्प] विकल्पसहित। जाणदि सो सवियप्पं। (प्रव.ज्ञे.६२) -**सुरासुरमाणुस** पुं[सुरासुरमानुष]सुर,असुर और मनुष्य सहित। स-सुरासुरमाणुसे लोए। (सू.११)

सं अ [सम्] योग्यता। णामे ठवणे हि य सं। (बो.२७)

संकम सक [सं+क्रम्] प्रवेश करना, गति करना, बदलना। सो अण्णम्हि दु ण संकमदि। (स.१०३)

संका स्त्री [शङ्का] संशय, संदेह। इत्थीसु ण संकया झाणं। (सू.२६)

संकिद वि [शङ्कित] शङ्कित होता हुआ, शङ्का वाला। वज्झामि अहं तु संकिदो चेया। (स.३०३)

संकिलेस पुं [संक्लेश] दुःख, कष्ट। जीवस्स ण संकिलेसठाणा। (स.५४) -**ठाण** न [स्थान] संक्लेश स्थान। (स.५४)

संक्कार पुं [संस्कार] शारीरिक संस्कार। तेल, इत्र, साबुन, मञ्जन आदि का प्रयोगकरना। संरीरसंक्कार वज्जिआ रुक्खा। (बो.५१)

संख पुं न [शङ्ख] 1. शङ्ख, वाद्य विशेष, द्वीन्द्रिय जीव विशेष। (पंचा.११४, स.२२०, बो.३७) जइया स एव संखो। (स.२२२) 2.न [सांख्य] दर्शन विशेष, कपिलमुनि प्रणीत दर्शन, सांख्यमत। (स.११७, १२२) **-उवदेस** पुं [उपदेश] सांख्य शिक्षा, सांख्य विचार। एवं संखुवएसं। (स.३४०) **-समअ** पुं [समय] सांख्यमत। पसज्जदे संखसमओ वा। (स.१२२)

संखव सक [सं+क्षपय्] विनाश करना, क्षय करना। तम्हा ते संखइदव्वा। (प्रव.८४) संखइदव्व (वि.कृ.)

संखा स्त्री [संख्या] गिनती, गणना। (पंचा.४६, प्रव.ज्ञे.४९) संखा विसया य होंति ते बहुगा। (पंचा.४६) **-अतीद** वि [अतीत] असंख्य, असंख्यात, गिनती से परे। संखातीदा तदो अणंता य। (प्रव.ज्ञे.४९)

संखिज्ज/ ंखेज्ज वि [संख्यात] संख्यात,गिनने योग्य संख्या। (निय.३१,चा.२०) संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसा। (निय.३५.)

संखेव पुं [संक्षेप] संक्षेप, स्वल्प, कम,थोड़ा। (प्रव.ज्ञे.४२, चा.४४, भा.११८) संखेवेणेव वज्जरियं। (भा.११८) संखेवेण (तृ.ए.चा.४४,भा.११८) संखेवादो (पं.ए.प्रव.ज्ञे.४२) संखेवि (अप.स.ए.भा.१२७)

संग पुं न [सङ्ग] 1.आसक्ति, परिग्रह, विषयादिक के प्रति राग। (प्रव.चा.२४, चा.३०) पंचमसंगम्मि विरई य। (चा.३०) **-चाअ** पुं [त्याग] परिग्रह का त्याग। पव्वज्ज संगचाए। (चा.१६) 2.संसर्ग, साथ,सङ्गति, सम्पर्क, सम्बन्ध।

(बो.५६,भा.४०,स.ज.वृ.१२५) जो संगं तु मुइत्ता। (स.ज.वृ.१२५)

संगाम पुं [संग्राम] युद्ध,लड़ाई। सुहडो संगाम एहिं सव्वेहिं। (मो.२२)

संघाद पुं [संघात] 1. समूह, समुदाय, संघ। (प्रव.ज्ञे.३७) संघादादो य भेदादो। (प्रव.ज्ञे.३७) 2.सहंनन का पूरक कर्म, नामकर्म का एक भेद। संठाणा संघादा। (पंचा.१२६)

संचअ/संचय पुं [संचय] समूह,संग्रह। (स.७०, प्रव.ज्ञे.६४) तस्स कम्मस्स संचओ होदि। (स.७०)

संचिद वि [संचित] संगृहीत, एकत्रित, संकलित। कम्मं खवदि संचिदं।(मो.३०)

संछण्ण वि [संछन्न] ढ़का हुआ, आच्छादित। (पंचा.६९)

संजअ/संजद वि [संयत] साधु, मुनि, व्रती, संयमी। (स.३५८,प्रव.चा.४०, निय.१४४, द.२६,सू.२०, बो.१०, भा.१, मो.५२) जो पांच महाव्रतों से युक्त तथा तीन गुप्तियों से सहित है, वह संयत है। पंचमहव्वयजुत्तो तिहिं गुत्तिहिं जो स संजदो होई। (सू.२०)

संजम पुं [संयम] व्रत की एकाग्रता, व्रत , विरति। (स.४०४, पंचा.१७०, प्रव.१४, निय.११३, द.९, सू.११, बो.१,चा.५,भा.९४, शी.६) ज्ञान ही सम्यग्दृष्टि और संयम है। णाणं सम्मादिट्ठिं दु संजमं। (स.४०४) **-गुण** न [गुण] संयमगुण। (द.३०)तवेण चरिएण संजमगुणेण।ज्ञान,दर्शन,तप और चारित्र

संयम होता है। (द.३०) **-घाद** पुं [घात] संयम का विनाश। संजमघादं पमुत्तूण। (भा.९४) **-चरण** न [चरण] संयम का आचारण,संयम का एक भेद। (चा.२१) पांच इन्द्रियों का दमन, पांचव्रत,इनकी पच्चीस भावनायें,पांच समितियां और तीन गुप्तियां यह निरागार संयमचरणचारित्र है। (चा.२७) **-पडिवण्ण** वि [प्रतिपन्न] संयम को प्राप्त, संयम को अङ्गीकार करने वाला। सो संजमपडिवण्णो। (द.२४) **मुद्दा** स्त्री [मुद्दा] संयममुद्रा। (बो.१८) **-लद्धिठाण** न [लब्धिस्थान] संयम लब्धिस्थान। (स.५४) **-संजुत्त** वि [संयुक्त] संयमसहित, संयम से युक्त।संजमसंजुत्तस्स य।(बो.१९)**-सहिद** वि [सहित] संयम सहित, संयम से युक्त। संयमसहिदो य तवो।(शी.६)**-सुद्ध** वि [शुद्ध] संयम से शुद्ध, संयम से पवित्र। संजमसुद्धं सुवीयरायं च। (बो.१५) **-सोहि** स्त्री [शोधि] संयम की शुद्धता। संजमसोहिणिमित्तं। (चा.३७) **-हीण** वि [हीन] संजम से हीन। संजमहीणो य तवो। (शी.५)

संजाद/संजाय वि [संजात] उत्पन्न, पैदा हुआ। (प्रव.३८, निय.१६) कम्ममहीभोगभूमिसंजादा। (निय.१६)

संजाय अक [सं+जन्] उत्पन्न होना। (प्रव.ज्ञे.७८) संजायंते देहा। संजायंते (व.प्र.ब.प्रव.ज्ञे.७८)

संजुत्त वि [संयुक्त] मिला हुआ, सम्मिलित। (पंचा.६, निय.९, द.३५, सू.१२) णाणेण य दंसणेण संजुत्तो। (पंचा.४०)

संजुद वि [संयुत] सहित,संयुक्त। (पंचा.६८, प्रव.१४)

संजमतवसंजुदो विगदरागो। (प्रव.१४)

संजोग पुं [संयोग] संबंध,मेल मिलाप-मिश्रण। (निय १०२, भा.५९, स.४२) अवरे संजोगेण दु । (स.४२) **-लक्खण** पुं न [लक्षण] संयोग लक्षण । (निय.१०२, भा.५९) सव्वे संजोगलक्खणा। (निय.१०२)

संठव सक [सं+स्थापय्] स्थापना करना। समभावे संठवित्तु परिणामं। (निय.१०९) संठवित्तु (सं.कृ.)

संठाण न [संस्थान] नाम कर्म विशेष, जिसके उदय से शरीर का आकार होता है, आकार, आकृति। (स.६०, पंचा.४६, प्रव.ज्ञे.६०,निय.४५, भा.६४) ववदेसा संठाणा। (पंचा.४६)

संढ पु [शण्ढ] नपुंसक,हिजड़ा। पसुमहिलसंढसंगं। (बो.५६)

संत वि [शान्त] 1.शमयुक्त, क्रोध रहित। (बो.२६,५०,प्रव.चा.७२) अवलंबियभुयणिराउहा संता। (बो.५०) **-भाव** पुं [भाव] शान्तभाव हवेइ जदि संतभावेण। (बो.२६) 2. पुं [सान्त] अन्त सहित। (पंचा.५३)

संतत वि [संतत] अविच्छिन्न, अखण्डित। हिंसा सा संतत्तिय त्ति मदा। (प्रव.चा.१६)

संति पुं [शान्ति] शान्तिनाथ, सोलहवें तीर्थङ्कर। (ती.भ.४)

संतुट्ठ वि [संतुष्ट] संतोषयुक्त संतोष को प्राप्त। (स.२०६) संतुट्ठो होहिणिच्चमेदम्हि।

संतोस पुं [सन्तोष] तृप्ति, लोभ का अभाव, शान्ति, हर्ष। (निय.११५, शी.१९) संतोसेण य लोहं जयदि।

संथुण सक [सं+स्तु] स्तुति करना,प्रार्थना करना।(लिं.२१) णिच्च संथुणदि पोसए पिंडं। (लिं.२१)

संथुद/संथुय वि [संस्तुत] प्रशस्त, जिसकी स्तुति की गई हो, पूजनीय। (स.२८, ३७३, भा.७५) मण्णदि हु संथुदो। (स.२८)

संथुदि स्त्री [संस्तुति] स्तुति, श्लाघा, प्रशंसा। (स.२६) तित्थयरायरियसंथुदी चेव। (स.२६)

संदेह पुं [संदेह] संशय, शङ्का, अनिश्चितता। (निय.१७१, मो.३६) परिहरदि परं ण संदेहो। (मो.३६)

संधुण सक [सं+धुन्] नष्ट करना, उड़ा देना। (पंचा.१४५) णाणं सो संधुणोदि कम्मरयं। (पंचा.१४५)

संपओग पुं [संप्रयोग] सम्बन्ध, संयोग। (पंचा.१७०) संजमतवसंपओगस्स।

संपज्ज पुं [सं+पद्] सम्पन्न होना, प्राप्त होना, सिद्ध होना। (प्रव.६

संपडि अ [सम्प्रति] इस समय,अब।(स.३८५)संपडि य अणेयवित्थरविसेसं। **-काल** पुं [काले] वर्तमानकाल। संपडिकाले भणिज्ज रूवमिणं। (स.ज.वृ.१८६)

संपण्ण वि [संपन्न] युक्त, सम्बद्ध, पूर्णता को प्राप्त। णाणभत्तिसंपण्णो। (पंचा.१६६)

संपद अ [साम्प्रतम्] अधुना, अब, इस समय। (निय.३२) भावि संपदा समया।

संपदि देखो संपडि (बो.२७) चउणा गदि संपदि मे।

संपरिक्ख सक [संपरि+ईक्ष्] सम्यक्परीक्षा करना, अच्छी तरह से

जाँचना। (द्वा.१८) अपत्तमिदि संपरिखेज्जो। संपरिखेज्जो (वि./आ.प्र.ए.द्वा.१८)

संपसंस वि [संप्रशंस] प्रशंसायोग्य। (चा.१३) उच्छाहभावणासंपसंससेवा। (चा.१४)

संपुण्ण वि [संपूर्ण] पूर्ण, पूरा, सम्पूर्ण। (प्र.चा.७२, निय.१४७) **-सामण्ण** न [श्रामण्य] सम्पूर्ण श्रमणता, सम्पूर्ण साधुपन। इह सो संपुण्णसामण्णो। (प्रव.चा.७२)

संबंध पुं [सम्बन्ध] संसर्ग, संग, संगति, संयोग। (स.५७) एएहि य संबंधो।

संबंधि वि [सम्बन्धिन्] सम्बन्ध रखने वाला। मादुपिदुसजणभिच्चसंबंधिणो। (द्वा.३)

संबद्ध वि [सम्बद्ध] सहित, युक्त। (प्रव.९१,८९) दव्वत्तणाहिसंबद्ध।(प्रव.८९)

संभव अक [सं+भू] संभावना होना, उत्पन्न होना। आदेसवसेण संभवदि। (पंचा.१४) संभवदि (व.प्र.ए.पंचा.१४)

संभव पुं [संभव] उत्पन्न, उत्पत्ति। (प्रव.१७,५१) ठिदिसंभवणाससंबद्धो। (प्रव.ज्ञे.७) **-परिवज्जिद** वि [परिवर्जित] उत्पत्ति रहित। (प्रव.१७) **-विहीण** वि [विहीन] उत्पत्ति से रहित। भंगो वा णत्थि संभवविहीणो। (प्रव.ज्ञे.८)

संभास पु [संभाष] संभाषण, वार्तालाप, समालाप। (प्रव.चा.५३) लोगिगजणसंभासा।

संभूद वि [संभूत] उत्पन्न, संजात, पैदा हुआ। (पंचा.१४८,

प्रव.ज्ञे.६०) जोगो मणवयणकायसंभूदो। (पंचा.१४८)

संमूढ वि [संमूढ] जड़, विमूढ, मुग्ध। आदवियप्पं करेदि संमूढो। (स.२२)

संवच्छर पुं [संवत्सर] वर्ष, साल। (पंचा.२५) मासोदुअयणसंवच्छरो त्ति। (पंचा.२५)

संवर पुं [संवर] कर्मनिरोध, नूतन कर्मास्रव का अभाव, सात तत्त्व एवं नव पदार्थों का एक भेद। (पंचा.१०८, स.१३, निय.१००, द्वा.२, भा.५८) आदा मे सवरो जोगो। (स.२७७) चल, मलिन और अगाढ दोषों को छोड़कर सम्यक्त्वरूपी दृढ़कपाटों के द्वारा मिथ्यात्वरूपी आस्रवद्वार का निरोध होना संवर है। (द्वा.६१) **-जोग**पुं[योग]संवर का योग।(पंचा.१४४) **-भावविमुक्क** वि [भावविमुक्त] संवर के भाव से रहित । (द्वा.६५)**-हेदु** पुं [हेतु] संवर का कारण। (द्वा.६४) संवर का हेतु ध्यान है। शुद्धोपयोग से जीव के धर्मध्यान और शुक्लध्यान होते हैं।

संवरण न [संवरण] निरोध, आवरण, आच्छादन। (पंचा.१४३, द्वा.६३) समस्त परद्रव्यों का त्याग करने वाले व्रती पुरुष के जब पुण्य और पाप दोनों प्रकार के योगों का अभाव हो जाता है। तब उसके शुभ और अशुभ कर्मों का संवरण होता है। (पंचा.१४३) शुभयोग की प्रवृत्ति, अशुभयोग का संवरण करती है। (द्वा.६३)

संवुक्क पुं [शम्बूक] क्षुद्र श । संवुक्कमादुवाहा। (पंचा.१४४)

संसग्ग पुं स्त्री [संसर्ग] सम्बन्ध, सम्मिश्रण, संपर्क, संगति। संसग्गं

रायकरणं च।(स.१४८)

संसण न [शंसन] प्रशंसा। (चा.११) मग्गणगुणसंसणाए।

संसत्त वि [संसक्त] संसर्ग, अनुरक्त। (चा.३५)-**वसहि** स्त्री [वसति] अनुराग पूर्ण निवास स्थान,निवास स्थान से राग। (चा.३५)

संसय पुं [संशय] सन्देह, शङ्का। संसयविमोहविब्भम। (निय.५१)

संसर सक [सं+सृ] चक्कर काटना, परिभ्रमण करना। (पंचा.२१ प्रव.ज्ञे.२८, मो.९५) संसारे संसरेइ सुहरहिओ। (मो.९५) संसरेइ (व.प्र.ए.) संसरमाण (व.कृ.पंचा.२१)

संसार पुं [संसार] नरक आदि गति में परिभ्रमण, एक जन्म से जन्मान्तर में गमन,संसार,लोक,जगत्। (पंचा.१२८,स.११७, प्रव.ज्ञे.२८,मो.८५,निय.१०५,भा.८५,शी.२२,द्वा.२) जीव अपने ही शुभाशुभ कर्मों से मोह के द्वारा आच्छन्न हो कर्त्ता-भोक्ता होता हुआ , सान्त एवं अनन्त संसार में परिभ्रमण करता है। (पंचा.६९) जीव जिनमार्ग को न जानता हुआ चिरकाल से जन्म, जरा,मृत्यु,रोग और भय से परिपूर्ण पांच प्रकार के संसार में परिभ्रमण करता है। (द्वा.२४)द्रव्य,क्षेत्र,काल,भाव और भव ये पाँच परिवर्तन ही संसार है। (विस्तार के लिए देखें- द्वा.२५ से ३८) -**कंतार** पुं न [कान्तार] संसार रूपी जङ्गल।(शी.२२) -**गमण** न [गमन] संसार गमन। (स.१५४) -**चक्क** न [चक्र] संसार चक्र। (पंचा.१३०) -**णिरोह** पुं [निरोह] संसार निरोध संसारणिरोहणं होइ। (स.१९२) -**त्थ** पुं न [अर्थ] 1.संसार का

प्रयोजन। 2.पुं [स्थ] संसारी,संसारस्थ। जो खलु संसारत्थो। (पंचा.१२८) जो मनुष्य सूत्र के अर्थ से रहित है, वह हरिहर के सदृश होने पर भी स्वर्ग को ही प्राप्त होता है। करोड़ों पर्यायों को धारण करता हुआ भी मुक्ति को प्राप्त नहीं होता वही संसारी है। (सू.८) **-देह** पुं न [देह] संसार और शरीर। (स.२१७) संसारदेहविसएसु। **-पम्मुक** वि [प्रमुक्त] संसार से रहित । संसारपमुक्काणं। (स.६१) **-भयभीद** संसार से भयभीत। संसारभयभीदस्स। (निय.१०५) **-महण्णव** पुं न [महार्णव] संसाररूपी महासागर। (मो.२६) **-वण** न [वन] संसाररूपी जङ्गल। भमिओ संसारवणे। (भा.११२) **-विणास** पुं [विनाश] संसार का नाश। (मो.८५) संसारविणासयरं। **-समावण्ण** वि [समापन्न] संसार को प्राप्त। (स.१६०) संसारसमावण्णो। **-सायर** पुं [सागर] संसारसमुद्र। णग्गो संसारसायरे भमई। (भा.६८)

संसारि/संसारिण वि [संसारिन्] संसारी,नरक- तिर्यञ्च-मनुष्य-देव गति में परिभ्रमण करने वाला। (पंचा.१२०, चा.२०, भा.५१) भव्वा संसारिणो अभव्वा य। (पंचा.१२०) पंचास्तिकाय में मिथ्यादर्शन, कषाय और योग से युक्त जीव को संसारी कहा है। (पंचा.३२)

संसिद वि [संश्रित] आश्रित,शरणगत। मिच्छत्तसंसिदेण दु। (द्वा.२८)

संसिदि वि [संसृति] संसार, जन्मन्। सुद्धणया संसिदी जीवा।

(निय.४९)

संसिद्धि वि [संसिद्धि] संसिद्धि, शुद्ध आत्मा की सिद्धि, आत्मसाधना। संसिद्धिराधसिद्धं। (स.३०४)

संहणण न [संहनन] शरीर रचना, अस्थि रचना, नामकर्म का एक भेद। (बो.४५, निय.४५) संठाणा संहणणा। (निय.४५)

सकल वि [सकल] सम्पूर्ण, पूर्ण, पूरा , सब । सकलं सगं च इदरं। (प्रव.५४)

सकीय वि [स्वकीय] अपने, निज। सकीयपरिणामो। (निय.११०)

सक्क पुं [शुक्र] 1.सौधर्म नामक प्रथम देवलोक का इन्द्र, इन्द्र विशेष। (द्वा.५) **-धणु** पुं [धनुष्] इन्द्रधनुष। (द्वा.५) 2.त्रि [शक्य] संभव, होने योग्य, अभिहित। (पंचा.१६८, स.८, प्रव.४८) जह णवि सक्कमणज्जो। (स.८)

सक्क अक [शक्] सकना, समर्थ होना, योग्य होना, शक्तिशाली होना। (स.२२०) निय.१५४, द.२२ मो.२१) णवि सो सक्कइ तत्तो। (स.३४२) सक्कइ/सक्केइ/सक्कदि (व.प्र.ए.निय.१०६, द.२२) सक्कए (व.प्र.ए.मो.२१)

सक्कार पुं [सत्कार] सम्मान, आदर। (प्रव.चा.६२)

सक्किरिया स्त्री [सक्रिया] क्रिया सहित, सक्रिय। सह सक्किरिया हवंति ण य सेसा। (पंचा.९८)

सक्खादं अ [साक्षात्] प्रत्यक्ष, प्रकट, आँखों के सामने। बहिरंग जदि हवेदि सक्खादं। (द्वा.७१)

सग वि [स्वक] आत्मीय, निजी, अपनी। (पंचा.१६७, स.२३४

प्रव.५४, नियं.१६७, मो.६१) सगं सभावं ण विजहंति। (पंचा.७) **-चरित्त/चरिय** न [चरित्र] स्वचरित्र। (पंचा.१५६,१५८,) सो सगचरियं चरदि जीवो। (पंचा.१५८) **-चारित्त** न [चारित्र] निज आचरण,आत्मचारित्र।(मो.६१) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] स्वद्रव्य, निजद्रव्य। (नियं.५०) सगदव्वमुवादेयं। **-पज्जय** पुं [पर्याय] स्वपर्याय, निजपर्याय। (प्रव.ज्ञे.४) गुणेहिं सगपज्जएहिं चिंतेहिं। **-परिणाम** पुं [परिणाम] स्वपरिणाम, निजस्वभाव। (पंचा.८९, स.७७, प्रव.ज्ञे.७५) सगपरिणामेहिं जायंते। (प्रव.ज्ञे ७५) **-ब्भाव** पुं [भाव] निजभाव। कोहादिसगब्भाव। (नियं.११४) **-समय** पुं [समय] स्वसमय, स्वसिद्धान्त। ते सगसमया मुणेदव्वा। (प्रव.ज्ञे.२) जो आत्मस्वरूप में स्थित है, वह स्वसमय है। (प्रव.ज्ञे.२)

सग्ग पुं न [स्वर्ग] देवों के निवास स्थान, देवलोक। (सू.८,मो.२३, प्रव.६६) सग्गं तवेण सव्वो वि। (मो.२३) **-सुह** न [सुख] स्वर्ग सुख। शुभपयोग से युक्त स्वर्ग सुख को प्राप्त करता है। सुहोवजुत्तो व सग्गसुहं। (प्रव.११)

सग्गंथ वि [सग्रन्थ] परिग्रह सहित।सायारं सग्गंथे। (चा.२१)

सचित्त वि [सचित्त] सजीव, चेतना सहित। (स.२०,चा.२२) सचित्ताचित्तमिस्सं वा। (स.२०)

सचेल वि [सचेल] वस्त्रसहित। (सू.२७) **-अत्थ** पुं [अर्थ] वस्त्र के निमित्त। समुद्दसलिले सचेलअत्थेण। (सू.२७)

सच्च न [सत्य] 1. यथार्थ कथन, धर्म का एक भेद, व्रत का एक

भेद, सत्य। (स.२६४, शी.१९) जीवदया दमसच्चं।(शी.१९) 2. न [सत्त्व] सत्ता, अस्तित्व, सत्त्व। सच्चेव य पज्जओ त्ति वित्थारो। (प्रव.ज्ञे.१५)

सच्चित्त वि [सचित्त] सजीव,चेतना,गुणवाला।(स.२२०), भा.१०२, मो.१७) सच्चित्ताचित्ताणं। (स.२४३)

सच्चेयण वि [सचेतन] सजीव,चेतना सहित। सच्चेयणपच्चक्खं। (सू.४)

सच्छंद वि [स्वच्छन्द] स्वेच्छानुसार चलने वाला, उन्मार्गी। जो विहरइ सच्छंदं। (सू.९)

सजण पुं [स्वजन] सगा, कुटुम्बी। मादुपिदुसजण। (द्वा.३)

सजीव वि [सजीव] सचेतन, जीव सहित। (चा.२९) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] सजीव द्रव्य।सजीवदव्वे अजीवदव्वे य। (चा.२९)

सजोइ/सजोगि पुं न [संयोगिन्] अर्हन्त, सयोगी, तेरहवां गुणस्थान वालों की संज्ञा विशेष। **-केवलि** वि [केवलिन्] सयोगकेवली। (बो.३१) सजोइकेवलि य होइ अरहंतो। (बो.३१) चौंतीस अतिशय रूप गुण एवं आठ प्रातिहार्य तेरहवें गुणस्थान में रहने वाले सयोगकेवली के होते हैं।

सजोग्ग वि [स्वयोग्य] अपने योग्य, अपने लायक। चरियं चरउ सजोग्गं। (प्रव.चा.३०)

सज्झाय पुं [स्वाध्याय] शस्त्र पठन, आवर्तन। (निय.१५३, बो.४३) वचनमय प्रतिक्रमण वचनमयप्रत्याख्यान, वचनमय नियम और वचनमय आलोचना स्वाध्याय है। (निय.१५३) स्वाध्याय के

वाचना, पृच्छना, आम्नाय, अनुप्रेक्षा और धर्मोपदेश ये पाँच भेद भी कहे गये हैं।

सट्ठि स्त्री [षष्ठि] साठ, संख्या विशेष। सट्ठी चालीसमेव जाणेह। (भा.२९)

सड वि [षट्] छह, संख्या विशेष । छज्जीव सडायदणं णिच्चं। (भा.१३२)

सडण वि [शटन] सड़ना, गिरना, विशरण। (द्वा.४४, भा.२६) सडणप्पडणसहावं। (भा.२६)

सणिघण न [सनिधन] अनादिसान्त। अणादिणिघणो सणिघणो वा (पंचा.१३०)

सण्णा स्त्री [सञ्ज्ञा] चेतना, होश, आसक्ति। (पंचा.१४१, प्रव.ज्ञे.४८, निय.६६, भा.११२) सण्णाओ य तिलेस्सा। (पंचा.१४०) आहारसञ्ज्ञा, भयसञ्ज्ञा और परिग्रह सञ्ज्ञा ये चार सञ्ज्ञाएँ हैं।

सण्णाण न [सद्ज्ञान] सम्यग्ज्ञान। (निय.१२, चा.४२, भा.३१, मो.३८)तत्त्वज्ञान का ग्रहण करना सम्यग्ज्ञान है। तच्चग्गहणं हवइ सण्णाणं।(चा.३८)जीव और अजीव के भेद को जानना सम्यग्ज्ञान है। (चा.४१)संशय,विपर्यय और अनध्यवसाय से रहित ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।(निय.५१)हेयोपादेय तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त होना सम्यग्ज्ञान है।(निय.५२)सम्यग्ज्ञान के चार भेद हैं-- मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय। (निय.१२)

सण्णाणी वि [सद्ज्ञानी] सम्यग्ज्ञानी। (चा.३९) जो मनुष्य जीवादि

का विभाग जानता है, वह सम्यग्ज्ञान है। जो जाणइ सो हवेइ सण्णाणी। (चा.३९)

सण्णि वि [सञ्ज्ञिन्] सञ्ज्ञायुक्त, संज्ञी। (बो.३२) भवियासम्मत्तसण्णिआहारे। (बो.३२)

सण्णिद वि [सञ्ज्ञित] स्वरूपयुक्त, सम्वेत, युक्त। संभवठिदिणाससण्णिदट्ठेहिं। (प्रव.ज्ञे.१०)

सण्णिहित वि [सन्निहित] उद्यत, तत्पर, लगा हुआ, समीपस्थ। (निय.१२७) जस्स सण्णिहिदो अप्पा। (निय.१२७)

सत्त पुं न [सत्त्व] 1.प्राणी, जीव, चेतन। (स.२४७,२५३,२५९,२६०,२६१,भा.१३५) णाणी सत्तो दु विवरीदो। (स.२५३) 2. वि [सप्तन्] सात, संख्या विशेष। (स.१७५, निय.१६, भा.९) सत्तसु णरयावासे। (भा.९) **-भंग** पुं [भङ्ग] सात विकल्प, स्याद्वाद से कथन करने में प्रयुक्त पद्धति के भेद। (पंचा.७२) **-विह** वि [विध] सात प्रकार। सत्तविहा णेरइया। (निय.१६) 3. वि [दि] गत, गया हुआ, झरता हुआ। पित्तंतसत्तकुणिमदुग्गंधं। (भा.४२)

सत्ता स्त्री [सत्ता] सद्भाव, अस्तित्व, विद्यमानता। (पंचा.८,प्रव.ज्ञे.१३) सत्ता सव्वपयत्था। (पंचा.८)

सत्ति स्त्री [शक्ति] सामर्थ्य, बल, विद्याविशेष। (प्रव.चा.५३, सू.१२) सत्तीसएहिं संजुत्ता। (सू.१२) **-विहीण** वि [विहीन] शक्तिहीन। (निय.१५४)

सत्तु पुं [शत्रु] रिपु, दुश्मन, वैरी। (बो.४६, मो.७२, प्रव.ज्ञे.१०१)

सत्तुमित्ते य समा। (बो.४६)

सत्थ पुं न [शास्त्र] 1. ग्रन्थ, आगमग्रन्थ, सिद्धांत ग्रन्थ। (स.३१७, ३९०, प्रव.८६) सत्थं णाणं ण हवइ । (स.३९०) 2. न [शस्त्र] हथियार, आयुध। (स.२३७,२४२,भा.२५) करेदि सत्थेहिं वायामं । (स.२४२) **-गहण** न [ग्रहण] शस्त्रग्रहण। (भा.२५)

सद वि [सद्] 1.विद्यमान, अस्तित्व। (पंचा.५४, प्रव.३७,स.३२३) कुव्वदि सदो विणासं। (पंचा.५५) 2.वि [सत्] अच्छा, सुन्दर। 3. वि [सत्] स्वाभाविक भाव। 4. पुं न [शत्] सौ संख्या विशेष। इंदसदवंदियाणं। (पंचा.१)

सदा अ [सदा] हमेशा, निरन्तर, सदैव। (पंचा.४८,स.८,प्रव.८) अक्खातीदस्स सदा। (प्रव.२२)

सदेहमत्त न [स्वदेहमात्र] अपने शरीर प्रमाण, शरीर के बराबर। सदेहमत्तं पभासयदि। (पंचा.३३)

सद्द पुं न [शब्द] ध्वनि, आवाज। (पंचा.७९,स.३७१,प्रव.५६) सद्दो खंधप्पभवो। (पंचा.७९) **-कारण** न [कारण]शब्द का कारण सद्दकारणमसद्दं। (पंचा.८१) **-ण्हु** वि [ज्ञ] शब्द का ज्ञाता। (पंचा.११७) **-त्त** वि [त्व] शब्दत्व, ध्वनिपना। पोग्गलदव्वं सद्दत्तपरिणयं। (स.३७४) **-वियार** पुं [विकार] शब्द विकार। (बो.६०)

सद्दव्व वि [स्वद्रव्य] निजद्रव्य, उत्तम द्रव्य। (प्रव.ज्ञे.३,१५,मो.१६) सद्दव्वरओ सवणो।(मो.१४)

सद्दह सक [श्रद्+धा] श्रद्धान करना, विश्वास करना।

(पंचा.१६३,प्रव.६२, स.२७५,भा.८४,चा.१८) सद्दहदि ण सो समणो। (प्रव.९१) सद्दहदि (व.प्र.ए.स.१७) सद्दहमाणो (व.कृ.प्रव.चा.३७) सद्दहेह (वि./आ.म.ब.भा.८७,सू.१६) सद्दहेदव्व (वि.कृ.स.१८)

सद्दहण न [श्रद्धान] श्रद्धा, विश्वास। (पंचा.१०७, प्रव.चा.३७, निय.५१, मो.९१) सद्दहणादो हवेइ सम्मत्तं। (निय.५)

सद्दिट्ठि स्त्री [सद्दृष्टि] सम्यग्दृष्टि। (स.२३२, सू.५) जो मनुष्य जिनेन्द्र द्वारा कथित सूत्र के अर्थ को जीव,अजीव आदि बहुत प्रकार के पदार्थों को तथा हेय-उपादेय तत्त्व को जानता है, वह वास्तव में सम्यग्दृष्टि है। (सू.५)

सद्धा स्त्री [श्रद्धा] आदर, सम्मान। सुदंसणे सद्धा। (चा.१४)

सपज्जय वि [सपर्याय] पर्याय सहित। सपज्जयं दव्वमेकं वा। (प्रव.४८)

सपदेसत्त वि [सप्रदेशत्व] प्रदेशपने से सहित। अत्थित्तं सपदेसत्तं। (निय.१८१)

सपयत्थ वि [सपदार्थ] पदार्थ सहित। (पंचा.१७०)

सपर पुं [स्व-पर] 1.अपना और दूसरा। (निय.१७१, बो.९) 2.पुं [सपर] पराधीन। सपरं बाधासहिदं।(प्रव.७६)

सपरावेक्ख [सपरापेक्ष] दूसरे की अपेक्षा से सहित । (निय.१५, मो.९३)

सप्पडिवक्ख वि [सप्रतिपक्ष] प्रतिपक्ष से युक्त, विरुद्ध सहित। सप्पडिवक्खा हवदि एक्का। (पंचा.८)

सप्पि न [सर्पिस्] घृत, घी। (निय.२२)

सप्पुरिस पुं [सत्पुरुष] सज्जन मनुष्य। णिट्ठुरं कडुयं सहंति सप्पुरिसा। (भा.१०७)

सब्भाव/सभाव पुं[स्वभाव]1.प्रकृति,निसर्ग,स्वभाव, यथार्थदशा। (पंचा.५२, ६५,प्रव.ज्ञे.५०) दव्वस्स य णत्थि अत्थि सब्भावो। (पंचा.११) **-समवट्ठिद** वि [समवस्थित] स्वभाव में स्थित। (प्रव.ज्ञे.५०) सभावसमवट्ठिदो हवदि। (प्रव.ज्ञे.५०) 2.पुं [सद्भाव] अस्तित्व भाव, सत्तास्वरूप। (पंचा.५३, प्रव.२) सब्भावपरूवगो हवदि णिच्चं। (पंचा.१०१)

सभावणा स्त्री [सभावना] भावना सहित, चिन्तन सहित। (मो.७१)

सब्भूद वि [सद्भूत] सत्तास्वरूप, अस्तित्वमय। अत्थो खलु होदि सब्भूदो। (प्रव.१८)

सम पुं [शम] 1.समता, समभाव। (प्रव.७,पंचा.१०७, निय.१०९ बो.४६, मो.७२) परिणामो अप्पणो हु समो। (प्रव.७) राग,द्वेष और मोह से रहित आत्मा का परिणाम ही सम है। (प्रव.७) **-भाव** पुं [भाव] समताभाव, शान्तभाव।•चारित्तं समभावो। (पंचा.१०७) 2.पुं [श्रम] परिश्रम, खेद, थकावट। तण्हया वा समेण वा रूढं ।(प्रव.चा.३१)3.वि [सम] समान,तुल्य,सदृश्य, उदासीन। (प्रव.ज्ञे.१०४, निय.११०, शी.१) साहीणो समभावो। (निय.११०) **-लोट्ठकांचण** पुं न [लोष्ट-काञ्चन] पत्थर और स्वर्ण में समानता।(प्रव.चा.४१)**-सुहदुक्ख** पुं न [सुखःदुख]

सुख-दुःख में समानता। (पंचा.१४२, प्रव.१४)

समअ पुं [समय] 1.समय, काल, अवसर, काल विशेष। (स.२१६, प्रव.ज्ञे.४७, पंचा.२५) सभए समए विणस्सदे उहयं। (स.२१६) समय अप्रदेश है । जब एक प्रदेशात्मक पुद्गलजातिरूप परमाणु मन्द गति से आकाश द्रव्य के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश के प्रति गमन करता है तब समय होता है। (प्रव.ज्ञे.४६)2.लोक,विश्व। समवाओ पंचण्हं समउत्ति जिणुत्तमेहिं पण्णत्तं।(पंचा.३)जीव,पुद्गल,धर्म,अधर्म और आकाश इन पांचों का समुदाय भी समय है। (पंचा.३) 3.देखो समय।

समंत वि [समन्त] विश्वव्यापी,पूर्ण,समस्त।(प्रव.२२,४७) समंतसव्वक्खयगुणसमिद्धस्स। (प्रव.२२)

समक्खाद वि [समाख्यात] उक्त, कथित,अभिव्यक्त। (प्रव.३६, प्रव.ज्ञे.६, निय.२) णेयं दव्वं तिहा समक्खादं। (प्रव.३६)

समगं अ [समकम्] युगपत्, एक साथ। ते ते सव्वे समगं समगं। (प्रव.३)

समग्ग वि [समग्र] पूर्ण, समस्त। सपदेसेहिं समग्गो।(प्रव.ज्ञे.५३)

समज्जिअ वि [समर्जित] उपार्जित, एकत्रित, संकलित। (निय.११८)

समण पुं स्त्री [श्रमण] निर्ग्रन्थ, मुनि,साधु, यति, भिक्षु। (पंचा.२, प्रव.१४,लिं.४,भा.५१) समणो समसुहदुक्खो। (प्रव.१४) जिसे शत्रु और मित्रों का समूह समान हो, सुख एवं दुःख समान हो,

प्रशंसा एवं निंदा समान हो, पत्थर और स्वर्ण एक समान हो तथा जो जीवन और मरण में समभाव वाला हो, वह श्रमण है। **-मुहुग्गदमट्ठ** पुं [मुखोद्गतार्थ] श्रमण के मुख से उत्पन्न अर्थ। (पंचा. २) **-लिंग** न [लिङ्ग] श्रमणलिंङ्ग, श्रमणचिह्न। वोच्छामि समणलिंगं। (लिं.१)

समणी स्त्री [श्रमणी] श्रमणी, आर्यिका, साध्वी। (प्रव.चा.ज.वृ.२५) समणीओ तस्समाचारा।

समत्त वि [समस्त] परिपूर्ण, सम्पूर्ण। जादं सयं समत्तं। (प्रव.५९)

समद वि [समतः] समानता, सदृशता। समदो दुराधिगा जदि। (प्रव.ज्ञे.७३)

समदा वि [समता] साम्यभाव,रागद्वेष का अभाव समदारहियस्स। समणस्स। (निय.१२४)

समद्दव वि [स्वमार्दव] निजमृदुता, स्वकीय मार्दव। (निय.११५) समद्दवेणज्जवेण मायं च। (निय.११५)

समधि सक [सम्+अधि] अध्ययन करना, ज्ञान करना। (प्रव.८६) तम्हा सत्थं समधिदव्वं। (प्रव.८६) समधिदव्व (विकृ.प्रव.८६)

समभिहद वि [श्रमाभिहत] श्रम से खिन्न। (प्रव.चा.३०)

समभुत्ति स्त्री [समभुक्ति] सम्यक् आहार, अच्छा भोजन। समभुत्ती एसणासमिदी। (निय.६३)

समय पुं [समय] 1.काल, अवसर। (पंचा.१६७,स.१७०, प्रव.ज्ञे.४९, भा.३५, निय.३१) समयस्स सो वि समयो। (प्रव.ज्ञे.५०) 2. आत्मा। समयमिणं सुणह बोच्छामि। (पंचा.२)

3. आगम, सिद्धान्त, मत। समयस्स वियाणया विंति। (स.३७) **-सार** पुं न [सार] समयसार, ग्रन्थ विशेष, परमार्थग्रन्थ। (स.१४२) जो सब नयपक्षों से रहित है वह समयसार है। (स.१४४)

समवत्ति पुं [समवर्त्तिन्] तादात्म्य सम्बन्ध, धारावाही। (पंचा.५०)

समवाअ/समवाय पुं [समवाय] सम्बन्धविशेष,सम्मिलन, संपर्क, अविच्छेद्यसंयोग। (पंचा.४९, प्रव.१७) गुण एवं गुणी के बीच अनादि काल से जो समवर्तित्व तादात्म्य सम्बन्ध पाया जाता है, वह समवाय है। (पंचा.५०) समवत्ती समवाओ।

समवेद वि [समवेत] समुदित, एकमेक। समवेदं खलु दव्वं। (प्रव.ज्ञे.१०)

समवण्ण वि [समापन्न] संयोग, संप्राप्त। समवण्णा होइ चारित्तं। (चा.३)

समस्सिद वि [समाश्रित] आश्रय में स्थित, आश्रित। फासेहिं समस्सिदे सहावेण। (प्रव.६५)

समाण वि [समान] सदृश, तुल्य। (पंचा.९६, द.२६) दोण्णि वि होंति समाणा। (द.२६) **-परिणाम** न [परिणाम] समान परिणाम, सदृशमाप। अपुणब्भूदा समाणपरिणामा। (पंचा.९६)

समादद सक [समा+दा] ग्रहण करना, स्वीकार करना, अङ्गीकार करना। (पंचा.९९, १७१) चित्तं उभयं समादियदि। (पंचा.९९)

समावणअ पुं [श्रमापनक] थकावट दूर करने वाला। समणेसु समावणओ। (प्रव.चा.४७)

समावण्ण देखो समवण्ण। विव्वेयसमावण्णो। (स.३१८)

समायर सक [समा+चर्] आचरण करना। (भा.३०,७७) तं रयणत्तय समायरह। समायरह (वि./आ.म.ब.भा.३०)

समारद्ध वि [समारद्ध] प्रारम्भ, आरम्भ, शुरुआत्। (प्रव.ज्ञे.३२, प्रव.चा.११) कम्मं जीवेण जं समारद्धं। (प्रव.ज्ञे.३२)

समास पुं [समास] संक्षेप, संकोच, सम्मिश्रण, समाहार। (स.३५३,३६०,बो.२,द.१,मो.१३) वत्तव्वं से समासेण। (स.३६०)

समास अक [सम्+आस्] रहना,बैठना,प्राप्त होना। (प्रव.५) पहाणासमं समासेज्ज। समासेज्ज (वि.उ.ए.प्रव.५)

समाहि पुं स्त्री[समाधि] चित्त की स्वस्थता, समभाव। (निय.१०४, भा.७२) समाहिं पडिवज्जए। (निय.१०४)

समाहिद वि [समाहित] संयुक्त, तन्मय, तत्पर। तिहिं तेहिं समाहिदो हु जो अप्पा। (पंचा.१६१)

समित वि [शमित] शान्त किया हुआ, शान्त। (प्रव.चा.६८) **-कसाय** पुं [कषाय] कषायों से शान्त, जिसकी कषायें शान्त हो गई हो। समिदकसायो तवोधिगो चावि। (प्रव.चा.६८)

समिदि स्त्री [समिति] सम्यक्प्रवृत्ति, उपयोगपूर्वक की जाने वाली प्रवृति। (स.२७३, प्रव.चा.८, निय.११३, सू.२१) नियमसार में पांच समितियों का विवेचन पृथक्-पृथक् रूप में किया गया है। (देखो-६१ से ६५)

समिद्ध वि [समृद्ध] अतिशय सम्पत्तिवाला, धनवान्। (प्रव.२२)

समिद्धि स्त्री [समृद्धि] वृद्धि, अतिशयवृद्धि।

समुग्गद वि [समुद्गत] समुत्पन्न, समुद्भूत।

समुट्ठिद वि [समुत्थित] सम्यक् प्रयत्नशील, उद्यमी, एक साथ उत्पन्न। (प्रव.७९, प्रव.ज्ञे.१०७) तीसु जुगवं समुट्ठिदो जो दु। (प्रव.चा.४२)

समुद्द पुं [समुद्र] समुद्र, सागर। (सू.२७) **-सलिल** न [सलिल] समुद्र जल, सागर का पानी। समुद्दसलिले अचेलअत्थेण। (स.२७)

समुद्दिट्ठ वि [समुदिष्ट] कथित, प्रतिपादित। (निय.११०,१८२) सिद्धा णिव्वाणमिदि समुद्दिट्ठा। (निय.१८२)

समुब्भव पुं [समुद्भव] उत्पन्न, उत्पत्ति, जन्म। (प्रव.७४, निय.३८) परिणामसमुब्भवाणि विविहाणि। (प्रव.७४)

समुवगद वि [समुपगत] प्राप्त हुआ, समीप आया। मग्गं जिण भासिदेण समुवगदो। (पंचा.७०)

समूह पुं न [समूह] समुदाय, राशि, समूह।

सम्म वि [सम्यञ्च्] 1. सत्य, सच्चा, यथार्थ, समीचीन। सम्मादिट्ठी जीवो। (स.२२८) **-दिट्ठि/द्दिट्ठि** स्त्री [दृष्टि] सम्यक् दृष्टि। (स.२०२) **-इंसण** न [दर्शन] सम्यग्दर्शन।(स.१४४, द.३३, चा.१८) सम्यग्दृष्टि जीव अपने आपको ज्ञायक स्वभाव जानता है और तत्त्व के यथार्थ स्वरूप को जानता हुआ, उदयागत रागादिभाव को कर्मविपाक जानकर छोड़ता है। (स.२००) 2. न [साम्य] समता, समानता, निष्पक्षता, सामञ्जस्य। (प्रव.५,

नियं.१०४) उवसंपयामि सम्म। (प्रव.५)

सम्मं अ [सम्यक्] अच्छी तरह, यथार्थरूप में, वास्तव में, भलीभाँति। (पंचा.४८, प्रव.८१, सू.१, चा.२, भा.१४८, बो.१४) सम्मं जिणभावणाजुत्तो। (भा.१४८)

सम्मत्त पुं न [सम्यक्त्व] समकित, सम्यग्दर्शन, यथार्थश्रद्धान। (पंचा.१०७, स.१३, नियं.५, चा.६, बो.५७, भा.१४३, सू.१४, द.२०, मो.४०) धर्म आदि द्रव्यों का श्रद्धान करना सम्यक्त्व है। (पंचा.१६०)जीवादि सात तत्त्वों पर श्रद्धान व्यवहार सम्यक्त्व है और शुद्ध आत्मा का श्रद्धान निश्चय सम्यक्त्व है। (द.२०) **-गुण वसुद्ध** वि [गुणविशुद्ध] सम्यक्त्व गुण से विशुद्ध। (बो.५२) सम्मत्तगुणविसुद्धो। **-चरणचरित्त** न [चरणचरित्र] सम्यक्त्व के आचरण रूप चारित्र।(चा.८)-**चरणभट्ट** वि [चरणभ्रष्ट] सम्यक्त्व आचरण से भ्रष्ट। (चा.१०) **-चरणसुद्ध** वि [चरणशुद्ध] सम्यक्त्वाचरण से शुद्ध। (चा.९) **-णाणचरण** न [ज्ञानचरण] सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र। (नियं.९१) सम्मत्तणाणचरणे। (नियं.१३४) **-णाणजुत्त** वि [ज्ञानयुक्त] सम्यक्त्व और ज्ञान से युक्त।(पंचा.१०६) **-णाणरहिअ** वि [ज्ञानरहित] सम्यक्त्व और ज्ञान से रहित। (मो.७४) **-पडिणिबद्ध** वि [प्रतिनिबद्ध] सम्यक्त्व को रोकने वाला। सम्मत्तपडिणिबद्धं। (स.१६१) **-परिणद** वि [परिणत] सम्यक्त्वरूप परिणत। सम्मत्तपरिणदो उण। (मो.८७) **-पहुदिभाव** पुं [प्रभृतिभाव] सम्यक्त्वादि भाव।

सम्मत्तपहुदिभावा। (नियं.९०) **-रयणभट्ट** वि [रत्नभ्रष्ट] सम्यक्त्वरूपी रत्न से भ्रष्ट। सम्मत्तरयणभट्टा। (द.४) **-विरहिय** वि [विरहित] सम्यक्त्व से रहित। (द.५) सम्मत्तविरहियाणं। (द.५) **-विसुद्ध** वि [विसुद्ध] सम्यक्त्व से विशुद्ध। वयसम्मत्त विसुद्धे। (बो.२५) **-सलिलपवह** वि [सलिल-प्रवह] सम्यक्त्व जल से प्रवाहित। सम्मत्तसलिलपवहे। (द.७)

सम्मइंसण न [सम्यग्दर्शन] सम्यग्दर्शन। (द.३३, बो.४०)

सम्माइट्ठि/सम्मादिट्ठि स्त्री [सम्यग्दृष्टि] सम्यग्दृष्टि। (स.२३०, मो.१४, भा.३१) सम्माइट्ठी हवइ जीवो। (स.११)

सम्मूह सक [समा+इ] इकट्ठा करना, एकत्रित करना। सम्मूहदि रक्खेदि य। (लिं.५)

सय अक [शी/स्वप्] सोना, शयन करना। (भा.११३)

सय वि [स्वक] निजी, आत्मीय। (स.३६१-३६३) जीवो वि सयेण भावेण। (स.३६२)

सयं अ [स्वयं] आप, निज। (पंचा.७८, स.९१, प्रव.५५) **-अप्पा** पुं [आत्मन्] स्वयं आत्मा, स्वयं अपना। अह सयमप्पा परिणमदि। (स.१२४) **-एव** अ [एव] स्वयं ही, अपने आप ही। भूदो सयमेवादा।(प्रव.१६) **-भु** पुं [भू] ब्रह्मा, स्वयं उत्पन्न। (प्रव.१६) हवदि सयंभुत्ति णिद्दिट्ठो।

सयण न [शयन] शय्या, विस्तर। (प्रव.चा.१६, बो.४५, द्वा.३) हिरण्णसयणासणाइ छत्ताइं। (बो.४५)

सयल वि [सकल] सम्पूर्ण,पूरा,सब,समस्त।(पंचा.७५, नियं.५,

बो.२,भा.१३३)ते रोया वि सयला।(भा.३८)-**काल** पुं [काल] सभी समय,प्रत्येक समय।(भा.९४)सहदि मुणि सयलकालकाएण।-**गुण** पुं न [गुण] समस्तगुण। सयलगुणप्पा हवे अत्ता। (निय.५)-**जण** पुं [जन] सभी लोग। सयलजणबोहणत्थं। (बो.२) -**जीव** पुं [जीव] समस्त जीव। खमेहि तिविहेण सयलजीवाणं। (भा.१०९) -**णग्ग** वि[नग्न]सभी वस्त्र रहित।दव्वेण सयलणग्गा। (भा.६७) -**दोसणिम्मुक्क** वि [दोषनिर्मुक्त] समस्त दोषों से रहित। (निय.४४) -**दोसपरिचत्त** वि [दोषपरित्यक्त] समस्त दोषों को छोड़ने वाला। रायादिसु सयलदोसपरिचत्तो। (भा.८५) -**परिचत्त** वि [परित्यक्त] सभी से रहित। माणकसाएहि सयलपरिचत्तो। (भा.५६) -**भाव** पुं [भाव] सम्पूर्ण भाव। पुव्वुत्तसयलभावा। (निय.५०) -**संघ** पुं [संघ] समस्त संघ। णारयतिरिया य सयलसंघाण। (भा.६७) -**समत्थ** वि [समर्थ] पूर्ण शक्तिमान। खंधं सयलसमत्थं। (पंचा.७५) -**सुयणाण** न [श्रुतज्ञान] सम्पूर्ण श्रुतज्ञान। चउदसपुव्वाइं सयलसुयणाणं। (भा.५२)

सया देखो सदा। सया विदियवयं होइ तस्सेव। (निय.५७)

सयास न [सयास] पास, निकट, समीप। तं गरहि गुरुसयासे। (भा.१०६)

सरण पुं न [शरण] 1. आश्रय, स्थान। (मो.१०४,१०५, भा.१२३) तम्हा आदा हु मे सरणं। (मो.१०५) 2. न [स्मरण] स्मृति, याद। (चा.३५)

सराग वि [सराग] रागसहित। चरिया हि सरागाणं। (प्रव.चा.४८) **-प्पधाण** वि [प्रधान] सराग की मुख्यता, सरागमय। सो वि सरागप्पधाणो से। (प्रव.चा.४९)

सरि स्त्री [सरित्] सरिता, नदी। सरिदरितरुवणाइं सव्वंतो। (भा.२१)

सरिस/सरिस्स वि [सदृश] समान, तुल्य। णियदेहसरिस्सं पिच्छिऊण। (मो.९)

सरीर पुं न [शरीर] देह, काय, तनु। (स.५०, निय.७०, भा.३७, बो.५१) आहारो य सरीरो। (बो.३३) **-ग** वि [क] शरीरसम्बन्धी। (निय.७०) काउस्सग्गो सरीरगे गुत्ती। (निय.७०) **-गुण** पुं न [गुण] शरीर के गुण। (स.३९) **-गुत्ति** स्त्री [गुप्ति] कायगुप्ति। (निय.७०) शरीर सम्बन्धी क्रियाओं को रोकना कायोत्सर्ग या कायगुप्ति है। (निय.७०) **-मित्त** पुं [मात्र] शरीरप्रमाण, शरीरमात्र। सरीरमित्तो अणाइणिहणो य। (भा.१४७)

सलक्खण वि [सलक्षण] लक्षणसहित। छिज्जंति सलक्खेहिं णियएहिं। (स.२९५)

सलक्खणिय वि [सलक्षणिक] लक्षणसहित। (पंचा.१०)

सलिल पुं न [सलिल] जल, पानी। (द.७, भा.१२४, १५३) सम्मत्तसलिलपवहे। (द.७)

सल्ल पुं न [शल्य] पीड़ा, दुःख। (निय.८७) **-भाव** पुं [भाव] शल्यभाव। मोत्तूण सल्लभावं। (निय.८७)

सल्लेहणा स्त्री [सल्लेखना] कषाय और शरीर के शमन करने की क्रिया, अनशन व्रत से शरीरत्याग का अनुष्ठान, शिक्षाव्रत का एक भेद। चउत्थ सल्लेहणा अंते। (चा.२६)

सव न [शव] मृत शरीर, शव। जीवविमुक्को सवओ। (भा.१४२)

सवण देखो समण। (सू.१, द.२७, भा.१०७, मो.१४) सवयाणं सावयाण पुण सुणसु।(मो.८५) **-त्तण** वि [त्व] श्रमणपना, साधुता। सवणत्तणं ण पत्तो। (भा.४५)

सवद वि [सव्रत] व्रतसहित। सोच्चासवदं किरियं। (प्रव.चा.७)

सवसासत्त वि [स्ववशासक्त] स्वाधीन मुनियों में आसक्त। सवसासत्तं तित्थं। (बो.४२)

सविसेस वि [स्वविशेष] अपनी विशेषता सहित। सविसेसो जो हि णेव सामण्णे। (प्रव.९१)

सविस्सरूव वि [सविश्वरूप] नाना प्रकार के स्वरूपों से युक्त। (पंचा.८)

सविहव वि [स्ववैभव] निज वैभव, निजअनुभव। (स.५) दाएहं अप्पणो सविहवेण।

सव्व स [सर्व] सब, समस्त, सम्पूर्ण। (पंचा.८२, स.१५, प्रव.८८, निय.२७, द.१५, सू.१०, बो.२४, मो.१७, भा.१४३, द्वा.१) णाणं अप्पा सव्वं। (स.१०) **-अंग** पुं न [अङ्ग] समस्त शरीर, शरीर के सभी अवयव। (बो.३७) **-अदिचार** पुं [अतिचार] सभी अतिचार। (निय.९३) **-आगमधर** वि [आगमधर] समस्त आगमों का ज्ञाता। सगस्स सव्वागमधरो वि। (पंचा.१६७)

-आबाधविजुत्त वि [आबाधवियुक्त] सब पीड़ाओं से रहित। सव्वाबाधाविजुत्तो। (प्रव.ज्ञे.१०६) **-कत्तित** वि [कर्तृत्व] सभी प्रकार का कर्त्तापन। सो मुंचदि सव्वकत्तितं। (स.९०) **-कम्म** पुं न [कर्मन्] समस्त कर्म, सकल कर्म। णिज्जरमाणोध सव्वकम्माणि। (पंचा.१५३) **-काल** पुं [काल] सम्पूर्ण समय, सभी समय। (पंचा.४०, प्रव.ज्ञे.४) लोगो सो सव्वकाले दु। (प्रव.ज्ञे.३६) **-क्खगुणसमिद्धा** वि [अक्षगुणसमृद्ध] समस्त इन्द्रियों के गुणों से सम्पन्न। (प्रव.२२) **-क्खसोक्खणाणड्ढ** वि [अक्षसुखज्ञानाढ्य] समस्त इन्द्रिय सुख और ज्ञान का भण्डार। (प्रव.ज्ञे.१०६) **-गद** वि [गत] सर्वगत, व्यापक। (प्रव.२३,२६,५०) ण खाइयं णेव सव्वगदं। (प्रव.५०) **-णयपक्खरहिद** वि [नयपक्षरहित] सब नय पक्षों से रहित। सव्वणयपक्खरहिदो। (स.१४४) **-णाणदरिसी** वि [ज्ञानदर्शिन्] सबको देखने जानने वाला, सर्वज्ञ। (पंचा.२८, स.१६०) सो सव्वणाणदरिसी। (पंचा.२८)**-ण्हु** पुं [ज्ञ] सर्वज्ञ, परमेश्वर। (प्रव.१९) **-त्तो** अ [तस्] सब ओर से। (भा.२१) **-त्थ** अ [त्र] सर्वत्र, सभी जगह। (पंचा. १७२,स.३, प्रव.५१, बो.४७,५५) सव्वत्थ अत्थि जीवो। (पंचा.३४) **-दंसि** वि [दर्शिन्] सर्वदर्शी, सर्वज्ञ। (चा.१) सव्वण्हु सव्वदंसी। (चा.१) **-दव्व** पुं न [द्रव्य] सभी द्रव्य,समस्तद्रव्य। (पंचा.१४२, स.२१८, प्रव.२१) सव्वदव्वेसु कम्ममज्झगदो। (स.२१९) **-दुक्ख** पुं न [दुःख] सभी दुःख। (प्रव.८८,सू.२७,व.१७) ताह णियत्ताइं सव्वदुक्खाइं। (सू.२७)**-दो** अ [तस्] सभी ओर से। (पंचा.७३,

स.१६०, प्रव. ज्ञे.७६) पोग्गलकाएहिं सव्वदो लोगो। (स.६४) -**दोस** पुं [दोष] समस्त दोष। (निय.९३) -**धम्म** पुं न [धर्मन्] समस्त धर्म, सबधर्म। उवगूहणगो दु सव्वधम्माणं। (स.२३३) -**पयडत्त** वि [प्रकटत्व] सर्वरूप से प्रकटपना। जिणसमए सव्वपयडत्तं। (निय.२७) -**पयत्थ** पुं [पदार्थ] समस्त पदार्थ। सत्ता सव्वपयत्था।(पंचा.८)-**भाव** पुं [भाव] सभी भाव। (स.२३२,निय.११९,द.१५,प्रव.ज्ञे.१०५,पंचा.९) ण दु कत्ता सव्वभावाणं। (स.८२) -**भूद** वि [भूत] समस्तप्राणी। इंदियचक्खूणि सव्वभूदाणि। (प्रव.चा.३४) -**लोगदरिसि** वि [लोकदर्शिन्] समस्त लोक को देखने वाला। (पंचा.१५१, मो.३५) सव्वण्हू सव्वलोगदरिसी। (पंचा.२९) -**लोगपदिमहिद** वि [लोकपतिमहित] समस्त लोक के अधिपतियों से पूजित। सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो। (प्रव.१६)-**विअप्पाभाव** वि [विकल्पाभाव] समस्त विकल्पों का अभाव।सव्वविअप्पाभावे। (निय.१३८)-**विरअ** वि [विरत] सभी तरह से रहित,पूर्ण विरत।सव्वविरओ वि भावहि। (भा.९७) -**संगपरिचत्त** वि [सङ्गपरित्यक्त] समस्त परिग्रह से रहित। पव्वज्जा सव्वसंगपरिचत्ता। (बो.२४) -**संगमुक्क** वि [सङ्गमुक्त] सभी परिग्रह से मुक्त। (पंचा.१५८, स.१८८) जो सव्वसंगमुक्को। (पंचा.१५८) -**सावज्ज** वि [सावद्य] समस्त पापों से युक्त। विरदो सव्वसावज्जे। (निय.१२५) -**सिद्ध** वि [सिद्ध] सभी सिद्ध। (स.१, द्वा.१) वंदित्तु सव्वसिद्धे। (स.१) -**हा** अ [था] सर्वथा,

सब प्रकार से । (पंचा.३५, मो.२९, भा.६३) ववहारं चयइ सव्वहा सव्वं। (मो.३२)सव्वो (प्र.ए.भा.३३) सव्वे (प्र.ब.स.१२८) सव्वं (द्वि.ए.स.१६०) सव्वे (द्वि.ब.पंचा.३९) सव्वेहि (तृ.ब.मो.२२) सव्वस्स (च./ष.ए.स.४) सव्वेसिं/सव्वाणं (च./ष.ब.स.२३१ भा.१४३) सव्वम्हि (स.ए.स.२४२) सव्वेसु (स.ब.प्रव.चा.५९) सव्वा (प्र.ए.स.२६) सव्वाणि/सव्वाइं (द्वि.ब.प्रव.४९, भा.२२)

सव्वण्हु पुं [सर्वज्ञ] सर्वज्ञ, प्रभु। (पंचा.१५१, स.१५२, प्रव.१६, चा.१) सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो। (प्रव.१६)

ससक्ति वि [स्वशक्ति] अपनी शक्ति, निजबल। कुणइ तवं संजुदो ससत्तीए। (मो.४३)

ससहर पुं [शशहर] चन्द्रमा, चाँद। (भा.१४५) **-बिंब** वि [बिम्ब] चन्द्रमण्डल। ससहरबिंब ख मंडले विमले। (भा.१४५)

सस्स न [शस्य] धान्य, चांवल। (प्रव.चा.५५, लिं.१६) **-काल** पुं [काल] धान्य का समय। वीयाणि व सस्सकालम्मि। (प्रव.चा.५५)

सस्सद/सस्सय वि [शाश्वत्] नित्य, अविनाशी,अविनश्वर। (पंचा.३७, द्वा.४८) सो सस्सदो असद्दो। (पंचा.७७)

सह अक [सह्] सहन करना, झेलना। (भा.३८, सू.१२, बो.५५) दस दस दो सुपरीसह सहदि। (भा.९४)

सह वि [सह] 1.सहिष्णु, सहन करने वाला। उवसग्गपरिसहसहा। (बो.५५) 2.अ [सह] साथ, संग, सहित। जइ जीवेण सहच्चिय।

(स.१३९)

सहज वि [सहज] स्वाभाविक, नैसर्गिक। (प्रव.६३, भा.११, द.२४) आगंतुअमाणसियं सहजं। (भा.११) **-उप्पण्ण** वि [उत्पन्न] स्वाभाविक रूप से उत्पन्न। सहजुप्पण्णं रूवं। (द.२४)

सहस/सहस्स पुं न [सहस्र] हजार, संख्याविशेष। (द.३५, भा.२८) **-कोडि** स्त्री [कोटि] हजारों करोड़। (द.५) **-ट्ठ** वि [अष्ट] एक हजार आठ। सहसट्ठ सुलक्खणेहिं संजुत्तो। (द.३५) **-वार** पुं [बार] हजारों बार, हजारों समय। छावट्टिसहस्सवारमरणाणि। (भा.२८)

सहाव पुं [स्वभाव] प्रकृति, निसर्ग। (पंचा.१५८, स.१९८, प्रव०३३, निय.१०, भा.१५३) कम्मसहावेण भावेण। (पंचा.६२) **-गुण** पुं न [गुण] स्वभाव गुण। तं हवे सहावगुणं। (निय.२७) **-ठाण** न [स्थान] स्वभावस्थान। (निय.३९) उवसमणे सहावठाणा वा। (निय.४१) **-णाण** न [ज्ञान] स्वभाव ज्ञान। (निय.१०,११) असहायं तं सहावणाणं त्ति। (निय.११) **-णियद** वि [नियत] अपने स्वभाव में स्थित। जीवो सहावणियदो। (पंचा.१५५) **-पज्जाय** पुं [पर्याय] स्वभाव पर्याय। परिणामो सो सहावपज्जायो। (निय.२८) **-पयडि** स्त्री [प्रकृति] स्वभाव प्रकृति। कमलिणिपत्तं सहावपयडीए। (भा.१५३) **-समयट्ठिद** वि [समवस्थित] स्वभाव में स्थिर रूप। सहावसमयट्ठिदो त्ति संसारे। (प्रव.ज्ञे.२८) **-सिद्ध** वि [सिद्ध] स्वभाव से निष्पन्न, स्वभाव में प्रतिष्ठित। सोक्खं सहावसिद्धं। (प्रव.७१)

सहिअ/सहिद/सहिय वि [सहित] युक्त, समन्वित, सहित। (पंचा.४२, भा.१४५, द.३४, सू.११) गुणपज्जएहिं सहिदो। (पंचा.२१)

सागार वि [सागार] गृहयुक्त, गृहस्थ। (स.४११, प्रव.ज्ञे.१०२) सागारणगारचरियया जुत्तो। (प्रव.चा.७५)

साणुकंप वि [सानुकम्प] दयाभावयुक्त, दयाभाव से पूर्ण। जीवो य साणुकंपो। (प्रव.ज्ञे.६५)

साद न [सात] सुख, आनन्द। (प्रव.चा.५६) **-अप्पग** वि [आत्मक] सुखस्वरूप, आनन्दात्मक। भावं सादप्पगं दि। (प्रव.चा.५६)

साधिय वि [साधित] सिद्ध किया गया, निष्पादित। साधियमाराधियं च एयट्ठं। (स.३०४)

साधीण वि [स्वाधीन] स्वायत्त, स्वतंत्र, स्वाधीन। साधीणो हि विणासो। (स.१४७)

साधु पुं [साधु] मुनि, यति। साधूहि इदं भणिदं। (पंचा.१६४)

सामग्ग न [सामग्र्य] सामग्री, परिग्रह। सामग्गिंदियरूवं। (द्वा.४)

सामण्ण न [श्रामण्य] 1.श्रमणता, साधुपन। (प्रव.९१, नियं.१४७) सो सामण्णं चत्ता। (प्रव.ज्ञे. ९८) **-गुण** पुं न [गुण] श्रमणता के गुण। तेण दु सामण्णगुणं। (निय.१४७) 2. वि [सामान्य] साधारण, सामान्य। (स.१०९) **-पच्चय** पुं [प्रत्यय] सामान्य प्रत्यय, सामान्य कारण। सामण्णपच्चया खलु। (स.१०९)

सामाइय न [सामायिक] संयमविशेष, समभाव, राग-द्वेष का अभाव, शिक्षाव्रत का एक भेद, प्रतिमाओं में तीसरी प्रतिमा।

(निय.१०३, चा.२३) जो समस्त सावद्य---पाप सहित कार्यो से विरत है, तीन गुप्तियों का धारक है तथा जिसने इन्द्रियों को जीत लिया है उसके सामायिक होती है। (निय.१२५)

सायर पुं [सागर] समुद्र, रत्नाकर। सायरसलिला दु अहिययरं। (भा.१८,१९)

सायार देखो सागार। (चा.२१, २३, भा.६६) सायारं सग्गंथे। (चा.२१)

सार पुं न [सार] 1. परमार्थ। (निय.३) भणिदं खलु सारमिदि वयणं। 2. वि [सार] उत्तम, रहस्य, श्रेष्ठ।(द.२१,मो.४०)इय उवएसं सारं। (मो.४०)

सारंभ पुं [सारम्भ] पाप कार्य। अह मोहं सारंभं। (चा.१५)

सारीरिय वि [शारीरिक] शरीर का, शरीर सम्बन्धी। सारीरियं च चत्तारि। (भा.११)

सालिसिक्थ पुं [शालिसिक्थ] मच्छ विशेष, मत्स्य की एक जाति, तन्दुलमत्स्य। मच्छो वि सालिसिक्थ। (भा.८८)

सावअ/सावग/सावय पुं न [श्रावक] उपासक, अर्हद्भक्त गृहस्थ, विरताविरत संयम वाला। (निय.१३४, द.२७, चा.२७, प्रव.चा.५०, भा.१४३) वीयं उक्किट्ठसावयाणं तु। (द.१८)

-धम्म पुं न [धर्म] श्रावक धर्म।एवं सावयधम्मं। (चा.२७)

-सम वि [सम] श्रावक के समान। सुमलिणचित्तो ण सावयसमो सो। (भा.१५४)

सासअ/सासद/सासय वि [शाश्वत] नित्य, अविनश्वर। (मो.६,

नियं.१०२, बो.११) पावंति हु सासयं मोक्खं।(मो.८१)

सासण न [शासन] 1. जिन शासन, आगम। (प्रव.चा.७५, पंचा.५७, भा.८३) बुज्झदि सासणमेयं। (प्रव. चा.७५) 2. आज्ञा, शासन।

साह सक [साध्] सिद्ध करना, बनाना, वश में करना। (निय.१५५, सू.१, चा.३१) साहंति जं महल्ला। (चा.३१)

साहम्मि वि [साधर्मिन्] समान धर्म वाला, एक जाति के। साहम्मि य संजदेसु अणुरत्तो। (मो.५२)

साहा स्त्री [शाखा] वृक्ष की डाल। (द.११) **-परिवार** [परिवार] शाखापरिवार। साहापरिवारबहुगुणो होई। (द.११)

साहीण वि [स्वाधीन] स्वायत्त, स्वतन्त्र। साहीणो समभावो। (निय.११०)

साहु पुं [साधु] मुनि,श्रमण,यति।(पंचा.१३६,स.३३,प्रव.४, निय.५७, सू.१२, भा.५६, मो.१५) गुण- गणविहूसियंगो हेयोवादेयणिच्छदो साहू। (मो.१०२) साहू (प्र.ए.मो.१०२) साहू (प्र.ब.सू.१२, स.३१) साहुं (द्वि.ए.स.३२) साहुणा (तृ.ए.स.१६) साहुस्स (च./ष.ए.स.३३) साहूणं (च./ष.ब.प्रव.४, सू.१७) साहुसु (स. ब.पंचा.१३६)

सिंच सक [सिच्] सींचना, छिड़कना। वरखमसलिलेण सिंचेह। सिंचेह (वि./आ. म.ब.भा.१०९)

सिक्खा स्त्री [शिक्षा] उपदेश, अभ्यास, शिक्षण। दायारी दिक्खसिक्खा। (बो.१७) **-वय** पुं न [व्रत] शिक्षाव्रत।

सिक्खावय चत्तारि। (चा.२३)

सिग्घ न [शीघ्र] शीघ्र, जल्दी, तुरन्त। पच्छा पावइ सिग्घं। (निय.१७५)

सिज्झ अक [सिध्] सिद्ध होना, निष्पन्न, बनना, मुक्त होना। (प्रव.चा.३७, सू.२३, निय.१०१, द.३, मो.८८, द्वा.९०) मूलविणट्ठा ण सिज्झंति। (द.१०) सिज्झदि। सिज्झइ (व.प्र.ए.भा.४, निय.४, निय.१०१) सिज्झंति (व.प्र.ब.द.३) सिज्झिहदि (भवि.प्र.ए.द्वा.९०) सिज्झिहहि (भवि. वि./आ.म.ए.मो.८८)

सिद्ध वि [सिद्ध] 1. मुक्त, कृतकृत्य, निर्वाण प्राप्त। (पंचा.१३६, स.२३३, प्रव.४, नि.७२, बो.१२, भा.१)शरीर से रहित सिद्ध हैं। देहविहूणा सिद्धा। (पंचा.१२०) **-अंत** पुं [अन्त] आगम, शास्त्र, सिद्धान्त। (स.३२२,३४७) जस्स एस सिद्धंतो। (स.३४८) **-आयदण** न [आयतन] सिद्धायतन,जो विशुद्ध ध्यान तथा केवलज्ञान से युक्त हैं ऐसे जिस मुनिश्रेष्ठ के शुद्ध आत्मा की सिद्धि हो गई है,उस समस्त पदार्थों को जानने वाले केवलज्ञानी को सिद्धायतन कहा है। (बो.६) **-आलय** स्त्री न [आलय] सिद्धस्थान,सिद्धशिला। ते सिद्धालयसुहं जंति। (शी.३८)। **-ठाण** न [स्थान] सिद्धस्थान, मुक्तिस्थान। सिद्धठाणम्मि (बो.१२) **-प्पा** पुं[आत्मन्] सिद्ध आत्मा, मुक्त आत्मा। जारिसिया सिद्धप्पा। (निय.४७) **भत्ति** स्त्री [भक्ति] सिद्धभक्ति। [स.२३३] **-सहाव** पुं [स्वभाव] सिद्ध स्वभाव। सव्वे सिद्धसहावो। (निय.४९) 2.

आराधक, निष्पन्न, बना हुआ। संसिद्धिराधसिद्धं। (स.३०४)

सिद्धि स्त्री [सिद्धि] 1. मुक्ति, निर्वाण। (प्रव.चा.३९, द.२८, सू.८,भा.८६,मो.८५) तह वि ण पावइ सिद्धिं।(सू.१५) **-गमण** न [गमन] सिद्धि को प्राप्त,मुक्ति को प्राप्त। सिद्धिगमणं च तेसिं। (द.२८) **-यर वि [कर] सिद्ध को प्राप्त करने वाला। सम्मत्तं सिद्धियरं। (मो.८९)** **-सुह** न [सुख] सिद्धि सुख,मोक्षसुख। जिणमुद्दं सिद्धिसुहं हवेइ। (मो.४७) 2. सिद्धि निष्पति। अजुदा सिद्धि त्ति णिद्दिट्ठा। (पंचा.५०)

सिप्पि स्त्री [शुक्ति] सीप, घोंघा। सिप्पी अपादगा य किमी। (पंचा.१४४)

सिप्पिअ वि [शिल्पिक] शिल्पी, कारीगर, मूर्तिकार। जह सिप्पिओ उ चिट्ठं। (स.३५४)

सिर न [शिरस्] मस्तक, माथा, सिर। (पंचा.२, भा.१) अभिवंदिऊण सिरसा। (पंचा.१०५) सिरसा (तृ.ए.)

सिल/सिला स्त्री [शिला] चट्टान, पत्थर, शिला। सिलकट्ठे भूमितले। (बो.५५)

सिलिट्ठ वि [श्लिष्ठ] बंधा हुआ, सम्बन्धित।

सिव पुं [शिव] 1. जिनदेव, तीर्थङ्कर, सिद्ध। (भा.२,१२४,१५०) णाणी सिवपरमेट्ठी। 2. न [शिव] कल्याण, शुभ। सयं च बुद्धि-सिवमपत्तो। (स.३८२) 3. पुं न [शिव] मुक्ति, मोक्ष। (सू.२, चा.४१, भा.९३) भावो वि दिव्वसिवसुक्खभायणो। (भा.७४) **-आलय** न [आलय] मोक्षमहल। (चा.४१, भा.९३) **-कर** पुं

[कर] शंकर, महादेव, शिवंकर। (मो.६) **-कुमार** पुं [कुमार] शिवकुमार, एक मुनि का नाम। (भा.५१) **-पुरि** स्त्री [पुरी] शिवपुरी, मुक्तिधाम। पंथिय सिवपुरिपंथं।(भा.६) **-भूइ** पुं [भूति] शिवभूति, एक मुनि विशेष। णामेण य सिवभूई। (भा.५३) **-मग्ग** पुं न [मार्ग] शिवमार्ग, मुक्तिपथ। वट्टइ सिवमग्ग जो भव्वो। (सू.२) **-सुह** न [सुख] मोक्ष सुख, मुक्ति सुख। दिव्वसिवसुहभायणो होइ। (भा.६५)

सिवण/सिविण पुं न [स्वप्न] स्वप्न। सिविणे वि ण रुच्चइ। (मो.४७)

सिसु पुं न [शिशु] बालक, पुत्र। (भा.४१) **-काल** पुं [काल] बाल्यकाल, बचपन। सिसुकाले य अमाणे।(भा.४१)

सिस्स पुं स्त्री [शिष्य] विद्यार्थी, शिष्य। (प्रव.चा.४८,द.२) उवइट्ठो जिणवरेहिं सिस्साणं। (द.२) **-ग्गहण** न [ग्रहण] शिष्यों को स्वीकारना, शिष्य बनाना। सिस्सग्गहणं च पोसणं तेसिं। (प्रव.चा.४८)

सिंहाण पुं न [दि] श्लेष्म, नाक का मल, कफ। सिंहाण खेलसेओ। (बो.३६)

सिहि पुं [शिखिन्] अग्नि, आग। चिरसंचियकोहसिहिं। (भा.१०९)

सीयल पुं [शीतल] 1. शीतलनाथ, दसवें तीर्थङ्कर। (ती.भ.४) 2. वि [शीतल] ठण्डा, शीतल। णाणमय विमलसीयलसलिलं। (भा.१२४)

सील पुं [शील] सदाचार, सच्चरित्र। (स.२७३, निय.११३,

द.१६, भा.१२०, शी.१) विषयों से विरक्त होना शील है। शीलं **विसयविरागो।** (शी.४०) -**कुसल** वि [कुशल] शील, सम्पन्न, शील में निपुण। लावण्णसीलकुसलो। (शी.३६) -**गुण** पुं न [गुण] **शीलगुण**। सीलगुणमंडिदाणं। (शी.१७) -**फल** न [फल] शीलफल। (द.१६) -**मंत** वि [मन्त] शीलवान्। (शी.२४) -**वंत** वि [वन्त] शीलवान्। (द.१६) -**वद** न [व्रत] शीलव्रत। सीलवदणाणरहिदा। (शी.१४) -**सलिल** पुं न [सलिल] शीलरूप जल। (शी.३८) -**सहाव** पुं [स्वभाव] शीलस्वभाव। सीलसहावं हि कुच्छिदं णाउं। (स.१४९) -**सहिय** वि [सहित] शीलसहित। तवविणयसीलसहिदा। (शी.३५)

सीस देखो सिस्स। (बो.६०,लिं.१८) णेहं सीसम्मि वट्टदे बहुसो। (लिं.१८)

सीह पुं [सिंह] केशरी, मृगराज, शेर। उक्किट्ठसीहचरियं। (सू.९)

सु अ [सु] अतिशय, योग्यता, समीचीनता, अनुपम। (बो.१३, चा.४१,भा.१५४,मो.८६)-**इच्छिय** वि[इच्छित]अच्छी तरह चाहा गया। लहंते ते सुइच्छियं लाहं।(चा.४२)-**कयत्थ** वि [कृतार्थ]कृतकृत्य।ते धण्णा सुकयत्था।(मो.८६)-**गइ** स्त्री [गति] अच्छी गति। सद्दव्वादो हु सुग्गई हवइ। (मो.१६) -**चरित्त/च्चारित्त** न [चरित्र/चारित्र] निर्मल चारित्र। झाणरया सुचरित्ता। (मो.८२) -**णिम्मल** वि [निर्मल] अत्यन्त निर्मल। सुणिम्मलं सुरगिरीव। (मो.८६) -**तव** पुं न [तपस्] श्रेष्ठतप। सुतवे सुसंजमे सद्धा। (चा.१६) -**दंसण** न [दर्शन] सम्यक्

श्रद्धान, समीचीनमत। सुदंसणे सद्धा। (चा.१४) **-दाण** न [दान] अच्छादान ।सुदाणदच्छाए। (चा.११) **-धम्म** पुं न [धर्म] श्रेष्ठ धर्म, उत्तम धर्म। संजमं सुधम्मं च। (बो.१३) **-परिमल** पुं [परिमल] श्रेष्ठ सुगन्ध। अइसयवंतं सुपरिमलामोयं। (बो.३८) **-पसिद्ध** वि [प्रसिद्ध] अधिक विख्यात। संजमचरणस्स जइ व सुपसिद्धा। (चा.९) **-भाव** पुं [भाव] अच्छाभाव। लब्भइ बोही सुभावेण । (भा.७४) **-मरण** न [मरण] सम्यक् मरण। भावहि सुमरणमरणं। (भा.३२) **-मलिण** न [मलिन] अत्यन्त मलिन। सुमलिणचित्तो। (भा.१५४) **-मुक्ख** पुं [मोक्ष] श्रेष्ठ मुक्ति। जिणसम्मत्तं सुमुक्खठाणा य। (चा.८)**-लक्खण** न [लक्षण] अतिशय लक्षण। सहसट्ठ सुलक्खणेहिं संजुत्तो। (द.३५) **-विसुद्ध** वि [विशुद्ध] अत्यन्त पवित्र। (चा.४१, बो.३९, भा.६०) कसायमलवज्जिओ य सुविसुद्धो। (बो.३९) **-विहिअ** [विहित] अच्छी तरह कहा गया। अविणयणरा सुविहियं। (भा.१०४) **-वीयराय** वि [वीतराग] राग रहित, क्षीण राग। संजमसुद्धं सुवीयरायं च। (बो.१५) **-संजम** पुं [संयम] उत्तमव्रत। सुतवे सुसंजमे भावे। (चा.१६) **-हाव** पुं [भाव] अच्छा भाव। सुहावसंजुत्तो। (भा.६१)

सुअ न [श्रुत] 1. शास्त्र विशेष, आगम, सिद्धान्त। सुअगुण सुअत्थि रयणत्तं। (बो.२२) 2. श्रुतज्ञान, ज्ञान का एक भेद। **-णाणि** वि [ज्ञानिन्] श्रुतज्ञानी, शास्त्रों का जानकार। सुअणाणि भद्दबाहू। (बो.६१)

सुइर वि [सुचिर] पवित्र, निर्मल। जीवेण भाविया सुइरं। (निय.९०) **-काल** पुं न [काल] बहुत समय तक। भुत्ताइं सुदूरकालं। (भा.९)

सुंदर वि [सुन्दर] मनोहर, अच्छा। णिंदंति सुंदरं मग्गं। (निय.१८५)

सुक्क न [शुक्ल] 1. शुभध्यान, ध्यान का एक भेद। (निय.१२३) **-झाण** न [ध्यान] शुक्ल ध्यान। धम्मझाणेण सुक्कझाणेण। (निय.१२३) 2. पुं [शुक्ल] सफेद, श्वेत। तइया सुक्कत्तणं पजहे। (स.२२२) **-त्तण** वि [त्व] शुक्लपना, सफेदी। (स.२२२) 3. पुं [शुक्र] वीर्य, धातु विशेष। मंसट्ठिसुक्कसोणिय। (भा.४२)

सुक्ख न [सौख्य] सुख, आनन्द। (पंचा.१२२, निय.१७८, भा.६०) सुक्खाइं दुहाइं दव्वसवणो य। (भा.१२६) **-भायण** पुं न [भाजन] सुख का पात्र। दिव्वसिवसुक्खभायणो। (भा.७४)

सुजणत्त वि [सुजनत्व] मनुष्यत्व। फलं अणुहवेइ सुजणत्ते। (निय.१५७)

सुट्ठु अ [सुष्ठु] अच्छा, भली प्रकार, सुन्दर। (पंचा.२०, १४१, द.५, स.३१७, भा.१३७)जीवेण सुट्ठु अणुबद्धा। (पंचा.२०)

सुण सक [श्रु] सुनना। (पंचा.९५, स.३६०, प्रव.६२, निय.५४, बो.२, भा.६६, मो.१०६) समयमिमं सुणह वोच्छामि। (पंचा.२) सुणइ (व.प्र.ए.मो.१०६) सुण/सुणसु (वि./आ. म.ए.स.३६०, ३७५) सुणिदूण (सं.कृ.प्रव.६२) सुणंत (व.कृ.पंचा.९५)

सुणह पुं स्त्री [शुनक] कुक्कुर, कुत्ता। सुणहाण गद्दहाण य।

(शी.२९)

सुण्ण वि [शून्य] 1. व्यर्थ, निष्फल। सुण्णमिदरं च। (पंचा.३७) 2. रिक्त, खाली, अभाव। सुण्णं जाण तमत्थं। (प्रव.ज्ञे.५२) **-आयारणिवास** पुं [आगारनिवास] शून्यागार निवास, अचौर्यव्रत की एक भावना। (चा.३४) **-हर** न [गृह] खालीघर, निर्जनघर। सुण्णहरे तरुहिट्ठे। (बो.४१)

सुत्त वि [सुप्त] 1. सोया हुआ, शयित। जो सुत्तो ववहारे। (मो.३१) 2. न [सूत्र] आगम, सिद्धान्त, शास्त्र विशेष। (पंचा१७३, स.६७, प्रव.१४, निय.९४, सू.१, भा.९४) सुत्तं जिणोवदिट्ठं। (प्रव.३४) **-ज्झयण** न [अध्ययन] सूत्र का अध्ययन। (प्रव.चा.२५, प्रव.चा.ज.वृ.२५) सुत्तज्झयणं च पण्णत्तं। (प्रव.चा.२५) **-ठिअ** वि [स्थित] सूत्र में स्थित। सुत्तठिओ जो हु छंडए कम्मं। (सू.१४) **-त्थ** वि [अर्थ] सूत्रार्थ, सूत्र का प्रयोजन। सुत्तत्थं जिणभणियं। (सू.५) **-त्थपद** पुं न [अर्थपद] सिद्धान्त पद, आगम के पद। णिच्छिदसुत्तत्थपदो। (प्रव.चा.६८) **-त्थविसारद** वि [अर्थविशारद] परमागम के अर्थ में प्रवीण, सिद्धान्त में निपुण। सुत्तत्थविसारदा उवासेया। (प्रव.चा.६३) **-मज्झ** न [मध्य] बीच, अन्तराल। अपदेससुत्तमज्झं। (स.१५) **-रोइ** स्त्री [रुचि] आगम की प्रतीति, शास्त्ररुचि। अभिगदबुद्धिस्स सुत्तरोइस्स। (पंचा.१७०) **-संपजुत्त** वि [संप्रयुक्त] आगम से युक्त, शास्त्राभ्यास में तत्पर। संजमतवसुत्तसंपजुत्तो। (प्रव.चा.६४) 3. न [सूत्र] धागा, डोरा, गुण। सुई जहा ससुत्ता। (सू.३)

सुद देखो सुअ (पंचा.४१,स.४,प्रव.३२,निय.१२,बो.२२,शी.१६) केवलिसुदकेवली भणिदं। (निय.१) **-केवलि/केवली** वि [केवलिन्] श्रुतकेवली, द्वादशांगपाठी। (निय.१) **-गुण** पुं न [गुण] श्रुतज्ञानरूपी धागा। सुदगुणवाणा। (बो.२२) **-पारयपउर** वि [पारकप्रचुर] श्रुत के पारगामी। सदुपारयपउराणं। (शी.१७)

सुदिट्ठ वि [सुदृष्टि] अच्छी तरह से देखा गया। (सू.२,बो.४) सुत्तम्मि जं सुदिट्ठं। (सू.२)

सुदि स्त्री [श्रुति] परम्परागत ज्ञान। एरिसी दु सुंदी। (स.३३६)

सुद्ध वि [शुद्ध] पवित्र, निर्दोष, विमल, विशुद्ध, निष्कलङ्क। (पंचा.१६५,स.९०,प्रव.९,निय.४९,द.२८,बो.१७,भा.७७, मो.९३) सुद्धेण तदा सुद्धो। (प्रव.९) **-आदेस** पुं [आदेश] शुद्ध तत्त्व का उपदेश, शुद्ध शिक्षा। सुद्धो सुद्धादेसो। (स.१२) **-उवओग** पुं [उपयोग] शुद्धोपयोग। भणिदो सुद्धोवओगो त्ति। (प्रव.१४) **-चरण** न [चरण] निर्दोष चारित्र। जं चरदि सुद्धचरणं। (बो.१०) **-णअ/णय** पुं [नय] शुद्धनय। (स.११, १४,१४१,निय.४९) भूयत्थो देसिदो दु सुद्धणओ। (स.११) **-तव** पुं न [तपस्] शुद्धतप। संजमसम्मत्तसुतवयरणे। (बो.१) **-त्थ** वि [अर्थ] शुद्धार्थ। रूवत्थं सुद्धत्थं। (बो.५९) **-भाव** पुं [भाव] विशुद्धभाव। सम्मत्तेण सुद्धभावेण। (द.२८) **-संपओग** पुं [संप्रयोग] शुद्ध संप्रयोग,शुद्ध सम्बन्ध।मण्णदि सुद्धसंपओगादो। (पंचा.१६५) **-सम्मत्त** पुं न [सम्यक्त्व] शुद्ध श्रद्धान। (मो.९३, बो.१७) **-सहाव** पुं [स्वभाव] शुद्ध स्वभाव। सुद्धं सुद्धसहावं।

(भा.७७) **-सुद्धि** स्त्री [शुद्धि] शुद्धता,निर्मलता। तिविहसुद्धीएं। (भा.१३५)

सुपास पुं [सुपार्श्व] सातवें तीर्थङ्कर, सुपार्श्वनाथ। (ती.भ.३)

सुभ न [शुभ] शुभ, मङ्गल, कल्याण। **-जोग** पुं [योग] शुभयोग। सुभजोगेण सुभावं। (मो.५४)

सुमइ पुं [सुमति] सुमतिनाथ, पाँचवें तीर्थङ्कर। (ती.भ.३)

सुय 1. देखो सुअ/सुद। 2. पुं [सुत] पुत्र,लड़का। सुयदाराईविसए। (मो.१०)

सुयकेवलि पुं [श्रुतकेवलिन्] श्रुतकेवली, द्वादशाङ्ग का ज्ञाता। (स.९, प्रव.३३) जम्हा **सुयकेवली** तम्हा। (स.१०)

सुयणाण न [श्रुतज्ञान]शास्त्रज्ञान,सिद्धान्तज्ञान,श्रुतज्ञान, ज्ञान का एक भेद। (स.१०, भा.९२) विसुद्धभावेण सुयणाणं। (भा.९२)

सुर पुं [सुर] देव, देवता, अमर। (पंचा.११७,प्रव.१,निय.१७, द.३३, सू.११, भा.१) णरणारयतिरियसुरा। (प्रव. ७२) **-गण** पुं [गण] देवसमूह। (निय.१७) **-गिरि** पुं [गिरि] सुमेरु पर्वत। सुगिरीव णिक्कंपं। (मो.८६) **-च्छरा** स्त्री [अप्सरा] स्वर्गदेवी। सुरच्छरविओयकाले। (भा.१२) **-णिलय** पुं [निलय] स्वर्गलोक, देवों का आवास। सुरणिलयेसु सुरच्छअविओयकाले। (भा.१२) **-धणु** न [धनुष्] इन्द्र धनुष। सुरधणुमिव सस्सयं ण हवे। (द्वा.४) **-लोग/लोय** पुं [लोक] स्वर्गलोक।सो सुरलोगं समादियदि। (पंचा.१७१) **-वर** पुं [वर] सुरेन्द्र,देवेन्द्र। सुरवरजिणगणहराइ सोक्खाइं। (भा.१६०)

सुरअ वि [सुरत] अच्छी तरह से लीन, संलग्न, तत्पर। आदसहावे सुरओ। (मो.१२)

सुरत्तपुत्त पुं [सुरक्तपुत्र] रुद्र, दशपूर्वों का पाठी। तो सो सुरत्तपुत्तो। (शी.३०)

सुलभ वि [सुलभ] सुखपूर्वक प्राप्त, सुप्राप्त। णवरि ण सुलभो विहत्तस्स। (स.४)

सुविदिद वि [सुविदित] अच्छी तरह ज्ञात, जाना हुआ। (प्रव.१४)

सुविहि पुं [सुविधि] सुविधिनाथ, नवम तीर्थङ्कर। (ती.भ.४)

सुव्वय पुं [सुव्रत] सुव्रतनाथ, बीसवें तीर्थङ्कर। (ती.भ.५)

सुसील न [सुशील] उत्तम स्वभाव, श्रेष्ठ आचरण। (स.१४५, प्रव.६९) शुभकर्म सुशील है। सुहकम्मं चावि जाणह सुसीलं। (स.१४५)

सुह न [सुख] 1. सुख, आनन्द, शान्ति। (पंचा.१२५, प्रव.१३, निय.१०५,स.१९४,भा.१३३,चा.४३) सुहं दुक्खं दिंते भुंजंति। (पंचा. ६७) -**कारणट्ठ।** वि [कारणार्थ] सुखकारणार्थ, सुख के कारण भूत। भोयसुहकारणट्ठं (भा.१३३) 2. पुं न [शुभ] शुभ, मङ्गल, कल्याण, नामकर्म का एक भेद। (पंचा.१३२, स.३७५, प्रव.९, निय.१४४, भा.१३५) असुहो सुहो व गंधो। (स.३७७) जिस जीव के मोह, राग, द्वेष, और चित्त की प्रसन्नता रहती है, उसके शुभ परिणाम होता है। (पंचा.१३१) -**उप्पाअ** पुं [उत्पाद] शुभ की उत्पत्ति, शुभ का प्रादुर्भाव। (स.२२४-२२७) विविहे भोए सुहुप्पाए। (स.२२५) -**उवओगप्पग** वि [उपयोगात्मक] शुभ

उपभोग से उत्पन्न होने वाला। **सुहोवओगप्पगेहिं भोगेहिं।** (प्रव.७३) **-उवजुत्त** वि [उपयुक्त] शुभ से सहित, अच्छे परिणामों से युक्त। सुहोवजुत्ता य होंति समयम्मि। (प्रव.चा.४५) **-कम्म** पुं न [कर्मन्] शुभकर्म, अच्छे कर्म। (स.१४५, भा.११८) सुहकम्मं भावसुद्धिमावण्णो। (भा.११८) **-णिमित्त** न [निमित्त] शुभकारण, शुभनिमित्त। कल्लाणसुहणिमित्तं। (भा.१३५) **-धम्म** पुं न [धर्म] शुभ धर्म, ध्यान विशेष। सुहधम्मं जिणवरिंदेहिं। (भा.७६) **-परिणाम** पुं [परिणाम] शुभपरिणाम। सुहपरिणामो पुण्णं। (पंचा.१३२) **-भत्ति** स्त्री [भक्ति] शुभभक्ति, पूजा। अरहंते सुहभत्ती सम्मत्तं। (शी.४०) **-भाव** पुं [भाव] शुभभाव, अच्छे विचार। सुहभावे सो हवेइ अण्णवसो। (नियं.१४४) **-भावणा** स्त्री [भावना] शुभ चिंतन, शुभभावना। सुहभावणारहिओ। (भा.१२)

सुह सक [सुखय्] सुखी करना। कम्मेहिं सुहाविज्जइ। (स.३३२)

सुहड पुं [सुभट] योद्धा, वीर। सुहडो संगाम एहिं सव्वेहिं। (मो.२२)

सुहिद वि [सुखित] सुखी, सुखयुक्त। (स.२५४-२५६, प्रव.७३) सुहिदो दुहिदो य हवदि जो चेदा। (स.३८९)

सुहुम वि [सूक्ष्म] सूक्ष्म, अत्यन्तछोटा, नामकर्म का एक भेद। (पंचा.७६, स.६७, प्रव.ज्ञे.४०, नियं.२१, सू.२४) सुहुमा हवंति खंधा। (नियं.२४)

सूई स्त्री [सूची] सूई, सूचिका। सूई जहा असुत्ता। (सू.३)

सूर वि [शूर] पराक्रमी, **वीर**, शूरवीर। (निय.७४, मो.८९) **सूरस्स** ववसायिणो। (निय.१०५)

सेअ पुं [स्वेद] पसीना, **स्वेद**। सिंहाणखेलसेओ।(बो.३६)

सेड सक [सेट] सफेदी **करना**, पोतना। **जह परदव्वं सेडिदि**। (स.३६२)

सेडिया स्त्री [दि] खडिया, सफेदी, **कलई**, चूना। **जह सेडिया दु ण**। (स.३५६)

सेद 1. देखो सेअ। सेदं खेद मदो। (निय.६) 2. वि [श्वेत] शुक्ल, सफेद। (स.१५७-१५९) वत्थस्स सेदभावो। (स.१५८) -**भाव** पुं [भाव] श्वेतभाव, सफेदरूप। संखस्स सेदभावो। (स.२२०)

सेय न [श्रेयस्] शुभ, कल्याण। (द.१५,१६,भा.७७) सेयासेयं वियाणेदि। (द.१५)

सेव सक [सेव्] सेवा करना, आराधना करना, आश्रय करना, उपभोग करना। (पंचा.१६४, स.१९७, प्रव.चा.२२, भा.१११, लिं.७) विसयत्थं सेवए ण कम्मरयं। (स.२२७) सेवइ/सेवए/सेवदि/सेवदे (व.प्र.ए.स.१९७, २२४, २२७, लिं.७) सेवंति (व.प्र.ब.स.४०९) सेवमाण (व.कृ.प्रव.चा.२२) सेवंत (व.कृ.स.१९७) सेवहि (वि./आ.म.ए.भा.१११) सेविदव्व (वि.कृ.पंचा.१६४)

सेवग वि [सेवक] सेवा कर्त्ता, सेवक, नौकर। असेवमाणो वि सेवगो कोई। (स.१९७)

सेवा स्त्री [सेवा] सेवा, भक्ति, शुश्रूषा। उच्छाहभावणासंपसंस**सेवा**

(चा.१४)

सेस वि [शेष] अवशिष्ट, बाकी, अन्य, समाप्ति, उपसंहार। (पंचा.२२, प्रव.२, निय.३७, स.२४०, सू.१०, द.८) **सेसा मे** बहिरा भावा।(निय.१०२) **-ग** वि[क]अन्य। णेव पडं **णेव सेसगे** दव्वे। (स.१००)

सोक्ख न [सौख्य] सुख, आनन्द। (पंचा.१६३, **स.२०६**, प्रव.१९, भा.१००) सोक्खं वा पुण दुक्खं। (प्रव.२)

सोग पुं [शोक] संताप, दुःख, नोकषाय का एक भेद। जरामरणरोयसोगा य। (निय.४२)

सोच्च न [शौच] शुद्धि, पवित्रता, निर्मलता, धर्म का एक लक्षण। जो उत्तम मुनि आकांक्षा से निवृत्त होकर वैराग्य युक्त रहता है, उसके शौच धर्म होता है। (द्वा.७५)

सोणिय न [शोणित] रुधिर, खून, शोणित। (भा.४२)

सोध सक [शुध्] संशोधन करना, साधना। जे सोधंति चउत्थं। (शी.२९)

सोय देखो सोग। (स.३७५)

सोवण्णिय वि [सौवर्णिक] सुवर्ण से निर्मित, स्वर्ग से बने। सोवण्णियम्हि णियलं। (स.१४६)

सोवाण न [सोपान] सीढ़ी, सोपान, श्रेणी। (द.२१, भा.१४६, शी.२०) सोवाणं पढममोक्खस्स। (भा.१४६)

सोस पुं [शोष] शोषण। सोसउम्मुक्का। (भा.९३)

सोह अक [शोभय्] चमकना, देदीप्यमान होना। जह फणिराओ

सोहइ। (भा.१४४) सोहे (व.प्र.ए.शी.२८)

सोहण वि [शोभन] शोभायुक्त। तिण्हं पि सोहणत्थे। (चा.४)

सोहि स्त्री [शुद्धि/शोधि] शुद्धि, पवित्रता। (स.३०६, चा.२, सू.२६) चारित्तं सोहिकारणं तेसिं। (चा.२) -**कारण** न [कारण] शुद्धि का कारण, शुद्धि का प्रयोजन। (चा.२)

ह

हंत सक [हन्] वध करना, मारना। हंतूण दोसकम्मे। (बो.२९)

हण सक [हन्] वध करना, मारना, काटना। (निय.९२, भा.२३) हणंति चारित्तखग्गेण। (भा.१५८) हणदि (व.प्र.ए.निय.९२) हणंति (व.प्र.ब.भा.१५८)

हत्थ पुं न [हस्त] हाथ, कर। (सू.१८, भा.४) तिलतुसमित्तं ण गिहदि हत्थेसु। (सू.१८)

हद वि [हत] रहित, विनाशित, विहीन। (पंचा.१०४, निय.३१) -**परावर** वि [परापर] पूर्वापर से रहित। हवदि हदपरावरो जीवो (पंचा.१०४) -**संठाण** न [संस्थान] संस्थान से रहित, आकारहीन। हदसठाणपमाणं तु। (निय.३१)

हर सक [हृ] हरण करना, छीनना। आउं ण हरेसि तुमं। (स.२४८)

हरिस पुं [हर्ष] हर्ष, आनन्द। (निय.३९) -**भाव** पुं [भाव] आनन्दभाव। णो हरसिभावठाणा। (निय.३९)

हरिहर पुं [हरिहर] ब्रह्मा। -**तुल्ल** वि [तुल्य] ब्रह्मा के समान। हरिहरतुल्लो वि णरो। (सू.८)

हव अक [भू] 1. होना। (पंचा.८८, ९३,स.११,१९,१००, प्रव.३९,४६, प्रव.ज्ञे.२३, निय.२०) हवइ/हवेइ/हवदि/हवेदि (व.प्र.ए.पंचा.१७,१०४, स.१४१, निय.५,२०,मो.१४) भवदि (व.प्र.ए.मो.८३) हवंति (व.प्र.ब.स.६८) हविज्ज/हवे (वि./आ.म.ए.स.३३,निय.११,१७) हविय (सं.कृ.पंचा.१६९) 2. सक [भू] प्राप्त करना। (पंचा.१३, ८५, ८६)

हस्स न [हास्य] हँसी, नोकषाय का एक भेद। जो दु हस्सं रई। (निय.१३१)

हास पुं [हास] हँसी, हास्य। (निय.६१, चा.३३, भा.६९) पेसुण्णहासमच्छर। (भा.६९)

हि अ [हि] क्योंकि, ही, भी, जो, कुछ भी, कि, परन्तु, इसप्रकार, ऐसा, वही, निश्चय से, तथापि, पादपूर्ति अव्यय। (पंचा.२७, ४५,स.९,१८१,२६७,प्रव.७४,प्रव.ज्ञे.७,१४,४२,६१,बो.२७, भा.१७,८३) णामे ठवणे हि य। (बो.२७) जीवा वज्झंति कम्मणा जदि हि। (स.२६७)

हिअ/हिद न [हित] मङ्गल, कल्याण, शुभ। (पंचा.१२२, १२५,द.२९) कुव्वदि हिदमहिदं। (पंचा.१२२) **-परियम्म** पुं न [परिकर्म] हित की प्रवृत्ति, हित के कारण कलाप। हिदपरियम्मं च अहिदभीरुत्तं। (पंचा.१२५)

हिंड सक [हिण्ड्] भ्रमण करना, घूमना, चक्कर लगाना, भटकना। (प्रव.७७, मो.६७, शी.७, लिं.७) हिंडदि घोरमपारं। (प्रव.७७)

हिंस सक [हिंस्] हिंसा करना, पीड़ा पहुँचाना। हिंसिज्जामि य

परेहिं सत्तेहिं। (स.२४७)

हिंसा स्त्री [हिंसा] वध, घात, पीड़ा। (प्रव.चा.१६, १७, निय.७०, चा.३०, मो.९०) सोने, बैठने, खड़े होने तथा बिहार आदि क्रियाओं में साधु की प्रयत्नरहित—स्वच्छन्द प्रवृत्ति, निरंतर चलने वाली हिंसा ही है। (प्रव.चा.१६) दूसरा जीव मरे या न मरे परन्तु अयत्नाचार पूर्वक प्रवृत्ति करने वाले के हिंसा निश्चित है। मरदु व जीवदु व जीवो अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा। (प्रव.चा.१७) **-मेत्त** पुं [मात्र] हिंसामात्र। बंधो हिंसामेत्तेण समिदीसु। (प्रव.चा.१७) **-विरइ** वि [विरति] हिंसा से विरति।हिंसाविरइ अहिंसा। (चा.३०) **-रहिअ** वि [रहित] हिंसा रहित।हिंसारहिए धम्मे। (मो.९०)

हिम न [हिम] तुषार, बर्फ। हिमजलणसलिल। (भा.२६)

हियअ न [हृदय] अन्तःकरण, मन, हृदय। (पंचा.१६७, द.७) णिच्चं हियए पवट्टए जस्स। (द.७)

हिरण्ण न [हिरण्य] सुवर्ण, सोना। हिरण्णसयणासणाइ छत्ताइं। (बो.४५)

हीण वि [हीन] कम, अपूर्ण, थोड़ा, रहित। (स.३४२, प्रव.२४, निय.१४८, भा.१५) हीणो जदि सो आदा। (प्रव.२५) **-देव** पुं [देव] नीच देव, निम्न देव। होऊण हीणदेवो। (भा.१५)

हु अ [हु/खलु] इस प्रकार, ऐसा, निश्चय, कि, इसलिए, भी, क्योंकि, और, ही, पादपूर्ति अव्यय। (पंचा३०, स.२८, २४४, २७३, निय.२०, मो.७३, ७६) जं परदव्वं सेडिदि हु। (स.२६१)

हु देखो हव। (स.५७,बो.२९, चा.४१,भा.९३) हुंति (व.प्र.ब.स.८६,३१७) हुअ (वि./आ.प्र.ए.बो.२९) हुअ णाणमये च अरहंते। (बो.२९)

हूअ वि [भूत] उत्पन्न हुआ। सद्दवियारो हूओ। (बो.६०)

हेअ सक [हा+यत्] छोड़ना, त्यागना। परभिंतरबाहिरो दु हेऊणं। (मो.४)

हेउ पुं [हितु] कारण, निमित्त, प्रयोजन। (स.१९१, निय.२५) तेंसि हेऊ भणिदा। (स.१९०)

हेट्ठ स्त्री [अधस्] नीचे,निम्न। णिरया हवंति हेट्ठा।(द्वा.४०)

हेदु देखो हेउ। (पंचा.१५०, स.१७७) तइया दु होदि हेदू। (स.१३६) **-भूद** वि [भूत] निमित्तभूत, कारणभूत। एदेसु हेदुभूदेसु। (स.१३५)

हेम न [हेम] स्वर्ण, सोना। हेमं हवेइ जह तह य। (मो.२४)

हेय वि [हेय] छोड़ने योग्य, त्याज्य। (निय.५०,सू.५) हेयोवादेयतच्चाणं। (निय.५२)

हो देखे हव। (पंचा.१२८, स.१०२, १२६, प्रव.१८,३१, निय.२,३१, भा.१५,१६, मो.४९,शी.१०,सू.९, द.१२, चा.१३,बो.१०) सा होइ वंदणीया। (बो.१०) होइ/होदि (व.प्र.ए.बो.१०,स.९४,२११) होंति (व.प्र.ब.स.१३१,प्रव.३८) होमि (व.उ.ए.स.२०,निय.८१) होहदि/होहिदि (भवि.प्र.ए.स.२१ शी.११) होस्सामि (भवि.उ.ए.स.२१) होही

(भू.स.४१५) होहि/होह (वि./आ.म.ए./ब.भा.१२६,स.२०६) होज्ज (व.उ.ए.स.९९, पंचा.६९) होऊण/होदूण (सं.कृ.भा.१५,१६, मो.४९,शी.१०)

नाम—डॉ० उदय चन्द जैन

पिता—श्री सुन्दर लाल जैन, जन्म सन् 1947 अप्रैल

ग्राम—बम्हौरी **जिला**—छतरपुर (म० प्र०)

शैक्षणिक योग्यता—एम० ए० हिन्दी, पाली-प्राकृत, जैन दर्शनाचार्य, शास्त्राचार्य (गोल्ड मेडल) सिद्धान्ताचार्य।

कार्यक्षेत्र—प्राकृत व्याकरण, अपभ्रंश व्याकरण

प्रकाशित पुस्तकें—(i) हेम प्राकृत व्याकरण खण्ड-1
(ii) शौर सेनी प्राकृत व्याकरण

लेख—लगभग 110 जैन दर्शन, सिद्धान्त आदि। इनके अतिरिक्त प्राकृत ग्रंथो की सामग्री तथा अन्य साहित्यिक कृतियाँ प्रकाशनार्थ तैयार हैं और साहित्य सृजन में सतत् रूप से प्रयत्नशील हैं।